T.T.D. Religious Publications Series No. 1056
Price :

Published by **Sri M.G. Gopal,** I.A.S., Executive Officer,
T.T.Devasthanams, Tirupati and Printed at T.T.D. Press, Tirupati.

श्री पद्मावती सन्निधि

(तिरुचानूर क्षेत्र)

तेलुगु - **जूलकंटि बालसुब्रह्मण्यम**
हिन्दी - **प्रो.आई.एन. चंद्रशेखर रेड्डी**

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति

श्री पद्मावती सन्निधि

(तिरुचानूर क्षेत्र)

तेलुगु मूलग्रंथ ''सिरि-कोलुवु''

तेलुगु मूल

जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम

हिन्दी अनुवाद

प्रो.आई.एन. चंद्रशेखर रेड्डी
आचार्य एवं डीन, हिंदी विभाग
श्रीवेंकटेश्वर विश्वविद्यालय, तिरुपति

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति
2014

SRI PADMAVATI SANNIDHI

Telugu Original
Julakanti Bala Subrahmanyam

Hindi Translation
Prof. I. N. Chandrasekar Reddy

Editor-in-Chief
Prof. Ravva Sri Hari

T.T.D. Religious Publications Series No. 1056
©All Rights Reserved

First Edition - 2014

Copies: 2000

Price:

Published by
M.G. Gopal, I.A.S.,
Executive Officer,
Tirumala Tirupati Devasthanams,
TIRUPATI-517507

Printed at
Tirumala Tirupati Devasthanams Press
TIRUPATI

पूर्ववचन

तिरुमल श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की पट-देवेरी अलमेलुमंगा हैं। वे ही पद्मावती हैं। इस जगन्माता के विलसे दिव्य तीर्थ का नाम ही तिरुचानूर है।

तिरुपति शहर की आग्रेय दिशा में 5 किलोमीटर की दूरी पर स्थित तिरुचानूर दिव्य क्षेत्र तिरुमल यात्रा पर आये भक्तों से सदा अत्यंत कोलहल से भरा रहता है।

पुरा-कथा के अनुसार श्रीवैकुंठ से रूठ कर निकली श्रीमहालक्ष्मी की खोज करते हुए भूलोक आये हैं श्रीनिवास। फिर भी वे उन का पता नहीं लगा पाये। इसी बीच लक्ष्मी के अंश से पैदा हुई आकाश राज की पुत्री पद्मावती के साथ विवाह करने पर भी, श्रीनिवास को श्री महालक्ष्मी की अप्राप्ति अभाव सी बनी रही। पता लगने पर कि इन से अलग हुई श्रीमहालक्ष्मी कोल्हापुर (महाराष्ट्र) क्षेत्र में हैं, श्रीनिवास ने वहाँ पहुँच कर उन की प्राप्ति के लिए तपस्या की। लेकिन वहाँ उन्हें लक्ष्मी के दर्शन नहीं हुए। फिर वेंकटाचल क्षेत्र के समीप श्री शुक महर्षि आश्रम के पास पद्मसरोवर का निर्माण कर तप करने से श्री महालक्ष्मी की प्राप्ति होगी, ऐसी आकाशवाणी हुई। उस अशरीरवाणी पर विश्वास रखते हुए श्रीनिवास ने तिरुचानूर के समीप पद्मसरोवर का निर्माण करके 12 वर्षों तक तप किया। फलस्वरुप कार्तिक मास, शुद्ध पंचमी के दिन शुक्रवार को मध्याह्न के समय श्रीमहालक्ष्मी पद्मसरोवर में सहस्त्र दल सुवर्ण - पद्म से अवतरित हुई। इसीलिए वे ''श्री पद्मावती'' के नाम से लोकप्रिय हुई। उस जगन्माता को अपने वक्ष पर धारण करके श्रीनिवास तिरुमल क्षेत्र पधारे। उस दिन से देवताओं की प्रार्थना पर श्रीमहालक्ष्मी तिरुचानूर क्षेत्र में 'पद्मावती' 'अलमेलुमंगा' नामों से अर्चामूर्ति के रूप में भक्तों पर अनुग्रह कर रही हैं।

श्रीपद्मावती की अद्भुत अवतरण गाथा के साथ साथ तिरुचानूर मंदिर की विशेषताओं से और वहाँ के उत्सवों के विवरण से परिचय के साथ साथ, श्रीनिवास ने जिस आकाश राज की पुत्री पद्मावती के साथ विवाह किया, वे कौन हैं? तिरुचानूर में विलसी 'पद्मावती' कौन हैं? भक्तों के अन्य और संदेहों का निवारण करते हुए तेलुगु में रचित ग्रंथ ही ''सिरिकोलुवु'' है।

श्री जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम जी के द्वारा तेलुगु में रचित इस ''सिरिकोलुवु'' ग्रंथ के द्वारा हिन्दी भाषी भक्तों को श्रीपद्मावती माताजी के वैभव से परिचय कराने के संकल्प से तिरुमल तिरुपति देवस्थान ने आचार्य आई.एन. चंद्रशेखर रेड्डी जी के द्वारा हिंदी भाषा में अनुवाद कराया है। आप तिरुपति, श्री वेंकटेश्वर विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग में आचार्य के पद पर कार्यरत हैं। इस ग्रंथ को सरस एवं सरल शैली में हिंदी-बंधुओं तक पहुँचानेवाले श्री आचार्य चंद्रशेखर रेड्डी जी के प्रति मैं आभार व्यक्त करता हूँ।

उत्तर भारत के भक्त जन इस ग्रंथ को अपनाकर श्रीनिवास के साथ साथ श्रीपद्मावती माई का विशेष अनुग्रह प्राप्त करेंगे, ऐसी अशेष शुभकामनाएँ के साथ - - - -

सदा श्रीहरि की सेवा में

(एम.जी.गोपाल, ऐ.ए.एस)

कार्यनिर्वहणाधिकारी

तिरुमल तिरुपति देवस्थान

तिरुपति।

विषय सूची

1. पुरोवाक	01
2. एक बात	03
3. भूमिका	05
4. कृतज्ञतांजलि	11
5. तिरुचानूर	01
6. श्रीमहालक्ष्मी	10
7. पद्म सरोवर की महिमा	23
8. श्री वैकुंठ में परंधाम	53
9. वैकुंठ दर्शन और शापग्रस्त	64
10. धरती पर पधारी भू महालक्ष्मी!	66
11. भू महालक्ष्मी - आदिवराह स्वामी	68
12. श्रीवैकुंठ में श्रीमहालक्ष्मी	79
13. आदिलक्ष्मी का रूठना	82
14. धरती पर उतरायी संपदाओं की माई!	85
15. वेदलक्ष्मी	93
16. वेदलक्ष्मी ही पद्मावती	94
17. सप्तगिरीश कोल्हापुर में	98
18. अशरीरवाणी	104
19.तिरुमलेश की तपोदीक्षा	107
20. अलमेलुमंगा का अवतरण	111

21. श्रीनिवास के आश्रय में आयी अष्ट लक्ष्मियाँ 116
22. आकाशराज की पुत्री पद्मावती का व्यूहलक्ष्मी के साथ मिलना 119
23. व्यूहलक्ष्मी और श्रीनिवास का संवाद 121
24. व्यूहलक्ष्मी वैभव 133
25. व्यूहलक्ष्मी (भूत कारुण्यलक्ष्मी) का दिव्यानुग्रह 136
26. अनंताल्वान की पुत्री वक्षःस्थल महालक्ष्मी 149
27. ताल्लपाक वंशजों का अनुग्रह करनेवाली माता अलमेलुमंगा 159
28. अलमेलुमंगा का अनुग्रह 161
29. गवाही देनेवाली अलमेलुमंगा 185
30. पद्मशाली जाति लोग - जांड्र जाति के लोग 186
31. तरिगोंड वेंगमांबा का अनुग्रह करनेवाली ''व्यूहलक्ष्मी'' 212
32. अलमेलुमंगा का उत्सव वैभव 228
33. सूर्यनारायण स्वामी का मंदिर 234
34. तिरुचानूर श्रीकृष्णस्वामी का मंदिर 239
35. श्रीसुंदरराज स्वामी का मंदिर 246

पुरोवाक

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के मंदिरों में प्रथमगण्य और अत्यंत प्रमुख मंदिर तिरुमल के श्रीनिवास का मंदिर है। उस के बाद के स्थान में अद्वितीय रूप से विकसित दिव्य क्षेत्र तिरुचानूर की पद्मावती माई का मंदिर है।

साक्षात श्रीवेंकटेश्वर द्वारा श्रीमहालक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए बारहवर्ष की तपस्या के लिए चुना गया दिव्य क्षेत्र तिरुचानूर है! पद्म पुष्करिणी के पवित्र जलों से सोने के पद्म में श्री महालक्ष्मी ''अलमेलु मंगा'' के रूप में अवतरित हुई इसी दिव्य क्षेत्र तिरुचानूर में है! उससे पहले श्रीशुक महर्षि के पावन आश्रम के रूप में प्रचलित गाँव तिरुचानूर है!

आज भी ऐसी जनश्रुति सुनाई पडती है कि प्रति दिन रात को एकांत सेवा के उपरांत तिरुमल के श्रीनिवास दिव्य एवं भव्य क्षेत्र तिरुचानूर में श्रीपद्मावती के पास आते हैं। वे दोनों दिव्य दंपति भक्तों को लेकर बहस करते हैं।

प्रति वर्ष, माता के अवतरण दिन, यानी तिरुचानूर पंचमी के दिन, तिरुमल श्री निवास से हल्दी-कुंकुम, साडी-सागुन सम्मान माता के लिए आज भी संप्रदायबद्ध रूप से भेजे जाते हैं। इस से यह स्पष्ट है कि तिरुमल और तिरुचानूर के बीच आध्यात्मिक, पौराणिक, ऐतिहासिक अविभाज्य संबंध हैं।

ऐसे दिव्य क्षेत्र की महिमा को, श्रीपद्मावती माई की पौराणिक गाथा को, 'सिरिकोलुवु' (श्री पद्मावती सन्निधि) नाम से सुलभ, सुंदर और

सरस शैली में ''सप्तगिरि'' के संपादक श्री जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम ने प्रस्तुत किया है। तिरुमल श्रीनिवास की गाथा को ''हरिकोलुवु'' में अक्षर कुसुमों से, श्रीपद्मावती की दिव्य गाथा को ''सिरिकोलुवु'' में अक्षर कुसुमों से दीक्षा एवं श्रद्धा के साथ समर्पित कर उस दिव्य दंपति के संपूर्ण अनुग्रह को प्राप्त करनेवाले श्री जूलकंटिजी सचमुच ही धन्यातिधन्य हैं।

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने अपने धर्म प्रचार के अंतर्गत, महाभारत, भागवत, रामायण जैसे अनेक ग्रंथों को प्रकाशित करके पाठकों को समर्पित किया है। उस के अंतर्गत ही प्रस्तुत 'सिरि कोलुवु' (''श्री पद्मावती सन्निधि'') ग्रंथ का हिंदी अनुवाद। इसे सभी हिंदी पाठक अवश्य पढकर अपने को धन्य बनायेंगे, ऐसी ही आशा करता हूँ।

सदा भक्तों की सेवा में
अध्यक्ष,
धर्मकर्ता मंडली,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्

तिरुपति
16--5-2008

एक बात

मातर्नमामि कमले! कमलायताक्षि!
श्री विष्णु हृत्कमलवासिनि! विश्वमातः!!

श्री वेंकटाचल क्षेत्र में विलसे देव श्रीवेंकटेश्वर हैं। उस स्वामी के हृदय की पटराणी अलमेलु मंगम्मा हैं। वे तिरुमल दिव्य क्षेत्र में श्री निवास के वक्षःस्थल पर ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में, तिरुचानूर क्षेत्र में ''पद्मावती और अलमेलु मंगा'' नामों से अर्चामूर्ति के रूप में, भक्तों से आराधना प्राप्त कर रही हैं।

तिरुचानूर के पद्मसरोवर नामक पुष्करिणी में श्रीनिवास भगवान की प्रार्थना पर साक्षात श्रीमहालक्ष्मी सोने के सहस्रदल पद्म में ''पद्मावती'' के रूप में अवतरित हुई हैं। यह पद्मपुराण स्पष्ट कर रहा है।

लेकिन इसी संदर्भ में तिरुमल यात्री भक्तों के मन में एक संदेह उभरता है कि आकाश राजा की पुत्री पद्मावती और तिरुचानूर की पद्मावती दोनों क्या एक नहीं हैं! आकाश राजा की पुत्री पद्मावती कहाँ है? यह संदेह सहज है। संदेह होना सही भी है। ऐसे प्रश्नों की परंपरा के उत्तर ''सप्तगिरी'' पत्रिका के संपादक श्री जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम के द्वारा समर्पित ''सिरि कोलुवु'' (''श्री पद्मावती सन्निधि'') में मिलते हैं।

इस ग्रंथ में आकाशराज की पुत्री पद्मावती, तिरुचानूर क्षेत्र में विलसी पद्मावती अलग अलग हैं, ऐसा विश्लेषण करके बताना ही नहीं, श्रीआदिवराह क्षेत्र ''भू महालक्ष्मी'' के कारण आविर्भूत हुआ है, तदुपरांत ''श्री महालक्ष्मी'' के कारण साक्षात् श्री वैकुंठवासी श्रीमन्नरायाण भूलोक वैकुंठ वेकंटाचल में ''कलौ वेंकटनायकः'' उक्ति को सार्थक

बनाते हुए प्रसिद्ध होकर भक्तों के प्रति सुलभ बन 'श्रीनिवास' नाम से विराजमान हैं। इस में कथा-कथन पद्धति की रीति बहुत अच्छी है।

इतना ही नहीं तिरुचानूर की पद्मावती माई की अर्चामूर्ति से गवाही दिलानेवाले ताल्लपाक चिन्नन्न की दिव्य गाथा के साथ साथ, तिरुमल श्री निवास के वक्षःस्थल की व्यूहलक्ष्मी की लीलाओं को, उनके अनुग्रह को संपूर्ण रूप से पानेवाले परम भक्त अनंताल्वार, ताल्लपाक अन्नमय्या, तरिगोंड वेंगमांबा आदि के अद्भुत वृत्तांत भी इस में वर्णित हैं।

कलियुग देव और प्रस्तुत कथा नायक श्रीनिवास से अविभाज्य संबंध रहनेवाले श्रीवैकुंठ की श्रीमहालक्ष्मी, कोल्हपुर निवासिनी श्री महालक्ष्मी - तिरुमल श्रीनिवास के वक्षःस्थल की व्यूहलक्ष्मी - नारायण वन के आकाश राज की पुत्री पद्मावती, तिरुचानूर की अलमेलु मंगा के वृत्तांतों को संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत करनेवाले यह ''सिरि कोलुवु'' (श्री पद्मावती सन्निधि) ग्रंथ को तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने अपने धार्मिक प्रकाशन के रूप में प्रकाशित किया है। मेरी आकांक्षा है कि भक्त इस पुस्तक का सदुपयोग करके '' श्री अलमेलु मंगा- श्रीपद्मावती'' की गाथा समझ कर जगन्माता के परिपूर्ण अनुग्रह को प्राप्त करेंगे।

सदा भक्तों की सेवा में,

तिरुपति

कार्यनिर्वाहण अधिकारी,
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्, तिरुपति

भूमिका

श्रीवत्सवक्षसं श्रीशं श्रीलोलं श्रीकरग्रहम्
श्रीमंतं श्रीनिधिं श्रीड्यं श्रीनिवासं भजेऽनिशम्

तिरुमल के श्रीवेंकटेश्वर एक अद्भुत देव हैं! आनंदमय देव हैं! उस स्वामी के वक्षःस्थल पर 'श्रीवत्स' नामक चिह्न के रूप में श्री महालक्ष्मी विराजमान हैं। देव साक्षात लक्ष्मीनाथ हैं! तिरुमलेश नित्य लक्ष्मीदेवी से लीला-विलास में डूबे रहते हैं। लक्ष्मी देवी के कर कमल को अपने हाथों में स्वीकार करनेवाले भी वे ही हैं! बस इतना ही नहीं है! इस के अतिरिक्त श्रीनिवास भगवान सर्वविद्या संपूर्ण हैं। समस्तैश्वर्य परिपूर्ण भी हैं। साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी से निरंतर ध्यान किए जानेवाले, स्तुति किए जानेवाले श्रीनिवास भगवान के बारे में और किस रूप में प्रशंसा कर सकते हैं? कितनी प्रशंसा कर सकते हैं? स्वामी अतुलनीय और अप्रमेय देव हैं!

इस रूप में तिरुमल श्रीवेंकटेश्वर के अवतार का दिव्य वृत्तांत पूरा और सर्वलोकों में, सर्व देशों में, सर्वत्र कदम कदम पर, कण कण में श्रीनिवास की जीवन गति विविध कलांशों से भरी श्रीमहालक्ष्मी देवी से जुडी हुई है। मुख्य रूप से श्रीवैकुंठ में श्रीमहालक्ष्मी - कोल्हपुर क्षेत्र में श्रीमहालक्ष्मी - नारायण वन में आकाशराज की पुत्री पद्मावती (वेदलक्ष्मी) - तिरुचानूर में अलमेलु मंगा के नाम से ख्यात पद्मावती तिरुमल में श्री निवास के वक्षःस्थल पर बसी व्यूहलक्ष्मी - ये सभी श्रीवेंकटेश्वर भगवान की दिव्य गाथा में दर्शन देती हैं।

इतने अद्भुत प्रसंगों से भरी श्रीनिवास की पवित्र गाथा को तिरुमल, तिरुपति के स्थानीय कुछ अलग रूप में सुना रहे हैं।

आकाश राज की पुत्री पद्मावती के साथ विवाह करके, तिरुमल पर जाते समय, साडी-सागुन से आयी पद्मावती को देखकर, रास्ते में ही वेंकटेश्वर पूछते हैं कि इन सब के साथ मीठे नीम के पत्तों को लायी हो क्या! कहा जाता है कि ''नहीं'' कहनेवाली पद्मावती को देखकर, श्रीनिवास ने गुस्सा किया। इसलिए पद्मावती रूठ कर, अपने साथ लाये सामान के लिए हनुमान को रखवाले के रूप में रखकर, पहाड से उतरकर, अलमेलु मंगपट्टण (तिरुचानूर) चली गयी। यह भी स्थानीय लोगों में प्रचलित इतिहास का कथन है। पहाड पर जानेवाले मार्ग में 'मोकाल्लमेट्टु' को पार करने के बाद 'पद्मावती सारे पेट्टेलु' (पद्मावती के सागुन के बकसे) नाम से पुकारे जानेवाली पंक्तियों में बकसों के रूप में सजाये गए पत्थरों की चट्टानें हैं। उन पर बनायी गयी हनुमान की मूर्ति को आज भी देख सकते हैं। इसी को लेकर एक कवि ने ''अलमेलु मंगकु अलुक रानीयकु' (अलमेलु मंगा को रूठने न दो) नामक गीत लिखा है, ऐसा कहा जाता है। प्रति दिन एकांत सेवा के अनंतर तिरुमलेश पहाड से उतरकर तिरुचानूर जाकर पद्मावती से बातें करते हैं, ऐसी भी जनश्रुति प्रचलित है।

यहाँ की स्थानीय गाथाएँ इस प्रकार की रहने पर महाराष्ट्र के कोल्हपुर क्षेत्र से संबंधित वहाँ के स्थानीय लोगों में प्रचलित कथाएँ और भी आसक्तिदायक हैं। श्री बालाजी (श्री वेंकटेश्वर) की प्रथम पत्नी कोल्हापुर निवासिनी श्री महालक्ष्मी हैं, उसे भूलकर श्रीनिवास ने आकाशराज की पुत्री पद्मावती के साथ विवाह किया है, यह जानकर महालक्ष्मी गुस्सा करके, रूठ कर, कोल्हापुर चली गयी है, ऐसा प्रचलित है। इसलिए श्रीनिवास तिरुमल क्षेत्र में पूरब मुखी के रूप में, कोल्हापुर क्षेत्र में श्री

महालक्ष्मी पश्चिमीमुखी के रूप में, यानी एक दूसरे के अलग और व्यतिरेकी दिशा में पीठ दिखाते हुए बसे हुए हैं, यह भी लोगों का विचार है। इस कारण से महाराष्ट्र के लोग तिरुमल श्रीनिवास के दर्शन के बाद सीधे कोल्हापुर क्षेत्र जाकर वहाँ की श्रीमहालक्ष्मी माई को बालाजी वेंकटेश्वर की पत्नी के रूप में अवश्य दर्शन करके अपनी तिरुमल यात्रा को संपूर्ण फलप्रद बना लेते हैं। तिरुचानूर पद्मावती के बारे में महाराष्ट्र भक्तों को मालूम नहीं है। जानने पर भी वे उसे श्रीनिवास की दूसरी पत्नी के रूप में ही पहचानते हैं। इसलिए वे तिरुचानूर पद्मावती को उतना महत्व नहीं देते हैं।

लेकिन तिरुचानूर में विराजित पद्मावती माई, साक्षात श्रीमहालक्ष्मी हैं, श्रीनिवास यहाँ के पद्मसरोवर के तट पर तप करने के कारण कोल्हापुर निवासिनी जगन्माता पद्मसरोवर में सहस्र दलवाले सोने के पद्म से आविर्भूत होकर पद्मावती के रूप में प्रचलित हुई हैं, इसका पद्मपुराण में उल्लेख है।

ऐसी वैविध्यपूर्ण गाथाओं से भरी पद्मावती माई की गाथा को सविस्तार पूर्वक बताने के लिए कहने पर, आकाश राज की पुत्री पद्मावती आज कहाँ हैं? अलमेलु मंगम्मा के नाम से पुकारी जानेवाली तिरुचानूर में बसी पद्मावती वही हैं क्या? ऐसे कई संदेहों को मेरे पास कुछ लोग व्यक्त करते हुए आये और 'सप्तगिरि' के पाठक गण ने भी मेरे पास कई पत्र भेजे हैं।

तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् की पत्रिका 'सप्तगिरि' के संपादक के रूप में पाठकों के संदेहों को थोडा बहुत दूर करने का कर्तव्य मुझ पर है, यही मैं ने सोचा है। प्रयत्न भी किया। शोध भी किया। परीक्षण भी

किया। उसी के परिणाम स्वरूप ''सिरि कोलुवु'' (श्री पद्मावती सन्निधि) ग्रंथ ने यह रूप प्राप्त किया।

इस ग्रंथ में तिरुमल श्रीवेंकटेश्वर से जुडी विविध लक्ष्मी के रूपों - उन के इतिहास को संक्षिप्त कथाओं केरूप में चित्रण किया गया है। अंत में वे सभी श्रीवेंकटेश्वर से एक होकर, एकत्व प्राप्त करके वक्षःस्थल में ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में स्थिर रूप में बस गयीं। इसलिए वे श्री (लक्ष्मी) को निवास के रूप में बना लेनेवाले 'श्रीनिवास' नाम से प्रचलित हुए हैं। व्यूहलक्ष्मी के कारण ही स्वामी सुलभ एवं सरलता से सभी भक्तों की मनौतियों को पूरा कर रहे हैं, यही बताया गया है। संस्कृत वेंकटाचल ग्रंथ, तरिगोंड वेंगमांबा द्वारा तेलुगु में रचित 'वेंकटाचल माहात्म्यमु' ग्रंथ मेरी इस रचना के लिए आधारभूत ग्रंथ हैं।

सारांश यह है कि साक्षात श्रीवेंकटेश्वर ही श्रीमहालक्ष्मी के अनुग्रह के लिए तरसते रहे। उस माई की करुणा दृष्टि के लिए निरीक्षण किया। उस माई की दया के लिए इंतजार किया। उस माई के प्रेम के लिए परिताप के शिकार भी हुए। इस प्रकार अनेक कष्टों को झेलते हुए आखिर आनंद निलय के भगवान ने अमृतमई, शाश्वतानंदमई अलमेलु मंगा को प्रसन्न किया। उस माई के दर्शन प्राप्त किए। उस माई को अपने अंक में प्राप्त किया। तिरुमल दिव्यधाम को शाश्वत दिव्य धाम के रूप में, भूलोक वैकुंठ के रूप में, अमर बना दिया।

भक्तगण श्रीनिवास से अलग सीधे, अलमेलु मंग पट्टणम (तिरुचानूर) में शांति निलय विमान के अतंर्भाग में अर्चा मूर्ति के रूप में विराजमान अलमेलु मंगम्मा (पद्मावती) का भक्ति से दर्शन कीजिए! अपने हाथों से अर्चन कीजिए! आराधना कीजिए! मन भर प्रार्थना कीजिए! लेशमात्र

भी संदेह और संकोच न करते हुए स्वच्छ हृदय से आप की मनौतियों को माई अलमेलु मंगम्मा से निवेदन के बाद ही तिरुमल यात्रा कीजिए! सात लोकों के, सात पहाडों के और आनंदनिलय के देव तथा अलमेलु मंगम्मा के साथ उन सात पहाडों के बीच में एकत्व को प्राप्त करके एक ही रूप में भासित एवं आनंद निलय में दर्शन देते हुए अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक के दर्शन कीजिए! परमार्थ सिद्धि को पूर्ण रूप से प्राप्त कीजिए!

जयमंगलम् नित्य शुभमंगलम्
जयमंगलम् नित्य शुभमंगलम्
आनंदनिलयमंदनिशंबु वसिइंचि
दीनुलनु रक्षिंचु देवुनकुनू
कानुकल नोनगूर्चि घनमुगा विभुनि स -
न्मानिंचु अलमेलु मंगम्मकू ।।जय मंगलम्।।

वरमोसग ना वंतु नरुलकनि वैकुंठ
मरचेत चूपु जगदात्मुनकुनू
सिरुलोसग तनवंतु सिद्धमनि नायकुनि
उरमुपै कोलुवुन्न शरधिसुतकू ।।जय मंगलम्।।

वैशाख शुद्ध पूर्णिमा
19-05-2008

लेखक
जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम
संपादक, ''सप्तगिरि''
तिरुमल तिरुपति देवस्थानम्
तिरुपति

श्री पद्मावती देवी

कृतज्ञतांजलि

सात पहाडों के देव के पादपद्मों में सात दिव्याक्षर कुसुमों को समर्पित करना मेरी कामना है। मेरे विचार को ही अपने संकल्प के रूप में संभव बनाया तिरुमलेश ने।

परमपवित्र सप्तगिरि के शिखरों पर घूम घूम कर चयन करके जुटाये अक्षर कुसुम क्रम से १. हरिकोलुवु २. श्रीनिवास वैभवम् ३. आनंद निलयमु ४. तिरुमललो तिरुप्पावै ५. कमनीय क्षेत्रमु कपिलतीर्थम् ६. श्रीवेंकटेश्वर लीललु और अब समर्पित सातवाँ पुष्प ''सिरि कोलुवु '' ग्रंथ हैं।

मेरे इस लेखन कार्य के लिए कई महानुभावों, सहृदय साहित्यकारों, महनीय महात्माओं और भी अनेक ने अपने अमूल्य सुझाव-सलाह दी हैं। अपने संदेहों की निवृत्ति पायी है। तदर्थ उन्हें मैं सिर्फ कृतज्ञतापूर्वक नमस्कार के बिना क्या और दे सकता हूँ!

मुख्य रूप से मैं कहीं दिखाई पडता हूँ तो मेरा अभिनंदन करते हुए ''जूलकंटि जी! तिरुमल के स्वामी पर लिखी गयी आप की पुस्तकें अद्भुत हैं'' कहकर हृदय से बोलनेवाले, निस्संकोच हार्दिक अपनी प्रतिक्रियाओं के साथ स्पंदित होनेवाले, ऐसी लेखन प्रक्रिया को और आगे बढाने के लिए निरंतर मुझे प्रोत्साहित करनेवाले सत्साहित्यिकों को, लेखकों, आलोचकों, श्रीनिवास के भक्तों की सेवा में धन्य होनेवाले तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के धर्मकर्ता मंडली के अध्यक्ष श्रीमान भूमन करुणाकर रेड्डी जी को मेरे कृतज्ञतापूर्वक नमस्कार।

''सिरि कोलुवु'' ग्रंथ को तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् ने अपने धार्मिक प्रकाशन के रूप में भक्तजनों को भेंट स्वरूप समर्पित करनेवाले तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के कार्यनिर्वहण अधिकारी, निरंतर शासन में व्यस्त रहनेवाले, भक्त जन सेवा तत्पर, साहितीमूर्ति, सौम्य एवं सहृदय श्री के.वी.रमणाचारी जी को कृतज्ञतापूर्वक कुसुमांजली!

कालनियम को नहीं मानते हुए, सात पहाडों के देव के भक्तों की सेवाओं में निरंतर मग्न रहते हुए भी, मेरी, इन रचनाओं का अभिनंदन करते हुए विषय चयन में कई रूपों में सहयोग-सहायता देनेवाले भक्ति तत्पर तिरुमल श्रीनिवास के मंदिर के विशेष अधिकारी श्री ए. वी . धर्मारेड्डी जी को कृतज्ञतांजली।

इस प्रकार के धार्मिक ग्रंथ लेखन के विषय में थोडी सी भी उदासीनता ठीक नहीं है। इस बात पर समय समय पर पीठ तपतपाकर प्रोत्साहन करनेवाले सहृदय तिरुमल तिरुपति जनसंपर्क अधिकारी श्री के. रामपुल्ला रेड्डी जी को विशेष रूप से कृतज्ञतांजली।

तिरुमलेश के भक्तों को उपयुक्त शाश्वत रचनाएँ प्रदान कर रहे हैं- उन के प्रकाशन के लिए अनेक रूपों में सहयोग देनेवाले प्रधान संपादक श्री सी. शैलकुमार जी को, उसी रूप में हमारे सहकर्मी श्री धारा सुब्रह्मण्यमु, डॉ. कोटपाटि राधारमण, डॉ. अल्लाडि संध्या, डॉ. कलुवगुंट राममूर्ति आदि उपसंपादकगण को हृदयपूर्वक कृतज्ञताएँ समर्पित करता हूँ।

इस ग्रंथ को विशेष श्रद्धा के साथ मुद्रित करने के लिए निष्ठा के साथ कार्य संपन्न करनेवाले तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के प्रेस मेनेजर

श्री वी. सांबशिव राव जी को, इस पुस्तक का डिजैन करनेवाले डी.टि.पी. और तिरुमल तिरुपति देवस्थानम् के प्रेस के कर्मचारियों को मेरी कृतज्ञताएँ हैं।

तिरुमल के यात्री और भक्तगण 'सिरि कोलुवु', नव शीर्षक 'श्री पद्मावती सन्निधि' ग्रंथ को पढकर तद्वारा श्री अलमेलुमंगा समेत श्रीनिवास के बैभव को समझेंगे, यही मेरी आकांक्षा है।

आप का
लेखक
जूलकंटि बाल सुब्रह्मण्यम

पुनश्चः

'श्री पद्मावती सन्निधि' के अनुवादक प्रो.आई.एन. चन्द्र शेखर रेड्डी, उसके परिमार्जक आचार्य वै. वेंकटरमण राव तथा प्रधान संपादक आचार्य रव्वा श्रीहरि को मेरे अभिवादन।

- लेखक

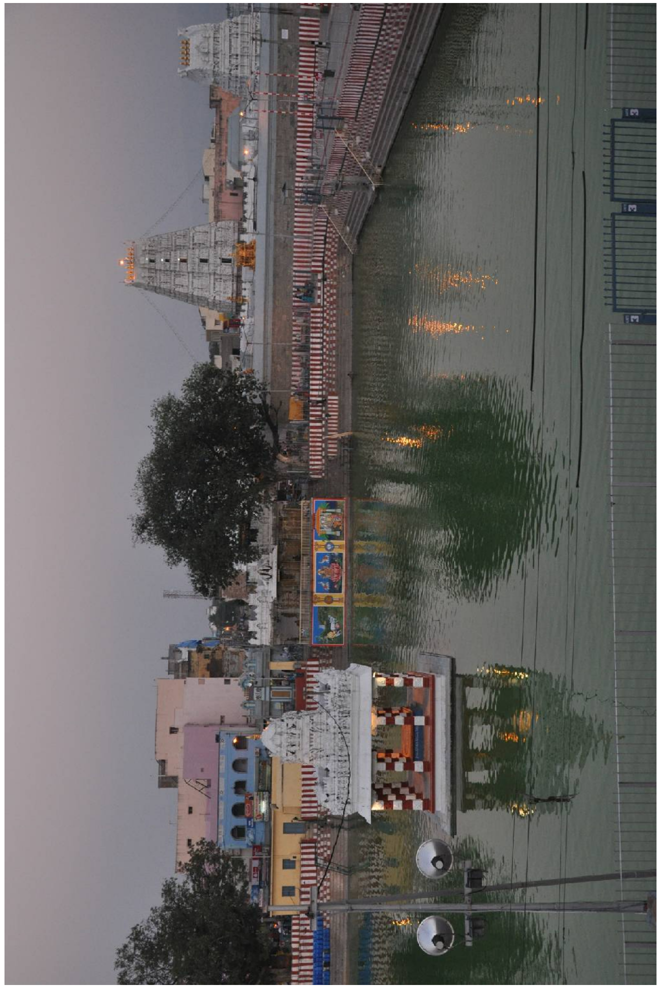

तिरुचानूर पद्मसरोवर

तिरुचानूर

'तिरुचान' का अर्थ है श्रीकांता। संपदाओं की माई साक्षात श्रीमहालक्ष्मी है। जगन्माता का वासस्थल (गाँव) ही 'तिरुचान ऊरु' (श्रीकांता का गाँव)। कुछ लोगों का विचार है कि 'तिरुचान ऊरु' ही 'तिरुचानूर' बना है।

बहुत पहले यह शुक महर्षि का आश्रम प्रांत था। इसलिए यह प्रांत 'श्रीशुकुनि ऊरु' (श्रीशुक का गाँव) नाम से पुकारा गया, वही बाद में 'श्रीशुकनूर' के नाम से और 'तिरुच्चुकनूर' के रूप में, 'तिरुचानूर' के रूप में विकसित हुआ - यह भी कुछ लोगों का विचार है। इस दिव्य क्षेत्र में श्रीशुक जैसे कई महर्षियों ने तप किया। उस के बगल में ही शुक महर्षी के पितामह पराशर की तपोभूमि 'योगिमल्लवरम' (जोगिमल्लवरम) भी था, ऐसा विचार व्यक्त किया जाता है। यह भी माना जाता है कि यहाँ के पद्मसरोवर में साक्षात वैकुंठनाथ श्रीवेंकटेश्वर ने श्रीमहालक्ष्मी के अनुग्रह को प्राप्त करने के लिए कठोर तप किया। उस तप के परिणाम में ही साक्षात श्रीमहालक्ष्मी पद्मसरोवर में सहस्र दल कमल में ''अलिवेलुमंगा'' के रूप में ('पद्मावती' के रूप में) आविर्भूत हुई है। अलमेलुमंगा को लेकर ऐसी कई अद्भुत कहानियाँ व किवदंतियाँ सुनने पर लगता है कि ये सारी स्थापनाएँ परम सत्य हैं। तब अत्यंत विश्वास और आनंद भी प्राप्त होता है।

भृगु महर्षि की परीक्षा के कारण, श्रीवैकुंठ से रूठ कर धरती पर उतर कर कोल्हापुर क्षेत्र में विलसित होनेवाली साक्षात श्रीमहालक्ष्मी माई की, श्रीवेंकटेश्वर स्वामी जी ने तप करके प्रार्थना की है। वे श्री महालक्ष्मी

स्वामी की इच्छा के अनुसार यहाँ के स्वर्णमुखी नदी तट पर शुक महर्षी के आश्रम प्रदेश में, पद्मसरोवर में ''अलिवेलुमंगा'' के रूप में आविर्भूत हुई है। अलरमेल मंगा का मतलब पद्म पर आरूढ प्रकाशवान दिव्य नारी श्रीकांता है। इसलिए 'पद्मावती' नाम भी उस माई के लिए सार्थक बन गया है। 'अलिमेलुमंगा' के रूप में अवतरित उस महालक्ष्मी को श्रीवेंकटेश्वर अपने वक्षस्थल पर '' व्यूह लक्ष्मी'' के रूप में धारण करके वेंकटाचल क्षेत्र लौटे। 'अलिमेलुमंगा' की अर्चामूर्ति के रूप में आराधना प्राप्त करते रहने के कारण तिरुचानूर श्री क्षेत्र के रूप में, ''अलिमेलुमंग पट्टणम्'' के रूप में, प्रचलित हो गया है।

लगभग इसी समय नारायणवन के राजा आकाशराजा की पुत्री पद्मावती के साथ श्रीवेंकटेश्वर ने विवाह किया, उस विवाह में साक्षात श्री महालक्ष्मी भी आयी थी, ऐसा विवरण भी प्राप्त होता है। आकाश राज की पुत्री पद्मावती कौन है? इस प्रश्न के उत्तर के रूप में त्रेतायुग की रामायण गाथा का स्मरण करने से उत्तर मिल जाता है। त्रेता युग में वनवास के समय 'सीतालक्ष्मी' के बदले लंका में वेदवती (वेदलक्ष्मी) रावण के यहाँ बंदी के रूप में रही है। रावण वध के उपरांत सीता ने, अपनी जगह लंका में कष्ट झेलनेवाली 'वेदवती' के साथ विवाह करने के लिए राम से प्रार्थना की है। तब राम ने, अपने पत्नीव्रत होने के कारण वर्तमान में यह संभव नहीं है कहकर, कलियुग में यह 'वेदवती' आकाश राज की अयोनिजा पुत्री के रूप में जन्म लेंगी, उस समय मैं श्रीवेंकटेश्वर के रूप में अवतार लेकर उन के साथ विवाह करूँगा, ऐसा वचन दिया था। उसका पालन भी किया है।

वैकुंठं वा परित्यक्ष्येन भक्तांस्त्यक्तुमुत्सहे।
मेऽतिप्रिया हि मद्भक्ता इति संकल्पवानसि।।

मैं वैकुंठ को छोडकर रह सकता हूँ। लेकिन अपने भक्तों को छोडकर नहीं रह सकता हूँ, ऐसे दृढ संकल्प से वैकुंठ छोडकर धरती पर आकर भूलोक वैकुंठ समझेजानेवाले वेंकटाचल में श्रीवेंकटेश्वर बस गए। लेकिन तब से शांत न रहकर, रहने में असमर्थ होकर, रहने की सुविधा न देखकर, उपर्युक्त बताये अनेक संदर्भों में श्रीमहालक्ष्मी के द्वारा आकर्षित होकर श्रीवेंकटेश्वर ने सदा आर्ति बनकर लक्ष्मी का स्मरण किया है। भूमहालक्ष्मी (भूदेवी) के लिए विचित्र वराह स्वामी का अवतार लिया। आकाश राज की पुत्री 'पद्मावती' के रूप में अवतरित वेदलक्ष्मी के लिए श्रीमन्नारायण अनेक रूपों में परिताप के शिकार हुए। मोह के शिकार होकर पद्मावती के साथ विवाह किया।

वेंकटाचलपति ने कोल्हपुर की महालक्ष्मी के अनुग्रह के लिए प्रयत्न करके दस वर्ष अनेक कष्ट झेलते हुए तप किया। परन्तु सफल नहीं हुए। फिर भी स्वामी ने अपना प्रयत्न नहीं छोडा। आकाशवाणी के आदेश के अनुसार पद्मसरोवर के तट पर उस महालक्ष्मी की दया के लिए बारह वर्षो तक अतिकठोर तप किया। अंत में वे पद्मसरोवर से सोने के पद्म पर ''अलिमेलुमंगा'' के रूप में आविर्भूत हुई। तब स्वामी ने उन्हें 'व्यूह लक्ष्मी' के रूप में अपने वक्षस्थल पर धारण किया। उस दिन से श्री वेंकटेश्वर 'श्रीनिवास' के नाम से लोकप्रिय हो गए। वे जितने चाहे उतने वरदान अपने भक्तों को देने लगे हैं।

इस रूप में जगन्माता अलमेलुमंगा के अनुग्रह के लिए साक्षात श्रीमन्नारायण ही कदम कदम पर तरसते हुए अनेक रूपों में परिताप के

शिकार हुए हैं न! ऐसे में साधारण भक्त को अलिमेलुमंगा के अनुग्रह के लिए, दया प्राप्त करने के लिए कितनी श्रद्धा और भक्ति के साथ पूजा करनी है? कितने विनय और विनम्रता के साथ आराधना करनी है, स्पष्ट हो जाता है।

तिरुचानूर में अर्चामूर्ति के रूप में विराजमान आनंदमयी, प्रेममयी माई अलिमेलुमंगा, तिरुमल क्षेत्र में श्रीनिवास के वक्षस्थल पर विराजमान होकर ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में है। वे अत्यंत कोमल हृदयवाली हैं। अत्यंत करुणामूर्ति के रूप में रहते हुए ''भूतकारुण्यलक्ष्मी'' के रूप में लोकप्रिय हुई हैं।

तिरुमल आनेवाले यात्री भक्त को अपनी वेंकटाचल यात्रा में सब से पहले तिरुचानूर क्षेत्र में अर्चा मूर्ति के रूप में विराजमान होकर पूजा प्राप्त करनेवाली आनंदनिलय के स्वामी की पटरानी अलिमेलुमंगा का दर्शन करना चाहिए। अपनी सारी मनौतियों को उस माई को सुनाना है। अपनी अपनी प्रार्थनाएँ एवं विनतियाँ उस माई को सुनानी हैं। अपनी अपनी कामनाओं को, प्रार्थनाओं को स्वामी को बतलाकर उन सभी को पूरा करने की संस्तुति करने के लिए माई से भक्ति के साथ विनति करनी है। असमंजस को छोडकर किसी भी प्रकार का संकोच नहीं करते हुए माता की गोद में बैठकर लाड प्यार करनेवाले बच्चों की तरह भक्त को माई की दया के लिए प्रार्थना करनी चाहिए।

श्रीस्वामी के वक्षस्थल पर (भूतकारुण्य लक्ष्मी) व्यूहलक्ष्मी पद्मावती बनकर भक्तों की याचनाओं को स्वामी को सुनाती हैं। सिर्फ सुनाने और संस्तुति करने से अपने को सीमित नहीं करती हैं, छुप नहीं रहती हैं। अनुग्रह प्राप्त करने के लिए जिद पकड कर कदम कदम पर

सतत प्रयास करनेवाले अपने प्रिय भक्तों की कामनाओं को श्री वेंकटेश्वर से अवश्य पूरा करने की सिफारिश करती हैं। जोर भी देती हैं। पहले अपने भक्तों की विनतियाँ, दुख, कष्ट और आर्तनाद सुनती हैं और फिर उन्हें अपने स्वामी को सुनाती हैं। भक्तों के संदर्भ में अपने आश्रय में आयी अपनी संतानों के आर्तनादों सुनाकर करुणा दिखाने की बात कहकर स्वामी में क्षमा गुण को बढाती हैं। स्वामी के दया-गुण को प्रेरित करती हैं। इस लोक में कोई माँ की बात को अनसुना कर सकता है क्या? उस में भी माई के अनुग्रह के लिए तरसनेवाले पिता, कहीं माई की बात को ठुकरा सकते हैं? वह भी अपनी संतान के मामले में ! माई की बात को ठुकराये बिना ज्यों का त्यों माई के कहने पर करते हैं। अवश्य ही पालन करते हैं। इसलिए माई की बात को ठुकराये बिना, उन की बातों का पालन करते हुए, श्रीनिवास भगवान हमारी कामनाओं की पूर्ति कर रहे हैं। भक्तों को वरदान प्रदान कर रहे हैं। अपनी संतान के समस्त पापों का निवारण कर रहे हैं। दुखों को तथा कष्टों को दूर कर रहे हैं। उसी समय उन्हें सर्व संपदा प्रदान कर रहे हैं।

इस पूरे की सूत्रधारिणी, कारण तत्व, वात्सल्यादि गुणों से शोभित साक्षात श्रीमहालक्ष्मी कलियुग की जगन्माता वेंकटाचल क्षेत्र में, तिरुमलेश्वर के वक्षस्थल पर पद्मपीठ पर द्विभुजी ''व्यूह लक्ष्मी'' के रूप में, तिरुचानूर क्षेत्र में ''अलिमेल मंगा'' या ''पद्मावाती'' के नाम से अर्चामूर्ति के रूप में विराजित होकर भक्तों की पूजाएँ प्राप्त कर रही हैं। पूजा-अर्चना पा रही हैं। इसलिए उस जगन्माता को परमभक्त अन्नमाचार्य ने कीर्तन करते हुए इस रूप में प्रार्थना की है -

परमात्मुडैन हरि पट्टपुराणिवि नीवु
धर ममु विचारिंच तगु नीकु अम्मा!

कमलजु गन्न तल्लि! कामुनि कन्न तल्लि!
अमरुल कन्नतल्लि! आदिमलक्ष्मी!
विमलपु नी पतिकि विन्नपमु सेसि मम्मु
नेमकि येलिति दय नीके तगुनम्मा!

कामधेनु तोबुट्टुग, कल्पकमु तोबुट्टुग
दोमटि चल्लनि चंद्रु तोबुट्टुग
नीमगनि पंपुननु निजसिरु लिच्चितिवि
नेमपु वितरणमु नीके तगुनम्मा

पालजलधि कन्यवु! पद्मासनवु! नीवु
पालपंडे श्री वेंकटपति देविवि!
येलिन इतनि बंटूल किहपरालिच्चि मा
पाल कलिगितिवि संबंधमु मेलम्मा!

(भावार्थ - हे माई! तुम परमात्मा हरि की पटराणी हो। इस लोक में हम सब की देखभाल करते हुए हम सब की रक्षा करने की शक्ति तुम्हारे पास ही है। तुम ही शक्तिशालिनी हो। क्योंकि तुम साक्षात ब्रह्मा की माँ हो। मन्मथ की माँ भी हो! देवताओं की माई भी तुम ही हो! अपने पति तिरुमलेश से विनति करके हम पर दया कराने की शक्ति भी तुम ही को प्राप्त है। इस से बढकर समस्त कामनाओं की पूर्ति करनेवाली कामधेनु, कल्पवृक्ष तुम्हारी सहोदरी हैं! शीतलता बरसानेवाले चंद्र भी तुम्हारा ही भाई है! समस्त संपदाओं को प्रदान करनेवाली सामर्थ्य तुम ही में है।

तुम क्षीर सागर कन्या हो। तुम्हारा स्वामी क्षीर सागर में शेषशायी के रूप में रहते हैं। इह पर लोकों में संपदा प्रदान करनेवाले आप दोनों के साथ संबंध हमारा सौभाग्य है। - मन चाहत वरदान देनेवाले सप्तगिरीश के द्वारा अनेक रूपों में भक्तों के इह पर सुखों को दिलाने वाली अलिमेलु मंगा का विशेष कीर्तन करनेवाले अन्नमय्या ने दूसरी जगह दोनों के अभेदकत्व का वर्णन किया है।)

माई! अलिमेलुमंगा माई! श्रीनिवास स्वामी भी तुम ही हो! तुम ही साक्षात वह स्वामी हो! इससे बढकर माई! एक बार पुकारना पर्याप्त है! माई! साक्षात स्वामी की पुकार जैसी है! इस में कोई संदेह नहीं है। और तो और तुम्हारा हृदय ही स्वामी है। ऐसे आप के कर तल में समस्त प्राणी-भूत अपने अस्तित्व को प्राप्त कर रहे हैं- ऐसा कहकर ही श्रेष्ठ महर्षि सदा श्रीवेंकटेश्वर स्वामी जी की प्रियसती अलिमेलुमंगा का किर्तन करते हैं। ऐसा अन्नमाचार्य ने वर्णन किया है!

''अप्रमेयप्रमेयापि समस्तपुरुषार्थदा।
महदैश्वर्य सौभाग्या तथापि त्वानुवर्तिनी''।।

अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक, सप्तगिरीश, वेंकटरमण, संकट हरण, तिरुमलेश, वेंकटेश्वर , कदम कदम पर भक्तो का उद्धार करनेवाले, आपदाओं को दूर करनेवाले - - आदि अनेक नामों से लोकप्रिय होकर प्रशंसा पानेवाले, भक्तों से स्तुति पानेवाले श्रीवेंकटाचलपति के दिव्य वक्षःस्थल पर निरंतर अनपाई के रूप में साक्षात श्रीमहालक्ष्मी बसकर दिव्य कांति से प्रकाशित रहती हैं। उस अलिमेलुमंगा को प्राप्त ज्ञान, शक्ति, महिमा आदि के बारे में कोई कुछ अंदाज नहीं लगा सकता है।

कम से कम उन के बारे में सच्ची जानकारी भी नहीं रखता है। लेकिन भक्त जनों की प्रतिभा और योग्यता के अनुसार उन्हें अपर्याप्त रूप में वे महालक्ष्मी अपनी महिमाओँ को दिखाती रहती हैं। उस के साथ साथ धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूपी चार पुरुषार्थों को उन की योग्यताओं के अनुसार अनुग्रह करती रहती हैं। इस रूप में श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के हृदय की पटराणी पद्मावती देवी भक्त ब्रह्मादि देवताओं को अत्युत्तम और अनंत ऐश्वर्य और सौभाग्य प्रदान करती रहने पर भी निरंतर समस्त कालों में असावधान रहे बिना अपने स्वामी श्रीवेंकटेश्वर का ही अनुसरण करते हुए, उस स्वामी की वशवर्तिनी के रूप में शोभित रहती हैं। इसलिए तिरुमलेश ''श्रीनिवास'' के रूप में लोकप्रिय होकर, अपने वक्षस्थल वसित लक्ष्मी देवी की सहायता से सभी भक्तों पर कई रूपों में संपदाओं को बरसाते हुए तद्वारा इह पर सुखों का अनुग्रह करते रहते हैं।

इस रूप में इस श्रीवेंकटाचल पर्वत शिखरों पर, चारों दिशाओं के उन दिव्य क्षेत्रों में संपदाओं की माई श्रीमहालक्ष्मी विराजित होकर दया से भक्तों की रक्षा करते हुए करुणा से देखभाल कर रही हैं। वे संपदाओं की माई महाराष्ट्र के कोल्हापुर में ''श्रीमहालक्ष्मी'' के रूप में, नारायणवन में ''श्रीपद्मावती'' के रूप में, तिरुचानूर (अलिमेलुमंग पट्टण में) में अर्चामूर्ति के रूप में श्री ''अलिमेलुमंगा'' के रूप में, श्री पद्मावती के रूप में, तिरुमल क्षेत्र में श्रीनिवास के वक्षस्थल पद्म में ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में, ''भूत कारुण्य लक्ष्मी'' के रूप में विराजमान होकर, अपने दर्शन करनेवाले भक्त जनों पर संपदाओं को बरसाते हुए भक्तों के लिए कल्पवल्ली बनकर कामनाओं की पूर्ति कर रही हैं। वे जगन्माता कई जगहों पर, कई नामों से विराजमान होने पर भी साक्षात श्रीमन्नारायण

की पटराणी ही हैं! अनपाइनी घरवाली ही हैं! इसलिए उस लोकमाता की गाथा को, मुख्य रूप से इस कलियुग में वेंकटाचलपति के साथ संबंध रखनेवाली श्रीमहालक्ष्मी के इतिवृत्त को ''सिरि को लुवु'' (श्री पद्मावती सन्निधि) शीर्षक इस ग्रंथ में संक्षिप्त चर्चा करेंगे। समीक्षा भी करेंगे। तद्वारा आनंदनिलय के स्वामी के हृदय पद्म में विराजित होनेवाली अलिमेलुमंगा की मधुर गाथाओं, दिव्य लीलाओं, महिमाओं को अपनी सामर्थ्य के अनुसार थोडा बहुत ही सही जानने की कोशिश करेंगे। उसी के अंतर्गत सर्वप्रथम ''श्रीमहालक्ष्मी'' के तत्व के रूप में, अवतार के वैशिष्ट्य को संक्षेप में विवेचित करेंगे। उस के बाद ही तिरुचानूर क्षेत्र के वैभव को, परम पवित्र पद्मसरोवर पुण्य कथाओं के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। यह सब जानकारी प्राप्त करने से पहले आदि दंपति अलमेलमु मंगा और स्वामी श्रीनिवास की हार्दिक प्रार्थना करेंगे -

नारायणस्य हृदये भवती यथास्ते
नाराणोऽपि तव हृत्कमले यथास्ते
नारायणस्त्वमपि नित्यमुभौ तदैव
तौ तिष्टातां हृदि ममापि दयावति श्रीः

माई! अलमेलुमंगा माई! आनंदनिलयवासी नारायण के हृदय में तू रहती है! तुम्हारे हृदय में पुरुषोत्तम स्वामी रहते हैं। तुम दोनों मिलकर मेरे हृदय में पूरी दया के साथ बस रहिए!

श्री लक्ष्मी वेंकटरमण गोविंदा!
गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!!

((((()))))

श्रीमहालक्ष्मी

'श्री' का मतलब संपदाएँ देनेवाली 'श्रीमहालक्ष्मी' हैं। परम पुरोषत्तम भगवान श्रीमन्नारायण की देवेरी श्रीमहालक्ष्मी हैं। महा सरस्वती, महाकाली, पार्वती...... ये सभी देवीरूप श्रीमहालक्ष्मी के रूप ही हैं दूसरे नहीं हैं, ऐसी मान्यता है। संपदाओं की माई के रूप में श्रीमहालक्ष्मी के लक्ष्मी, पद्मालया, पद्मा, कमला, श्रीहरिप्रिया, इंदिरा, लोकमाता, मा, क्षीरोतनया, रमा, भार्गवी, लोकजननी, क्षीरसागर कन्या आदि नाम प्रचलित हैं।

लक्ष्मी शब्द के लाभ, प्रयोजन, संपदा, वृद्धि, क्षेम, योग - - आदि अर्थ ऋग्वेद से ही प्राप्त होते हैं। इस शब्द का वर्णन भी ऋग्वेद में प्राप्त होता है। इन में से एक एक का अर्थ कितने विराट एवं विस्तृत रूप में किया जा सकता है, इसकी कल्पना भी नहीं सकते हैं।

'लक्ष्मा' का मतलब 'निशान' या चिह्न है। लक्ष्मा के रूप में भासित होने के कारण उस जगन्माई को 'लक्ष्मी' नाम प्राप्त हुआ है। कहाँ? किस के चिह्न के रूप में खडी हैं? यानी अव्यय के रूप में प्रकाशवान श्रीमन्नारायण की अव्याज्य 'दया' के लिए चिह्न के रूप में रही हैं। अनंत की अनंत करुणा के चिह्न के रूप में भासित हो रही हैं। सत्य व नित्य बनकर शाश्वत रूप से भासित होनेवाले अच्युत के आनंद के चिह्न के रूप में प्रकाशित हो रही हैं। साक्षात श्रीमहाविष्णु के वक्षस्थल पर 'श्रीवत्स' रूपी चिह्न के रूप में भासित होते हुए, उस स्वामी के अद्भुत, आश्चर्य, अमृत, अनंत, अप्रमेय दया गुण के लिए, क्षमा गुण के लिए, भक्त प्रियत्व के लिए शाश्वत प्रतीक के रूप में अनपायिनी के रूप में रहने के कारण वे जगन्माता '' लक्ष्मी '' के रूप में बहु कीर्ति प्राप्त कर रही हैं।

मातर्नमामि कमले! कमलायताक्षि!
श्री विष्णु हृत्कमलवासिनि! विश्वमातः!

इसलिए श्रीविष्णु भगवान के अनेक नामों में 'श्रीनिवास' नाम अतिप्रधान माना जाता है। अर्थात वे हृदय कमल में (वक्षस्थल में) 'श्री' यानी लक्ष्मी को धारण किए रहते हैं। इसलिए वे श्रीनिवास हो गए हैं।

श्रित्वाऽस्वन्यै स्सर्वैः श्रयसि रमणं संश्रितगिरः
शृणोषि प्रेयांसं श्रितजनवचः श्रावयसि च
श्रृणोष्येतद्दोषान् जननि निखिलान्, सर्वजगतीं
गुणैः श्रीणासि त्वं तदिह भवतीं श्रीरिति जगुः

सर्वोन्नत गुण संपन्न श्रीमहालक्ष्मी अत्यंत प्रधान छः लक्षणों से सदा भासित रहती हैं। सर्वलोकों, सर्वप्रदेशों, सर्वकालों एवं सर्व अवस्थाओं में सभी उस माँ के आश्रय में आते हैं। परम पुरुष श्रीमन्नारायण से नित्य आश्रित रहती हैं। आश्रित सभी भक्तों की प्रार्थनाओं, मनौतियों, विनतियों को पहले स्वयं सुनती हैं। सिर्फ स्वयं सुनना ही नहीं भक्तों, आश्रितों के द्वारा बतायी गयी बातों को अपने लिए अत्यंत प्रिय श्रीनिवास को धीरे धीरे, संयम के साथ सुनाती हैं। सुनाकर, उस स्वामी की स्वीकृति प्राप्त करके भक्तों पर अनुग्रह करती हैं। वात्सल्य से सद्यःजन्में अपने बछडे को जीभ से चाटनेवाली की गाय के समान साफ करके भक्तों एवं आश्रितों के सभी दोषों को दूर करती हैं। अपने गुणों से स्वयं प्रकाशित होने के साथ साथ पूरे जगत को प्रकाशित करके आनंद प्रदान करती हैं।

सर्वलोकाधिनेत्री, सर्वसंपत्संधात्री माई के रूप में श्रीमहालक्ष्मी 'चिच्छक्ति' के रूप में 'लक्ष्मी तंत्र' ग्रंथों में वर्णित हैं। अर्थात् परमोन्नत ज्ञान और ज्ञान तत्व ही श्रीमहालक्ष्मी हैं। उस के साथ साथ उस शक्ति को ही साक्षात परमब्रह्म के रूप में बताया गया है। 'चिच्छक्ति' रूपी श्री महालक्ष्मी को कुछ लोगों ने अनंत चैतन्य शक्ति के रूप में बताते हुए 'कुंडलनी शक्ति' के रूप में वर्णित किया है। यानी शाश्वत, सत्य, अनंत, परिपूर्ण आनंद तत्व ही श्रीमहाविष्णु की शक्ति है, उस शक्ति को ही ''श्रीमहालक्ष्मी'' कहा गया है। किंतु वह आनंद तत्व किसी दूसरे पर आधारित नहीं होता है। उसे 'निरपेक्ष आनंद' कहा जाता है। श्री महाविष्णु के संकल्प विकल्प रूप और भावानुभूति ही श्रीमहालक्ष्मी के रूप में, ''जगतया लक्ष्यमाणासा, लक्ष्मी रिति गीयते'' के रूप में अहिर्भुध्नय संहिता में साक्षात वह श्रीलक्ष्मी ही विश्व के रूप में, विश्व ही लक्ष्मी के रूप में साकार हुए हैं, ऐसा विवरण दिया गया है।

सूर्यस्य रश्मयो यद्वत् ऊर्मयश्चांबुधेरिव।
सर्वैश्वर्यप्रभावेन कमला श्रीपतेस्तथा।।

- जयाख्या संहिता

श्रीमहाविष्णु और श्रीमहालक्ष्मी के बीच के संबंध या अनुबंध सूर्य और सूर्य किरणों के, समुद्र और लहरों के बीच के संबंध के रूप में अलग नहीं कर सकनेवाले भी हैं।

परमोन्नत शक्ति स्वरूपा ही 'लक्ष्मी' हैं, ऐसा लक्ष्मी तंत्र ग्रंथ में बताया गया है। इसका मतलब लक्ष्मी तत्व यह है और वह इस रूप में रहता है, कहना संभव नहीं है।

सूर्य, चंद्र आदि अनेक ग्रह उपग्रह पूरे विश्व में बहुत सूक्ष्म अंतर या परिवर्तन के बिना परिभ्रमण करते रहते हैं। इन के अतिरिक्त और भी अनेक ग्रह, उपग्रह, तारे, उन लोकों के देवतागण, देवता-स्त्रीयाँ, अप्सरसाएँ, योगी, महात्मा, पुण्य स्त्री, ऐरावत, उच्चैश्रव, कामधेनु, सर्वलोकों की संपदाएँ, नवरत्न, धान, सभी प्रकार के पकवान, फल, गाय, हाथी, अश्व, आदि अनेकानेक विशिष्ट वस्तुओं में भरे निभिडीकृत तेजस, ओजस और वर्चस्व आदि सभी श्रीमहालक्ष्मी के तत्वों के रूप में ही वर्णित हैं।

यही नहीं, श्रीवैकुंठ में श्रीमन्नारायण के सान्निध्य में उन के वक्षस्थल पर अनपाइनी के रूप में श्रीमहालक्ष्मी विराजमान होकर प्रकाशित होते रहने के बावजूद अन्य लोकों में भी अन्य देवताओं को अपनी अपनी देवेरियों के रूप में भासित होती हैं।

कैलास में रुद्र के लिए 'रुद्रानी' के रूप में पार्वती, स्वर्ग में इंद्र देव की 'इंद्रानी' के रूप में शचीदेवी, सत्य लोक में ब्रह्मा के लिए 'ब्रह्माणी' के रूप में सरस्वती, अग्निदेव के लिए 'स्वाहा देवी' के रूप में - अलग अलग रूपों में श्रीमहालक्ष्मी ही रहती हैं, ऐसा मत्सपुराण स्पष्ट करता है।

इतना ही नहीं स्वर्ग लोक में स्वर्ग संपदा के रूप में, यानी 'शक्रसंपत्स्वरूपिणी' के रूप में, नाग लोक में 'नागलक्ष्मी' के रूप में, धरती के राजाधिराज, प्रभुआदि के पास उन के स्तरानुसार 'राज्यलक्ष्मी' के रूप में, प्रत्येक घर में गृह स्वामी के पास 'गृहलक्ष्मी' के रूप में और कई जगहों पर अनेक दिव्य वस्तुओं में श्रीमहालक्ष्मी प्रकाशित होती रहती हैं, ऐसा देवी भागवत तथा ब्रह्मवैवर्त पुराण आदि ग्रंथ स्पष्ट कर रहे हैं। इस से बढकर ----!

गृहलक्ष्मीर्गृहेष्वेव गृहिणां च कलांशतः।
संपत्स्वरूपा गृहिणां सर्वमंगलमंगला।।

भूलोक में प्रत्येक घर में गृहस्थों की 'गृहिणियाँ' रूपी पुण्य स्त्रियों के रूपों में, मालिकों के लिए संपदा के रूप में, घर के मंगलकर, पवित्र, शुभकर समस्त वस्तुओं में प्रवेशित हो कोई न कोई तेजोमय रूप में श्रीमहालक्ष्मी भासित होती हैं, ऐसा उपर्युक्त पुराण स्पष्ट कर रहे हैं।

समस्त चराचर विश्व को श्रीमहालक्ष्मी के ही स्वरूप मानते हुए अनेक पद्धतियों में अनेक जगहों पर लक्ष्मीदेवी का कीर्तन किया गया है। सर्वोन्नत व महाशक्ति स्वरूपिणी लक्ष्मीदेवी विशिष्ट पांच महाकार्यों को सर्वस्वतंत्र के रूप में संपन्न कर रही हैं। इन पांच कार्यों को ''कर्म पंचक'' कहते हैं।

तिरोभावस्तथा सृष्टिः स्थितिः संहृतिरेव च।
अनुग्रह इति प्रवीतं मदोयं कर्मपंचकम्।। - लक्ष्मीतंत्रम्

समस्त चराचर विश्व की १. सृष्टि-(Creation) सृजन करना, २. सृजित विश्व की, स्थिति (Preservation) को, यानी न केवल पोषण करना बल्कि उस पर भर पूर ३. अनुग्रह (Favour) दया दिखाना, फिर अपने द्वारा सृजित सृष्टि को ४. संहृति (Destruction) यानी नष्ट करना अंत में ५. तिरोभाव (Disfavour) यानी लय करना या अदृश्य करना, ये पांच 'कर्मपंचक' से संबंधित कार्य ही शक्ति स्वरूपिणी श्रीमहालक्ष्मी करती रहती हैं। इन पांच कार्यों को संपन्न करते समय श्रीमहालक्ष्मी अपनी पांच शक्तियों को संकल्पित करके कार्य करती हैं। इस प्रकार के कार्यक्रम करने के लिए, परमोन्नत इस शक्ति के लिए परब्रह्म स्वरूप भी

सहायता करते हैं। ये परब्रह्म स्वरूप ही साक्षात ''श्रीमहाविष्णु'' हैं। किंतु श्रीमहाविष्णु त्रिमूर्तियों में एक होकर लोकों का पोषण करनेवाले विष्णु दोनों एक नहीं हैं।

षाड्गुण्यविग्रहं देवं
तादृश्याच श्रिया युतम् - अहिर्बुध्न्यसंहिता

श्रीमहालक्ष्मी से संयुत परमोन्नत श्रीमहाविष्णु कहलानेवाली भगवद्विभूति (श्रीमन्नारायण) के अत्यंत प्रधान, शाश्वत एवं सत्यपूर्ण छः गुण हैं।

ज्ञान, ऐश्वर्य, शक्ति, बल, वीर्य, तेजस ही वे छः गुण हैं। ये अभिन्न होते हुए एक समझेजानेवाली श्रीमहालक्ष्मी और श्रीमहाविष्णु के आंतरिक गुण हैं। लेकिन ये सिर्फ बाह्य गुण ही नहीं हैं। परमोन्नत भगवद्विभूति के इन छः गुणों को दो वर्गों में रखा जा सकता है। वह भगवततत्व आराम करते समय यानी निश्शब्द, निरंजन, गंभीर एवं प्रशांत स्थिति में रहते समय ज्ञान, ऐश्वर्य तथा शक्ति नामक तीन गुणों के रूपों में प्रकाशित होते हैं। फिर क्रिया रूप में (यानी चर्या, Action) रहते समय यह महाशक्ति बल, वीर्य और तेजस नामक तीन तत्वों के रूप में भासित होती है, ऐसा कहा गया है।

इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति।
तदा तदावतीर्याहं हनिष्यामि महासुरान्।। - लक्ष्मीतंत्र

भूमंडल पर तीव्र दुष्ट शक्तियाँ बढकर, लोकों में बाधाएँ उपस्थित होने पर, उन का संहार करने के लिए, मैं स्वयं अवतार लेती रहती हूँ,

यह साक्षात श्रीमहालक्ष्मी ने कहा है, ऐसा लक्ष्मीतंत्र में उल्लेख मिलता है। इसलिए उन संदर्भों के अनुसार सर्वशक्ति संपन्न श्रीमहालक्ष्मी कई बार अनेक नामों से अवतरित हुई हैं, ऐसा पुराण, इतिहास, संहिताएँ आदि अनेक रूपों में स्पष्ट कर रही हैं। परमपुरुष श्रीमन्नारायण की अनंत शक्ति तत्व के रूप में समझी जानेवाली लक्ष्मी देवी, उन के वक्षस्थल पर नित्य अनपाइनी के रूप में हृदय लक्ष्मी बनकर रहती हैं।

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

के अनुसार, श्री महाविष्णु के अवतार लेने के प्रत्येक बार उस स्वामी की देवेरी के रूप में, पटराणी के रूप में श्रीमहालक्ष्मी के जन्म लेने के संदर्भ प्राप्त होते हैं। किंतु इन सभी संदर्भों में सिर्फ उस अवतार के समय ही, स्वामी की भागस्वामनी के रूप में लक्ष्मी देवी अवतरित होती हैं। यानी इन अवतारों के संदर्भ में श्रीमहालक्ष्मी को स्वयंप्रतिपत्ति या स्वतंत्रता नहीं होती है। स्वतंत्रता होने पर भी वह नहीं के बराबर हैं। लक्ष्मी देवी के अवतारों के बारे में जयाख्या संहिता, लक्ष्मीतंत्र, श्रीप्रश्न संहिता आदि ग्रंथों में बहुत स्पष्ट रूप में कहा गया है। श्री, कीर्ति, जया, माया नामक चार नामों से अलग अलग संदर्भों में श्रीमहालक्ष्मी अवतरित हुई हैं। किंतु ये ग्रंथ इतना ही स्पष्ट करते हैं कि ये चारों श्रीमहाविष्णु के अवतारों वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध रूपों की देवेरियाँ हैं।

इन के अतिरिक्त, श्रीमहालक्ष्मी देवी, श्री, कीर्ति, विजया, श्रद्धा, स्मृति, मेधा, ध्रुति, करुणा नामक आठ नामों से अलग अलग संदर्भों में आविर्भूत हुई हैं , ऐसा विहगेंद्र संहिता ग्रंथ में अत्यंत स्पष्ट किया गया है।

इस से बढकर, लक्ष्मी तंत्र ग्रंथ में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि श्रीमहालक्ष्मी ने (1) श्री (2) कामेश्वरी (3) कांती, (4) क्रिया (5) शक्ति (6) विभूति (7) इच्छा (8) प्रीति (9) रति (10) माया (11) धी (12) महिमा - नामक बारह अवतारों को विभिन्न संदर्भों में लिए हैं। किंतु वहाँ यह भी स्पष्ट किया गया है कि ये बारह अवतार, विष्णु भगवान के अवतार लेनेवाले विभिन्न संदर्भों में अवतरित शक्ति रूप ही हैं।

भगवान के अवतार से निरपेक्ष सिर्फ श्रीमहालक्ष्मी अकेली सर्वस्वतंत्र रूप में अवतार लेने के संदर्भ भी हैं, ऐसा उक्त संदर्भ में ही कहा गया है।

'लक्ष्मी तंत्र' नामक ग्रंथ में विशेष रूप से कहा गया है कि श्री महालक्ष्मी सर्व स्वतंत्रता के साथ, विशेष रूप से स्वयं व्यक्त मूर्ति के रूप में अवतरित संदर्भ भी हैं।

श्रीमहालक्ष्मी सत्व गूण के साथ श्रीमहालक्ष्मी के रूप में, रजोगुण से कृष्णा के रूप में, तमोगुण से ब्राह्मी के रूप में भिन्न भिन्न संदर्भों में अवतरित हई हैं। इस से बढकर 'देवी महात्म्यम्' नामक ग्रंथ में श्री महालक्ष्मी के नौ रूपों में अवतरित होने की बात कही गयी है। वे नौ रूप क्रम से इस प्रकार हैं -

1. महिषासुरमर्दिनी
2. योगींद्रा (महाकाली)
3. कौशिकी (महाविद्या)
4. सुनंदा (विंद्यावासिनी)

5. रक्तदंतिका
6. शाकंबरी (धान्य लक्ष्मी)
7. दुर्गा
8. भीमा
9. भ्रामरी

देवी भागवत में उल्लिखित इन नौ रूपों में प्रथम तीनों को, यानी महिषासुर मर्दिनी, योगींद्रा, कौशिकी नामक तीन अवतारों का 'लक्ष्मी तंत्र' ग्रंथ में उन्हीं नामों से उल्लेख किया गया है।

स्वयंभू मनु काल में श्रीमहालक्ष्मी ने महिषासुर मर्दिनी के रूप में अवतरित होकर महिषासुर का संहार किया है। उसी प्रकार मनुकाल में ही लक्ष्मीदेवी ने दूसरी बार योगींद्रा (महाकाली) के रूप में अवतरित होकर मधु और कौटभ नामक राक्षसों का संहार किया। एक और बार कौशिकी के रूप में अवतरित होकर शुंभ, निशुंभ नामक राक्षसों का संहार किया है।

शुंभ और निशुंभ के फिर उन्हीं नामों से पैदा होने पर, लक्ष्मी देवी ने सुनंदा के नाम से अवतरित होकर उन का संहार किया है। बाद में विंध्यवासिनी के रूप में प्रचलित लक्ष्मी 'रक्तदंतिका' नाम से अपने दांतों से कुछ और राक्षसों को काट कर संहार किया। राक्षसों के रक्त से लाल बने दांतों के कारण वे 'रक्त दंतिका' कहलायीं। अकाल की विपरीत परिस्थितियों में दया स्वरूपिणी, करुणातरंगिणी के रूप में माई ने धान्य लक्ष्मी के रूप में अवतरित होकर जगत की रक्षा करके फसलों के रूप में अन्न देकर पोषण किया।

श्री धान्यराज्ञी त्वां देवी
प्राणतंडुल संज्ञकः

धान्य राज्ञी और धान्य लक्ष्मी के रूप में प्रचलित 'लक्ष्मी देवी' ने देवी भागवत में अपने बारे में स्वयं बताया है -

ततोहमखिलं लोकं
आत्मदेहसमुद्भवैः
भरिष्यामि सुराः शाकैः
आवृष्टैः प्राणधारकैः
शाकंभरीति विख्यातिं
तदा यास्याम्यहं भुवि।

''समस्त जीवराशियों के आत्मदेहों की रक्षा करके पोषण के लिए कारणभूत तत्व फसल, सब्जियों के रूप में वर्षा के दिनों में अपने शरीर से ही उद्भूत करूँगी। इसलिए इस भूलोक में मैं ''शाकंभरी'' नामक सार्थक नाम से लोकप्रिय हो जाऊँगी, यही श्रीमहालक्ष्मी ने स्पष्ट किया था। 'शाकंभरी' स्वरूपिणी श्रीमहालक्ष्मी को ''गौरी देवी'' नाम से भी पुकारते हैं। अर्थात् हरियाली के बीच संपन्न फसल 'गौर' वर्ण में रहती है। गौर वर्ण का मतलब लाल रंग से मिश्रित पीला रंग है। गौरी देवी के रूप में प्रचलित शाकंभरी का अवतरण काल मार्गशीर्ष शुद्ध पंचमी है। उस दिन 'श्रीपंचमी' के नाम से त्योहार भी मनाते हैं।

उस जगन्माई ने ही बाद में दुर्गा माई के रूप में अवतरित होकर 'दुर्ग' नामक राक्षस का संहार किया। फिर उस देवी ने दूसरी बार 'भीमा' नाम से अवतरित होकर हिमालयों में भीभत्स सृजन करनेवाले कुछ

राक्षसों का संहार किया। तदुपरांत 'अरुण' नामक एक राक्षस पैदा होकर लोगों को दुख पहुँचाते हुए लोककंटक बन गया। तब श्रीमहालक्ष्मी ने 'भ्रामरी' के रूप में अवतरित होकर (यानी काले रंग की तितलियों के रूप में जन्म लेकर) अरुण का संहार किया। वे ही श्रीशैल भ्रमरांबिका हैं।

इससे बढकर कृत युग में एक बार अत्री और अनसूया दंपतियों को त्रिमूर्तियों के ब्रह्म, विष्णु, महेश्वर तीनों के अंश से एकरूपी 'दत्तात्रेय स्वामी' पैदा हुए। परम गुरु तत्व के लिए प्रसिद्ध दत्तात्रेय स्वामी ने अनेक अन्य संदर्भों में अन्य अवतार भी लिए। उन में एक बार स्वामी 'अनघा स्वामी' के रूप में अवतरित हुए। उस स्वामी के साथ उस स्वामी की पत्नी के रूप में श्रीमहालक्ष्मी देवी ' अनघा देवी' नाम से अवतरित हुईं। अनघा देवी स्वरूपिणी श्रीमहालक्ष्मी ने जंभासुर नामक राक्षस के संहार में सहयोग देकर इंद्रादि देवताओं को विजय दिलायी।

एक बार फिर भृगु महर्षि की परीक्षा के कारण रूठ कर श्री महालक्ष्मी वैकुंठ छोडकर भूलोक के कोल्हापुर क्षेत्र में कोल्हासुर, करवीर नामक राक्षसों का संहार करके कोल्हापुर निवासिनी और करवीरनिवासिनी के रूप में लोकप्रिय हो गयीं। उस क्षेत्र में आज भी साक्षात श्री महालक्ष्मी के रूप में पूजा-वंदना प्राप्त कर रही हैं। तदुपरांत श्रीवैकुंठ से उस महालक्ष्मी को ढूँढते हुए भूलोक पहुँचनेवाले श्रीमहाविष्णु 'वेंकटेश्वर' के रूप में वेंकटाचल क्षेत्र में बस गए। श्रीवेंकटेश्वर ने श्री महालक्ष्मी के अनुग्रह के लिए कोल्हापुर में दस वर्षो तक कठोर तप किया। तब दैववाणी के कहने पर श्रीवेंकटेश्वर के स्वर्णमुखी नदी के तट पर

पद्मसरोवर के पास बारह वर्ष तप करने पर, श्रीमहालक्ष्मी पद्मसरोवर से सहस्र दलसुवर्ण पद्म से अलमेलु मंगम्मा और पद्मावती नामों से अवतरित हुईं। उन्होंने बाद में श्रीवेंकटेश्वर को प्राप्त करके श्री स्वामी को सुसंपन्न किया।

इन से भिन्न पूर्व कालों में श्रीमहालक्ष्मी के अनेक बार विभिन्न संदर्भों में अनेक अन्य अवतार लेने का उल्लेख कई जगहों पर हैं।

एक बार भृगु महर्षि की प्रार्थना पर , उस महर्षि की पुत्री के रूप में, उन की पत्नी 'ख्याति' से श्रीमहालक्ष्मी 'भार्गवि' के रूप में अवतरित हुईं।

एक और बार दुर्वास मुनि के श्रीमहालक्ष्मी के पास जाने के संदर्भ में, माता ने महर्षि का अपहास करके अपमानित किया है। इस से उस मुनि ने कुपित होकर उन्हें समुद्र में गिर जाने का शाप दिया। माई ने पश्चाताप से शरण मांगी तो समुद्र में गिरने के बाद सागर मंथन के समय अविर्भूत होकर फिर से श्रीमहाविष्णु को प्राप्त करोगी, ऐसा शाप विमोचन भी बताया। इस कारण श्रीमहालक्ष्मी ने समुद्र कन्या के रूप में, चंद्र सहोदरी के रूप में, सागर पुत्री के रूप में आविर्भूत होकर श्री महाविष्णु को प्राप्त किया।

एक और बार श्रीमहाविष्णु ने विषेश कारणों से हयग्रीव स्वामी के रूप में अवतार लिया। उस समय श्रीमहालक्ष्मी घोडी के रूप में अवतरित होकर हयग्रीव स्वामी से हैहयु नामक पुत्र को प्राप्त किया।

श्रीमहाविष्णु भगवान ने मत्स्यावतार के बाद श्रीवेदनारायण कहलाये। उन की देवेरी के रूप में श्रीमहालक्ष्मी उसी नाम से अवतरित हुईं।

कूर्मावतार के समय 'कूर्मवल्लि' के रूप में, वराहवतार के समय 'भूमहालक्ष्मी' के रूप में, नरसिंहावतार के समय में श्रीमहालक्ष्मी (चेंचुलक्ष्मी) के रूप में, रामावतार में ''श्रीसीतामहालक्ष्मी'' के रूप में, कृष्णावतार में ''रुक्मिणी'' के रूप में श्रीमहालक्ष्मी अवतरित हुई हैं।

इन से अलग भक्तों की कामनाओं के अनुसार भी उस जगन्माई ने, उन की इच्छा के अनुसार अष्टरूपों में आठ नामों से यथा गजलक्ष्मी, धनलक्ष्मी, धान्य लक्ष्मी, धैर्य लक्ष्मी, संतान लक्ष्मी, विद्या लक्ष्मी, आदिलक्ष्मी, विजय लक्ष्मी के रूप में दर्शन देकर उन्हें अपने वरदानों से अनुग्रहीत किया है।

तिरुचानूर श्रीक्षेत्र की महिमा को, दिव्य गाथा को ''सिरि कोलुवु'' (श्री पद्मावती सन्निधि) ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रथमतः आदि वराह स्वामी के अवतार के लिए कारणभूत ''भू महालक्ष्मी'' गाथा, बाद में श्रीवैकुंठ को छोडकर भू लोक में श्री वेंकटेश्वर के अवतरण के लिए कारक बननेवाली श्रीमहालक्ष्मी गाथा वर्णित हैं। वे ही तिरुमल श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में, तिरुचानूर में अलमेलु मंगा के रूप में, संपदाओं की माई के रूप में विराजित हैं। दिव्य क्षेत्र तिरुचानूर का वैभव पूर्ण विवरण आगे प्राप्त करेंगे।

श्री लक्ष्मी वेंकटरमण गोविंदा!
गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!

((((()))))

पद्मसरोवर की महिमा

पूर्व काल में भरत खंड में अतिप्रचलित छप्पन राज्य हुआ करते थे। उन में कांभोज देश एक है। माना जाता है कि कभी कांभोज नामक एक राजा ने उस पर शासन किया था। इसलिए उस का नाम 'कांभोज देश' पडा है। उस देश का पुराना नाम पूरी तरह भुला दिया गया है। समय के साथ जनता भी उस के पुराने नाम को भूल गयी। वर्तमान में उस देश के पुराने नाम के बारे में जाननेवाला एक भी नहीं है, इस में कोई अत्युक्ति नहीं है। अब हम उसी नाम से उस की कथा जानेंगे।

कांबोज राज्य धन-धान्य के लिए प्रसिद्ध था। वह चौंसठ कलाओं के लिए भी निलय था। भुज बल संपन्न वीरों के लिए जगतविदित था। राजस और दर्प से जीनेवालों के लिए कांभोज राज लोकप्रिय था। इस राज्य का प्रत्येक नागरिक न केवल युद्ध क्षेत्र में बल्कि कवन के क्षेत्र में भी गर्व का अधिकारी था। प्रत्येक नारी वीर पत्नी ही थी। वीर माता के रूप में भी इस राज्य में प्रत्येक नारी पूजा प्राप्त करती थी। प्रत्येक के घर में धान की ढेर के साथ साथ रत्नों की ढेर भी हुआ करती थी। प्रत्येक आंगन अष्टैश्वर्य से भरा रहता। इस रूप में प्रत्येक आंगन श्रीमहालक्ष्मी का सन्निधान जैसे दिखता था। प्रत्येक घर की सुहागिन स्त्रियाँ शरीर भर मंगलकारी सोने के गहने, हलदी-कुंकुम, फूलादि धारण करके चलनेवाली महालक्ष्मी के रूप में दिखाई देती थीं। प्रत्येक घर मानो वैकुंठ जैसा लग कर आश्चर्य में डालता था।

इस तरह सुसंपन्न उस कांभोज राज्य पर एक समय शंकण नामक राजा शासन करता था। शंकण जितने शौर्य वीर थे उतने ही भोला शंकर

थे। पिता समान सभी को अपने आश्रय में रखते थे। प्रत्येक व्यक्ति की बातों को बडी सहनशीलता से सुनते थे। सुनना ही नहीं उन पर विश्वास भी करते थे। विश्वास भी इतना उतना नहीं। सभी माँगों की पूर्ति करते थे। दान धर्म के बारे में कहना ही क्या? उन की कोई सीमा नहीं थी। इस तरह प्रत्येक पर विश्वास करना, सारी बातों पर विश्वास करना, माँगनेवाले सभी को माँग के अनुसार दे देना उस शंकण महाराज की जन्मजात कमजोरी थी। ऐसी कमजोरी रखनेवाले महाराज को कभी भी, कहीं भी, कोई भी अत्यंत सुलभ ढंग से धोखा दे सकता है न! धोखा भी किया गया। शंखण राज ने भी शत्रुओं के हाथों में धोखा खाया। मित्रों के रूप में नाटक करनेवाले शत्रुओं के द्वारा धोखा खाना ही नहीं आखिर राज्य को तथा शासनाधिकार को भी खोया। यही लोक सहज है। जरूरत से ज्यादा किसी पर विश्वास नहीं करना चाहिए। विश्वास करनेवालों को धोखा देना इस लोक का सबसे बुरा लक्षण है। धर्माधर्म, न्याय और अन्याय किसी भी रूप में होने पर भी विश्वास करनेवालों को धोखा मिलना सहज है।

सर पर धरकर पूजा करनेवाली जनता ने ही अचानक उस राजा की दीन स्थिति को देख कर दया करने लगी। दुख भी अनुभव किया। बेचारे! इस से बढकर वे लोग कर भी क्या सकते थे!

राज्य खोनेवाले शंकण राज खाली हाथों रह गया। उसने अपनी बुद्धिहीनता पर चिंता की। शायद समय के निकलने के बाद सोचना इसी को कहते हैं! अपनी पत्नी के साथ कई कष्ट झेलते हुए देश-विदेश घूमते घुमक्कड बने। पेट भरने के लिए असमर्थ, आवासहीन, कंगाल हो वन जंगलों में घूमते फिरते रहे।

अपने आप को कोसने लगते। अपनी दुर्गति के लिए अपने आप को दोष देते रहे। दीर्घ चिंता छोडते उसांस हो गये। निराशा और दिशाहीनता के शिकार हो जाते। संयम से एक जगह बैठ नहीं पाते। अशांति से सो भी नहीं पाते। रात दिन एक करके घूमने फिरने वाले शंकण ने आखिर एक निर्णय लिया। सोचा -

''मैं सार्वभौम सम्राट था! कितना बडा था। मेरे साथ क्या हो गया। ऐसी स्थिति को मैं बिलुकल बरदाश्त नहीं कर सकता।'' सोचते सोचते उसने अपनी पत्नी से कहा - '' इस पापी लोक में हीनातिहीन स्थिति में जीने की जगह हम दोनों को एक साथ मन बनाकर प्राण त्याग करना ही उच्ति है।'' इन बातों को सुन कर शंकण की पत्नी चकित रह गयी। अपने पति पर उसे दया आ गयी। मेरा पति किस प्रकार का था। उसे क्या हो गया। इस रूप में प्राण त्याग की बात कर रहा है। उसे बहुत दुख हुआ। ''स्वामी! भगवान! श्रीमन्नारायण! तुम हो क्या! अगर तुम हो तो मेरे पति के प्राणों की रक्षा करो स्वामी!'' कहते हुए सिसक सिसक कर रोने लगी। अपने गले के मंगलसूत्र को अपनी दोनों आँखों पर लगाती हुई ''माई! जगन्माई! कम से कम तुम मेरे सुहाग की रक्षा करो माई! मुझे पति की भिक्षा दो!'' कहती हुई मंगल गौरी की पूजा की। आर्ति बनकर प्रार्थना की।

उस राजा दंपति ने कभी, शायद थोडा पुण्य किया था। ठीक उसी समय उस तरफ से गुजरनेवाले कुछ ऋषिगण उन्हें मिले। वे सभी साधु-संत थे। सभी कई सौ वर्षों की आयुवाले थे। लंबी लंबी दाढियाँ, जटाएँ, लंबे लंबे बाल, हाथों में दंड-कमंडल, भगवन्नाम स्मरण करते हुए जा रहे

थे। उन के शरीर में कहीँ मांस-पेंशियाँ नहीं थीं, सूखी हड्डियाँ ही दिखाई पड रही थीं, फिर भी उन के चेहरे दिव्य कांति से चमक रहे थे। उन की आंखें तो आग के गोलों की तरह चमक रही थीं। उनके धीरे धीरे चलने पर भी ऐसा लग रहा था कि वे दौड रहे हैं। वे कहाँ से आ रहे हैं? और कहाँ जा रहे हैं? उन में जरा भी थकावट का पता नहीं था।

बस! राजा दंपति आर्ती बनकर दौड पडी। उन योगियों के पैरों पर गिरी। ''अन्यथा शरणं नास्ति! त्वमेव शरणं मम!'' कहती हुई शरण माँगी। अपनी दीन गाथा उन्हें सुनायी।

मुनीश्वरों ने अपनी तपःशक्ति से राज दंपतियों को निशित दृष्टि से देखकर उन के भूत भविष्यत एवं कर्म प्रारब्ध प्रभावों के बारे में निरीक्षण किया। आखिर उन से कहा -

''हे! राज दंपती! वर्तमान में आप की ग्रह दशा ठीक नहीं है। इसलिए आप को कष्ट संप्राप्त हुए। फिर भी चिंता करने की कोई बात नहीं है। कष्ट कई सालों तक नहीं रहते। आप धैर्य के साथ रहिए। कष्ट काल में इस रूप में दुख अनुभव करते हुए जंगल, पहाड घूमते हुए समय को बरबाद मत कीजिए। जिन के बारे में सोचा है फिर से उन के बारे में दुबारा मत सोचिए। ग्रह संचार ठीक नहीं रहते समय तथा कष्ट आने पर पुण्य क्षेत्रों की यात्रा करना अच्छा है। पवित्र तीर्थों में डुबकी लगाइए। उन देवताओं की पूजा कीजिए। उस से आप की भलाई होगी। शीघ्र ही आप के कष्ट दूर हो जाएँगे। आप के पापों का नाश हो जाएगा। फिर से अच्छी घडियाँ लौट आयेंगी। इसलिए किसी भी प्रकार की देर न करते हुए पुण्य क्षेत्रों में डुबकी लगाते हुए दिव्य क्षेत्रों के दर्शन

कीजिए। भगवान श्रीहरि की उपासना कीजिए! शीघ्र ही आप का राज्य आप को मिल जाएगा। फिर राज भोग आप को प्राप्त होंगे।'' कहते हुए आशीर्वाद देकर ऋषि अपने रास्ते चले गए।

आपदाओं के समय महनीयों के दर्शन से, उन से बात करने से, उन के पवित्र स्पर्श से कई प्रकार के पाप दूर हो जाते हैं। साथ ही भलाई भी होती है। अपने पुण्य के कारण आप को तपःसंपन्न मुनियों के दर्शन हुए। उन की सुझाव एवं उपदेश से, उन के दर्शन से अपने मन का भार दूर हो गया। यह पुण्य का ही फल है। उन महनीयों की सुझाव के अनुसार भूख के समय, थकान के समय, कष्टों के समय, कलंकित कहलाने के समय, दूसरों के हाथों में धोखा खाने के समय हरिनाम ही एक मात्र उपाय है! दूसरा कोई उपाय ही नहीं! आपदा के समय, कष्ट के समय, पाप के समय, भय खाते समय, अपनी सीमाओं में हरि नाम जप ही उपाय है। दूसरे रूप में कुछ भी करने से कोई फायदा नहीं है। जेल में रहते समय, खून करने बुलाते समय, ब्याजवालों के पीछे पडते समय हरिनाम जपना ही एक मात्र उपाय है। अन्य प्रयत्न से कोई प्रयोजन नहीं होगा। ऐसा ही सोचकर शंकण अपनी पत्नी के साथ यात्राओं पर निकले।

दक्षिण के राज्यों में सब से मुख्य क्षेत्र श्रीरंगम है। कावेरी नदी के तट पर सहस्त्रफणी आदिशेष पर शेषशायी के रूप में तरंगयुक्त सुंदर दर्शन देनेवाले रंगनाथ स्वामी के नेत्रपर्व रूप से दर्शन करके, अपने हाथों से उन की सेवा की राज दंपति ने। उस के बगल में ही जंबुकेश्वर का कावेरी जल से भक्ति के साथ अभिषेक किया। वहाँ से सीधे मधुरा के

मिनाक्षी-सुंदरेश्वर के नयानंद दर्शन किए। उधर से आगे बढकर सागर के तट पर स्थित रामेश्वर क्षेत्र पहुँच गए। उस क्षेत्र के अधिदेव रामेश्वर का सागर के जल से अभिषेक करके उस राज दपंति ने अनिर्वचनीय दिव्यानुभूति को प्राप्त किया।

रामेश्वरम् से 'सप्तैते मोक्षदाइका'' कहे जानेवाले सप्त नगरों में एक कांचीनगर पहुँच गए। कंचि में वरदराज स्वामी के मन भर दर्शन किए। वहाँ उस क्षेत्र में भक्त वशंकर के रूप में बसे एकाम्रनाथ से, कंचि कामाक्षी देवी से अपने को बचाने की विनति की। इस तरह विविध पुण्य तीर्थों के दर्शन करते, उन दिव्य क्षेत्रों में बसे देवी-देवताओं की पूजा करते आखिर वे वेंकटाचल पर्वत शिखरों के समीप पहुँच गए।

वहाँ समीप में कल कल बहनेवाली पवित्र सुवर्णमुखी नदी में भक्ति-श्रद्धा के साथ अपने नाम - गोत्रादि संकल्प सहित पुण्य स्नान किए। फिर ज्ञान प्रसूनांबा समेत श्रीकालहस्तीश्वर स्वामी के दर्शन किए। उस क्षेत्र पर शंकण के पास एक महात्मा ने आकर कहा -

''हे राजा शिखामणी! यहाँ से अतिसमीप ही इस सुवर्णमुखी नदी के तट पर ही साक्षात श्रीमहालक्ष्मी पद्मसरोवर में आविर्भूत हुई हैं। अति पवित्र उस दिव्य सरोवर में पद्म विकसित रहते हैं। इसलिए उस का नाम ''पद्मसरोवर'' पडा है। उस सरोवर में प्रातः काल में साक्षात श्री वेंकटेश्वर की प्रार्थना पर श्रीमहालक्ष्मी सहस्र दलोंवाले सोने के कमल में से आविर्भूत हुई हैं। इसलिए वह माँ पद्मावती के रूप में, अलमेलु मंगम्मा के रूप में भक्तों से पुजी जा रही हैं। आनंद निलय वासी भगवान श्रीवेंकटेश्वर का स्वरूप ही अलमेलु मंगा है। उस भगवान के करुण तत्व

ही रूप धारण करके माताओं की माता अलमेलु मंगा के रूप में दर्शन दे रही हैं। वात्सल्यादि गुणों से प्रकाशित उस जगन्माई की नित्य ब्रह्मादि देवतागण, सूर्यचंद्रादि नवग्रह, देवतागण निरंतर सेवा करते रहते हैं। इसलिए अब किसी भी प्रकार की देर न करते हुए तुम दोनों दंपति उस पद्मसरोवर के लिए निकलिए। उस में भक्ति के साथ संकल्पपूर्वक स्नान कीजिए। आप के पाप पूरी तरह मिट जाएँगे। आप की भलाई होगी। आप के लिए सभी अच्छाइयाँ होंगी।'' कहते आशीर्वाद दे कर चले गये।

उस दिव्य पुरुष की बातें सुनकर शंकण महाराज आश्चर्यचकित हो गए। आनंद परवश होकर शीघ्र ही उन के कहने के अनुसार पद्मसरोवर को ढूँढते निकले।

श्रीकालहस्तीश्वर क्षेत्र के समीप सुवर्णमुखी नदी के उत्तर तट पर स्थित पद्म सरोवर पहुँच गए। वह पुण्य सरोवर पद्मों से भरा था। वह दृश्य गुंजार करते भ्रमरों से, मधुमक्खियों से और शोभायमान लग रहा था। निर्मल, स्वच्छ एवं मनोहर जल में उछलनेवाले जलचरों से आह्लाद मय था। वह सरोवर न केवल आह्लाद दे रहा था बल्कि आनंद प्रदान कर रहा था। वह सात पहाडों के देवता श्रीवेंकटेश्वर के द्वारा स्वयं निर्मित पवित्र पुष्करिणी थी।

उस सरोवर की चारों तरफ मनोहर सुगंधित पुष्प वन, सभी ऋतुओं में पुष्पित पल्लवित होनेवाले फलों के वृक्ष थे। वनों में स्वेच्छा के साथ संचरित करनेवाले जंगली जानवरों की आवाजें, पक्षियों के कलरव से वह पूरा प्रदेश अतिमनोहर लग रहा था। उस की रमणीयता अद्वितीय है।

उस सरोवर का सौंदर्य अवर्णनीय है। मंद मंद शीतल हवाएँ, सरोवर की लहरों पर तैरनेवाले पक्षिगण सरोवर की शोभा को और बढा रहे थे।

माना जाता है कि इसी सरोवर के तट पर श्रीवेंकटेश्वर ने महालक्ष्मी मंत्र जपते हुए बारह वर्ष तप किया। कार्तिक शुक्ल पंचमी शुक्र वार के दिन उत्तराषाढ नक्षत्रयुक्त अभिजित लग्न में श्रीमहालक्ष्मी इस सरोवर में अवतरित हुई। इसलिए यह पद्मसरोवर, स्वामी जी का तप स्थल, अत्यंत पवित्र है। इस का दर्शन करनेवाले लोगों के पापों को मिटाकर उन्हें पुण्यात्मा बना रही है। उस सरोवर को देखकर शंकण महाराज दंपति ने अत्यंत आनंद का अनुभव किया। देखकर दोनों ने भक्ति भाव से हाथ जोडे। साष्टांग नमन किया। उस के जलों का स्पर्श करते हुए आंखों लगाया। अपने सरों पर तीर्थ जल चिढककर अपनी थकान को दूर किया। उतरकर स्नान के लिए पद्मसरोवर से अनुमति माँगी। संकल्प पूर्वक, अपने नाम गोत्रादि बतलाकर, उस पुण्य तीर्थ जलों में स्नान किया।

यह बहु पवित्र सरोवर है न! इस में अवतरित श्री महालक्ष्मी को अलमेलु मंगा के रूप में भक्ति से ध्यान किया। उस सरोवर के तट पर अर्चा मूर्ति के रूप में विराजमान अलमेलुमंगा की अर्चना करके आंखें मूँद बैठकर माई की प्रार्थना की।

वंदे लक्ष्मीं परशिवमयीं सर्वभूतांतरस्थाम्
तेजोरूपां कनकवसनां सर्वभूषोज्ज्वलांगीम्
बीजापूरं कनककलशं हेमपद्मं दधानाम्
आद्यां शक्तिं सकलजननीं विष्णुवामांकसंस्थाम्!

- अथर्ववेदांतर्गत श्री लक्ष्मीहृदयम्

हे माई! दिव्य मंगल रूप से विराजमान हे महालक्ष्मी! तुम अतंर्यामी बनकर समस्त प्राणियों में विराजमान रहती हो न! सर्वलोकों में दिव्य तेज से भासित रहनेवाली हो न! अतुलनीय, अमूल्य सुवर्ण वस्त्रों को धारण करके, अनेक प्रकार के आभरण धारण करके, सुंदरता के साथ और आनंद के साथ दर्शन देती रहती हो न! माई! पवित्र 'ओम्' कारादि के बीजाक्षरों में परिपूर्ण रूप से निक्षिप्त होकर प्रकाशित होनेवाली महालक्ष्मी भी तुम ही हो न!

भरे कलश की तरह, स्वर्ण पद्मों को हाथ में धारण करके, श्री महाविष्णु के वाम भाग में आसीन हो सकल जनों को मन भर और पूर्ण रूप में अनुग्रह करती हुई रहनेवाली आदिशक्ति हे सर्वजननी माँ! हे महालक्ष्मी! तुम्हें नमस्कार! हमें आप के दर्शन लाभ दीजिए माँ!

दारिद्रयदुःखौघ तमोपहंत्रि!
त्वत्पादपद्मं मयि सन्निधत्स्व।
दीनार्तिविच्छेदन हेतुभूतैः
कृपाकटाक्षैरभिषिंच मां श्रीः।।

- श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्ववेद)

हे लोक जननी! दारिद्रय का दुख, पापांधकार को दूर करनेवाली माई तुम ही हो! हे माई तुम्हारे दिव्य पाद पद्म की दया मुझे प्रदान करो। दीन, दुखियों के आर्तनादों को, बाधाओं को दूर करने के लिए कारणभूत तुम्हारी कृपा-कटाक्षों से हमारा अभिषेक कर पुनीत बनाओ माई !

अंब! प्रसीद करूणासुदयार्द्रदृष्ट्या
मां तत् कृपाद्रविण गेहमिमं कुरुष्व

आलोकय प्रणतहृद्गतशोकहंत्री!
त्वत्पादपद्मयुगलं प्रणमाम्यहं श्रीः
-श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्ववेद)

माई! अत्यंत दया भरी आँखों से करुणामृत को मुझ पर बरसाओं माई! तुम्हारे आश्रय में आये लोगों के, तुम्हारी शरण में आये लोगों के हृदयगत शोकों को और दुखों को अत्यंत सरल रूप से दूर कर सकनेवाले तुम्हारे पाद-पद्मों पर मैं प्रणत हूँ। तुम मुझ पर पूरी तरह प्रसन्न होकर संपूर्ण रूप से मुझे अनुग्रह प्रदान करो माँ!

सुतीव्रदारिद्र्यविदुःखहंत्र्यै
नमोस्तु ते सर्वभयापहंत्र्यै
श्रीविष्णुवक्षःस्थलसंस्थितायै
नमो नमः सर्वविभूतिदाय्यै।।
- श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्ववेद)

माई! श्री महालक्ष्मी! किसी भी रूप में असहनीय दारिद्र दुखों को, सर्व भयों को भी क्षण में दूर कर सकनेवाली शक्ति सिर्फ तुम्हीं को है। ऐसी तुम्हें सदा नमस्कार हैं। श्री महाविष्णु के वक्षस्थल पर विराजमान होकर भक्तों को समस्त ऐश्वर्य प्रदान करनेवाली माई तुम ही हो। सर झुकाकर तुम्हें नमस्कार करता हूँ। शीघ्र दर्शन देकर मेरा जीवन धन्य बनाओं माई!

अज्ञानतिमिरं हंतुं
शुद्धज्ञानप्रकाशिका

सर्वैश्वर्यप्रदा मेऽस्तु
त्वत्कला मयि संस्थिता।।
- श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्ववेद)

हे! जगदेकमाता! अज्ञानरूपी अंधकार को दूर करनेवाले शुद्ध ज्ञान मयी प्रकाशिनी भी तुम ही हो! उस अनंत तुम्हारे तेज में से एक कला ही सही मुझे दे दो माई! उससे सर्व विध एवं समस्त ऐश्वर्य प्रदान करके मुझ पर पूरी तरह अनुग्रह करके दर्शन दो माँ!

अलक्ष्मीं हरतु क्षिप्रम्
तमः सूर्यप्रभा यथा
वितनोतु मम श्रेय -
स्त्वत्कला मयि संस्थिता।
- श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्ववेद)

अनंत सूर्य प्रभाएँ गहन अंधकार को दूर करने की तरह मुझ पर अनुग्रह करके तुम्हारी एक मात्र कला को मुझ में प्रवेश करवाकर मेरी दारिद्रता को दूर करके समस्त शुभ प्रदान करो।

इस रूप में शंकण महाराज ने पत्नी समेत पद्मसरोवर के तट पर ध्यान मग्न होकर, सुवर्ण कमल में प्रकाशित होकर अवतरित हुई श्री महालक्ष्मी का स्मरण करते हुए अनेक प्रकार से प्रार्थना की। राजा को ध्यान में उस पद्मसरोवर में ही सहस्र दल पद्म में अवतरित उसी रूप में ही जगज्ञननी ने दर्शन दिया। तुरंत राजा ने अपने दोनों हाथों को जोडकर जय जयगान करते हुए कीर्तन किया -

जयतु जयतु लक्ष्मीर्लक्षणालंकृतांगी
जयतु जयतु पद्मा पद्मसद्माभिवंद्या
जयतु जयतु विद्या विष्णुवामांकसंस्था
जयतु जयतु सम्यक् सर्वसंपत्करी श्रीः!
- श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्ववेद)

सर्व शुभ लक्षणों से शोभित अंगोंवाली श्रीमहालक्ष्मी की जय हो,जय हो! पद्म संभव चतुर्मुख ब्रह्मा के द्वारा प्रणाम ग्रहणकरनेवाली पद्मावती की नित्य जय हो! जय हो! श्रीवैकुंठवासी श्रीमहाविष्णु की वामांक में शोभित ''विद्या'' नाम से प्रचलित माई की जय हो! नित्य, सत्य, अखिल संपदाओं को प्रदान कर सकनेवाली हे श्रीमहालक्ष्मी! तुम्हारी जय हो! नित्य तुम्हारी जय हो!

जयतु जयतु देवी देवसंघाभिपूज्या!
जयतु जयतु भद्रा भार्गवी भाग्यरूपा!
जयतु जयतु नित्या! निर्मलज्ञानवेद्या!
जयतु जयतु सत्या सर्वभूतांतरस्था!
- श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्ववेद)

देव संघों की ओर से निरंतर पूजित देव देवी की जय हो! 'भद्रा' कह कर पुकारी जानेवाली भृगु पुत्रिका लक्ष्मीदेवी की नित्य जय हो! 'नित्या' कहकर पुकारी जानेवाली निर्मल ज्ञान वेद मूर्ति श्रीमहालक्ष्मी! तुम्हारी जय हो! तुम्हारी जय हो! सत्य स्वरूपिणी, सर्वभूतों में निभिडीकृत रहकर प्रकाशित होनेवाली 'सत्यादेवी' तुम्हारी नित्य जय हो! जय हो!

जयतु जयतु रम्या रत्नगर्भांतरस्था!
जयतु जयतु शुद्धा शुध्द जांबूनदाभा!
जयतु जयतु कांता! कांतिमद्भासितांगी!
जयतु जयतु शांता शीघ्रमागच्छ सौम्ये!
- श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्ववेद)

निश्चल ध्यान में लीन शंकण ने अस्पष्ट रूप से दर्शन देनेवाली श्री महालक्ष्मी की अनेक रूपों में स्तुति की है। वह राजा भी तो मानव ही है न। उस जगन्माता अलमेलुमंगा की स्तुति कितनी कर सकता है। किस रूप में स्तुति कर सकता है? स्तुति के लिए बातें न होकर - शब्द न मिलकर आश्चर्यचकित हो गया। आखिर मौन हो गया। मौन उस सम्राट पर नींद की नशा चढ गयी। उस अस्पष्ट नींद में उसे एक सपना आया। उस स्वप्न में एक दिव्य, अद्भुत, आश्चर्यकारी और आनंदमय एक सुंदर दृश्य दिखाई दिया।

उस में ही एक महात्मा ने शंकण के पास आकर कहा -

''राजा! पद्मसरोवर के दर्शन पाने के कारण, उस पवित्र सरोवर के जल में स्नान करने के कारण, माई के दर्शन करके पूजा करने के कारण आप के सभी पाप मिट गए हैं। इस से आप के कष्ट भी समाप्त हो गए। हे राज शिखामणी! श्रीमहालक्ष्मी का अवतारी रूपा अलमेलु मंगा के दर्शन का सौभाग्य आपको प्राप्त हुआ है न! उस माई के दर्शन से आपके सभी पाप महाकालाग्नि में गिरी रूई की कंडियों की तरह जल कर भस्म हो गए। सोने की तरह आप दिव्य तेज से प्रकाशवान दिखाई दे रहे हैं।

परम पवित्र आप दंपति मेरा अनुसरण करते हुए मेरे साथ आइए'', कहते हुए उस राज दंपतियों को बुलाकर अपने साथ ले गये।

रास्ते में उन्हें पहाड, चट्टानें, घाटियाँ, पर्वत शिखर, उन शिखरों पर से तेज गति से गिरनेवाली झरनें, घाटियों में कल कल बहनेवाली झरने, यहाँ वहाँ निश्चल गति से प्रवाहमान, सरोवर, तीर्थ, गुफाएँ, उन गुफाओं में तप करनेवाले योगी - इस प्रकार के अनेक अद्भुत दृश्य दिखाई पडे।

''हे महानुभाव! आप कौन हैं हमें मालूम नहीं है। हम कहाँ जा रहे हैं। हमें कहाँ ले जा रहे हैं। ये पहाड क्या हैं! ये घाटियाँ कौन सी हैं!''- शंकण राज दंपतिकयों ने पूछा।

''हे राजन! आपने जानने की आसक्ति और भक्ति से पूछा। बहुत अच्छा है। हम जहाँ जा रहे हैं उस दिव्य स्थल की महिमा को जानकर यात्रा करना अत्यंत श्रेष्ठ है। इसलिए इस के बारे में आप को सविस्तार से बता रहा हूँ। ध्यान से सुनिए।''- कहते हुए उस महानुभाव ने अपनी बात को आगे बढाया।

''हे राजन! जिस पहाड पर हम चढ रहे हैं उस का नाम वेंकटाचल क्षेत्र है। यह अतिपवित्र क्षेत्र है। इस पहाड के असीम नाम हैं। वे सब सिर्फ नाम ही नहीं बल्कि सार्थक नाम हैं। मुख्य रूप से कृत युग में 'वृषाचल' नाम से पुकारा गया था। त्रेतायुग में 'अंजनाचल' नाम से, द्वापर युग में 'शेषशैल' नाम से पुकारा गया था। 'वें' का अर्थ पाप, 'कट' का अर्थ दूर करना है। वे कितने ही बडे पाप क्यों न हो कट जाते हैं, ऐसी मान्यता है। इस वेंकटाचल पहाड का स्पर्श करने से, पहाड पर चढने से सर्व पाप दूर हो जाते हैं। झंझा जिस रूप में काले काले बादलों

को दूर दूर भगाता है उसी रूप में इस पहाड की हवा लगने से ही मनुष्य के पाप रूपी सभी प्रदूषन दूर हो जाते हैं।

इसके अतिरिक्त 'वें' का अर्थ ऐश्वर्य, 'कटः' का अर्थ अनुग्रह करना है। यानी सर्व संपदाओं को यह क्षेत्र अनुग्रह करता है। यानी संतान, संपदा, विद्या, विवाह, स्वास्थ्य, मेधा, योग, समाधि आदि सभी को यह पहाड प्रदान करता है। इसलिए इस क्षेत्र का नाम 'सिद्धि क्षेत्र' है। यानी जो चाहेगा उस की पूर्ति करनेवाला क्षेत्र है।

परम पवित्र एवं महिमा से भरे इस पर्वत के शिखर भिन्न भिन्न ऋतुओं में , सभी कालों में हरे भरे वृक्षों से, पुष्प पौधों से, सुगंधित जल युक्त झरनों से अत्यंत सुंदर दिखाई देते हैं। जहाँ देखें वहाँ कमलों के सरोवर, सरोवरों पर झंकारते हुए उडनेवाले भ्रमर नेत्रपर्व करते हैं। अत्यंत रमणीय और आह्लाद कारी यहाँ की प्रकृति की शोभा का वर्णन करना असंभव है। सदा इस क्षेत्र में कटहल, केले के बगीचे फले रहते हैं।

कई मृगों, पक्षियों का भी यह पहाड बसेरा है। इस पहाड की गुफाओं में कई महर्षि, योगी, मुनीश्वर तप करते रहते हैं। यहाँ विचरण करनेवाले मृग मृग नहीं। इन पहाडों पर विचरण करनेवाले देवता हैं। इस से अलग यहाँ की शिलाएँ, चट्टानें अकल्पनीय एवं अमूल्य रत्न और मणियों की ढेर हैं। वे चर्म चक्षुओं के लिए पत्थर जैसे दिखाई देते हैं। लेकिन वे अमूल्य हैं!!

प्राचीन समय में एक बार मेरु पर्वत ने ब्रह्मा को लेकर कठोर तप किया। ब्रह्मा ने प्रत्यक्ष होकर वर मांगने को कहा। तब मेरु ने अपने नाम

भूलोक में अमर होने का वरदान मांगा। ब्रह्मा ने स्वीकार करके वर दिया। उस के अनुसार नवरत्न और कल्प वृक्षों को ढेर सी डालकर इस पहाड को आधार के रूप में बनाया। तब से वह मेरु पहाड 'बंगारू शिखराल कोंड' (सोने के शिखरोंवाला पहाड) के रूप में प्रचलित हो गया।

इस तरह की महिमा प्राप्त पहाड में एक जगह ब्रह्मादि देवता तप करते रहते हैं। एक और जगह परम योगी, साधु और मुनीश्वर ध्यान करते रहते हैं। सूर्य - चंद्रादि नव ग्रह, वेद, सभी तीर्थ, पहाड आदि अपने अपने विकास की कामना करते हुए इस वेंकटाचल क्षेत्र में लोक कल्याण के लिए, लोक की रक्षा के लिए भी तप करते रहते हैं।

शुक महर्षि, ब्रह्मा आदि इस पहाड पर रहते यहाँ के तोते, मैनाओं से सुर मिलकर वेदमंत्रों को श्रुतिमाधुर्य रूप में गाते रहते हैं। उन मंत्रों की ध्वनियों से यहाँ के पहाड, घाटियाँ प्रतिध्वनित होती रहती हैं। कुछ महायोगी मोरों के साथ नाचते हुए श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की सेवा करते रहते हैं। यहाँ तोते और मैना पुराणों का पठन करते रहते हैं। यहाँ की गुफाओं में कई ऋषि और मुनि तप करते रहते हैं। इन ऋषियों की योग शक्ति के कारण और तपश्शक्ति के कारण यह पर्वत और तेजोमय होकर प्रकाशित हो रहा है।

इस पहाड पर 'स्वामी पुष्करिणी' नाम से एक दिव्य सरोवर है। इसे श्रीमहाविष्णु की आज्ञा से गरुड ने वैकुंठ से लाकर भूलोक वैकुंठ माने जानेवाले इस क्षेत्र में प्रतिष्ठित किया। श्रीस्वामी की पुष्करिणी के साथ इन पहाडों पर अनेक सरोवर, झरने और पुष्कर हैं। अनेक पुष्करों के होने के कारण इस पहाड को 'पुष्कराद्रि' नाम से भी पुकारते हैं। यहाँ

के सरोवर अपने भक्तों को अनेक पापों से मुक्त करने के साथ साथ उन के समस्त रोगों का निवारण करते हैं। कामनाओं की पूर्ति भी करते रहते हैं। इसलिए यह क्षेत्र 'कामित फलदायिनी' (कामनाओँ की पूर्ति करनेवाली) के रूप में भी प्रचलित हो गया है।

श्रीवैकुंठ में विराजमान श्रीमन्नारायण अपनी देवरियाँ श्रीमहालक्ष्मी और भूमहालक्ष्मी दोनों से मिलकर भूलोक वैकुंठ समझे जानेवाले इस वेंकटाचल क्षेत्र में विहार करते रहते हैं। भक्तों के लिए, मुख्य रूप से कलियुग में मनुष्यों के लिए, इस क्षेत्र में रहने और सभी भक्तों की कामनाओं की पूर्ति करते रहने की, ब्रह्मादि देवता, नारद-तुंबुर आदि देवर्षियों, सप्त ऋषियों ने प्रार्थना की है। उन सभी की विनति के फलस्वरूप वक्षस्थल पर स्थित श्रीमहालक्ष्मी के साथ श्रीनिवास परम पवित्र इस क्षेत्र में 'कलौ वेंकटनायकः' के अनुसार कलियुगांत तक अर्चा मूर्ति के रूप में उद्भूत होकर पूजा - अर्चनाएँ प्राप्त कर रहे हैं। मनौतियों की पूर्ति करनेवाले देव के रूप में, बडे बडे वरदान प्रदान करने वाले देव के रूप में, यहाँ प्रतिष्ठित हुए हैं।

''एमि वलसिन निच्चु नेप्पुडैननु
एमरकु कोलिचिन नितडे दैवमु''

के अनुसार भक्तों की समस्त कामनाओं की पूर्ति करनेवाले प्रत्यक्ष देवता श्रीवेंकटेश्वर हैं। इस के अलवा इस स्वामी के वक्षस्थल पर बसी श्रीमहालक्ष्मी दया स्वरूपिणी और करुणातरंगिणी हैं। भक्तों की कामनाओं की पूर्ति के लिए सदा श्रीनिवास को प्रेरित करती रहती हैं। श्रीनिवास के हृदय पीठ पर पद्मासन डालकर द्विभुजी के रूप में विराजमान इस लक्ष्मी को '' व्यूहलक्ष्मी'' कहा जाता है। वे श्रीनिवास के हृदय पर सुरक्षित एवं

रहस्य रूप से रहती हैं। सभी को सब समय वे दर्शन नहीं देती हैं। इसलिए गोपनीय रूप में रहनेवाली इन्हें 'व्यूहलक्ष्मी' नाम से पुकारा जाता है। श्री वेंकटेश्वर स्वामी के हृदय पद्म में विराजमान ''व्यूहलक्ष्मी'' के दर्शन सभी नहीं कर सकते हैं। उन के दर्शन करने का अवसर भी सब को प्राप्त नहीं होता है। इस के लिए चिंता करने की आवश्यकता नहीं है। वे ही जगन्माई सुवर्णमुखी नदी के तट पर श्रीशुकपुर में अलमेलु मंगा ''स्वतंत्र वीर लक्ष्मी'' के नाम से बसी हैं। अर्चा मूर्ति के रूप में, चतुर्भुजी के रूप में, सभी भक्तों को आनंद प्रदान करते हुए दर्शन देती रहती हैं। भक्तों की सारी मनौतियों की पूर्ति करती रहती हैं। स्वयं पूरा करना ही नहीं अपने स्वामी श्रीवेंकटेश्वर को बताकर उन से भी वरदान दिलाती हैं।

हे शंखण राजन! अभी कुछ समय पहले ही है न आप ने पद्म सरोवर के पास स्थित अलमेलुमंगा की आराधना की। पवित्र पद्म स रोवर के दर्शन करने के कारण, उस में पुण्य स्नान करने के कारण, वहाँ स्थित अर्चा मूर्ति ''वीर लक्ष्मी'' के दर्शन करने के कारण आप के सभी पाप दूर हो गए हैं। श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की बगल में न होकर माई अकेली ही स्वतंत्र रूप से उत्सवों में भाग लेने से उस मूर्ति को ''स्वतंत्र वीर लक्ष्मी'' भी कहते हैं। इस रूप में ''स्वतंत्र वीर लक्ष्मी'' अलमेलुमंगा श्रीशुकपुर में सभी भक्तों को दर्शन देती हैं। अर्चना करने तथा आराधना करने की सुविधा है। लेकिन वेंकटाचल क्षेत्र में श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के वक्षस्थल पर विराजमान ''व्यूहलक्ष्मी'' के दर्शन सभी समयों में प्राप्त करना असंभव है। सभी को दर्शन कराने की सुविधा भी नहीं है। वह जगन्माई श्रीनिवास के वक्षस्थल पर बाहर की तरफ उभरे हुए रूप में रहते हुए, अपने स्वामी से पहले भक्तों की इच्छाओं को सुन लेती हैं।

वक्षस्थल व्यूहलक्ष्मी न केवल सुनती हैं, बल्कि सभी भक्तों की विनतियों को अपने प्रभु को सुनाकर उस स्वामी के द्वारा उन के कामितार्थों की पूर्ति करती रहती हैं।

कटाक्ष इह कामधुक्, तव मनस्तु चिंतामणिः
करः सुरतरुः सदा नवनिधिस्त्वमेवेंदिरे
भवेत्तव दयारसो मम रसायनं चान्वहं
मुखं तव कलानिधिर्विविधवांछितार्थप्रदम्।
- श्री लक्ष्मीहृदयम् (अथर्वण वेद)

श्रीशेषाचल पर बसे श्रीनिवास भगवान के हृदय पद्म में विराजमान अलमेलुमंगा 'व्यूहलक्ष्मी' कहलाती हैं। उस माई का कृपा-कटाक्ष सारी कामनाओं की पूर्ति करनेवाली कामधेनु है! उस जगन्माई का 'मन' चिंतामणी है। उस दया माई के दोनों हस्त 'कल्पवृक्ष' हैं! इस से बढकर माइयों की माई उस की दिव्य लंबी जीवंत मूर्ति ''दिव्य रूप'' नवनिधियों का समूह है। उस करुणा तरंगिणी के द्वारा बरसानेवाला 'अमृत दयारस' सभी भक्तों को सर्व कालों में आस्वादनीय है। इस से भक्तों को आनंद सागर में डूबने का अवसर प्राप्त होगा। इस के अलावा उस सौंदर्य लहरी का ''मुखारविंद'' समस्त कलाओं की खान है। निधि भी है। समस्त कलाएँ परावर्तित होनेवाली उस माई के चेहरे के दर्शन से सभी प्रकार की वांक्षाओं की पूर्ति आसानी से हो जाती है।

इसलिए आर्ति, जिज्ञासु, ज्ञानी आदि सभी वक्षस्थल व्यूह लक्ष्मी की अनेक मंत्रों से, अनेक छंदों से, अनेक पद्यों से, अनेक गीतों से विविध रूपों में कीर्तन करते रहते हैं। स्तुति करते रहते हैं। प्रार्थना करते रहते हैं।

गुणैस्तता प्रसवितृवरणीयगुणोर्जिता
प्रकासमतिमर्तिश्च ध्येया बुद्धिप्रचोदिका,
दुरन्नाद् दुर्ग्रहत्वाच्च पातकादुपपातकात्
स्वगायकत्राणदक्षा गयात्रीत्युदिता रमा।।
- ७.८ श्री वेंकटाचलमाहत्म्यम् (आदित्यपुराण)

दिव्य श्रीवेंकटेश्वर की पटराणी, संपदाओं की माई और वक्षस्थल वासिती श्रीमहालक्ष्मी गायत्री मंत्र प्रतिपादित ज्ञान आनंदादि परिपूर्ण सर्वगुणों के साथ सर्वत्र व्याप्त हैं। वे ही सर्व चराचर जगतों का सृजन कर रही हैं। सदा ज्ञानियों के द्वारा उपासना को प्राप्त करते हुए अपेक्षिता हो रही हैं। सभी लोकों की रक्षा करनेवाले गुणों से सर्वोत्तम माई के रूप में प्रकाशित हो रही हैं। ज्ञान रूपी प्रकाश ही उस माई का शरीर है! इसलिए लक्ष्मीदेवी सभी सज्ञनों के द्वारा कीर्तन प्राप्त करते हुए, ध्यान प्राप्त करते, समस्त जनों की बुद्धि को प्रेरित करते हुए अपने आप कांतिमान हो रही हैं।

सर्वोन्नत श्रीनिवास के हृदय पर बसी श्रीमहालक्ष्मी को उनके ही द्वारा प्रदत्त ज्ञान से भक्त श्रीवेंकटेश्वर भगवान की अनंत महिमाओं का गायन करते हैं, लीलाओं की स्तुति करते हैं। ऐसे भक्तों द्वारा कभी कहीं जाने - अनजाने में अशुद्ध अन्न खाने से, अस्वीकृत दानों को विवश होकर स्वीकार करने से, महा पाप करने से या उप महापापों को करने से होनेवाले तीव्र दोषों से जगन्माई उन की रक्षा करती हैं। उन दोषों से दूर करती हैं। इसलिए लक्ष्मीदेवी ''गायत्री'' नाम से भी पूजित होती हैं। यानी गायत्री मंत्र सहित अलमेलुमंगा समेत अनांद निलय स्वामी का

ध्यान करने से, स्तुति करने से, प्रार्थना करने से उन्हें श्री लक्ष्मी और वेंकटरमण के अनुग्रह से सर्वदोषों के निवारण के साथ साथ समस्त इच्छाओं की पूर्ति भी हो जाती है।

श्रीवत्सवक्षसं श्रीशं श्रीलोलं श्रीकरग्रहम्
श्रीमंतं श्रीनिधिं श्रीड्यं श्रीनिवासं भजेऽनिशम्।।

श्रीवेंकटेश्वर ने अपने वक्षस्थल में श्रीमहालक्ष्मी को श्रीवत्स नामक चिह्न के रूप में धारण किया है! स्वामी साक्षात लक्ष्मीपति हैं! वे तिरुमलेश अपनी देवेरी लक्ष्मीदेवी के साथ सरस-विनोद में, विलास में डूबे रहते हैं! लक्ष्मी देवी के करकमल उन्हें अत्यंत प्रिय हैं। अपने हाथों में लेकर प्रेम के साथ स्पर्श करते रहते हैं! बस इतना ही क्या! नहीं श्रीनिवास सर्वविद्या परिपूर्ण भी हैं! समस्त ऐश्वर्य भी स्वामी ही हैं। इस से बढकर साक्षात श्रीमहालक्ष्मी के साथ सदा स्मरण व स्तुति प्राप्त करनेवाले स्वामी भी श्रीनिवास प्रभु ही हैं! दोनों आपस में भक्तों को ही अपनी दुनिया बना लेते हैं। भक्तों को ही अपने लक्ष्य बना लेते हैं। सदा लोक कल्याण के लिए श्रीवेंकटेश्वर और श्री महालक्ष्मी वचनबद्ध होते हैं। ऐसे प्रत्यक्ष देवताओं के बसनेवाला दिव्य क्षेत्र ही वेंकटाचल क्षेत्र है।

इन पहाडों के दिव्य शिखरों में शेषाद्री, गरुडाद्री, वेंकटाद्री, नारायाणाद्री, वृषभाद्री, वृषाद्री, अंजनाद्री नामक सात दिव्य पहाड हैं। इसलिए यह पर्वतश्रेणी 'सप्तगिरि' ('एडु कोंडलु' - सात पहाड) नाम से प्रसिद्ध हैं। उसी तरह इस क्षेत्र में भक्तों की, आपदाओं में बचानेवाले आत्म बंधु के रूप में, मनौतियों की पूर्ति करनेवाले स्वामी के रूप में बसे श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर, श्रीव्यूहलक्ष्मी हैं। श्रीनिवास स्वामी सप्तगिरीश हैं। भक्त जन अत्यंत प्रीति से, आत्मीयता से और आर्ति से उन्हें पुकारते

हैं। इसलिए ये नाम अत्यंत प्रचलित हुए हैं। इतना कहते हुए वह अज्ञात व्यक्ति शंकण राज दंपति को वेंकटाचल क्षेत्र में सपने में ही बुलाकर ले गया। वहाँ 'पुष्करिणी' की महिमा का विवरण देते हुए उन्होंने कहा।

स्वामिपुष्करिणीस्नानं सद्गुरोः पादसेवनम्
एकादशीव्रतं चापि त्रयमत्यंतदुर्लभम्
दुर्लभं मानुषं जन्म दुर्लभं तत्र जीवनम्
स्वामिपुष्करिणीस्नानं त्रयमत्यंतदुर्लभम्।।

इस क्षेत्र में स्थित स्वामी की पुष्करिणी में स्नान करने का सौभाग्य, सद्गुरुओं के चरणों की सेवा करने का भाग्य और एकादशी व्रत करने का भाग्य प्राप्त होता है - ये तीनों सौभाग्य अत्यंत दुर्लभ हैं। वराह पुराण यह भी स्पष्ट करता है कि उसी प्रकार इस धरती पर मनुष्य के रूप में जन्म लेना, सद्गुणों के साथ जीना और उस जीवन में ही स्वामी पुष्करिणी में स्नान करने का सौभाग्य प्राप्त होना - ये तीनों कार्य करने का भाग्य प्राप्त होना भी अत्यंत दुर्लभ है।

हे राजन! आपने कौन सा पुण्य किया समझ में नहीं आता। लेकिन आप को ये तीनों सौभाग्य प्राप्त हुए हैं। आज एकदशी का दिन है। मुझे ही आप गुरु मानकर जैसे मैं बताऊंगा वैसे संकल्प करके, पवित्र स्वामी की पुष्करिणी जलों में स्नान कीजिए। यह कहते हुए उस महात्मा ने राज दंपति के द्वारा संकल्प कराकर पुष्करिणी के जलों में स्नान कराया। तदुपरांत सर्वप्रथम श्री - भूदेवी समेत आदिवराह स्वामी के और बाद में वक्षस्थल स्थित व्यूहलक्ष्मी समेत श्रीनिवास स्वामी के दर्शन करके सेवा करने का आदेश देकर महात्मा अदृश्य हो गये।

अब तक वे जिन सुंदर दृश्यों को देख रहे थे और उनके सपने के रूप में अदृश्य हो जाने के कारण चेतन दुनिया में आयी राज दंपति ने चारों तरफ देखकर प्रदेश की पहचान करने की कोशिश की।

उन्होंने पहचान लिया कि वे सुवर्णमुखी नदी के तट पर पद्मसरोवर के समीप ध्यान मग्न खडे हैं। अपने साथ हुए दिव्य अनुभवों का स्मरण करके वे आश्चर्य चकित हो गए। साथ ही उन को आनंद भी हुआ। उन के मन में संदेह उभरा कि यह पूरा सपना था क्या? या सच है? आश्चर्य में उन अनुभूतियों का स्मरण करते हुए, उन्हें भगवान के द्वारा प्रदत्त अनुभवों के रूप में विश्वास करते हुए, सपने में उस महात्मा के द्वारा दिए गए आदेश के अनुसार वेंकटाचल यात्रा भी करने का निर्णय उस राज दंपति ने लिया।

एक और बार पद्मसरोवर को भक्तिपूर्वक नमस्कार करके संकल्पपूर्वक पुष्करिणी में स्नान किया। उस के समीप ही अर्चा मूर्ति स्वरूपिणी अलमेलु मंगा की सभक्ति पूजा की। तदुपरांत वहाँ से वेंकटाचल की यात्रा पर निकले। उन पर्वत शिखरों का अधिरोहण करते रास्ते में दिखाई पडनेवाले पुण्य तीर्थों केदर्शन करते आगे बढे। पुण्य तीर्थों में स्नान किए। उन पर्वतों के पवित्र वातावरण से, प्रकृति सौंदर्य से, आध्यात्मिक कांति से अभिभूत होते हुए पैदल चलने लगे। अपने को पहले सपने में अज्ञात महात्मा के द्वारा दिखाए दृश्यों को यथारूप में देखते उन को बहुत आश्चर्य हुआ। चलते चलते शंकण दंपति स्वामी पुष्करिणी के पास पहुंच गए। संकल्पपूर्वक स्नान, ध्यान, जप तपादि किये।

इस तरह हर दिन, व्यूहलक्ष्मी समेत श्रीनिवास का दर्शन करना उनके लिए आदत बनी। वे दूसरे कार्यक्रमों में भाग ही नहीं लेते। स्नान

करना, तप करना, जंगल से प्राप्त कंद, फलादि स्वामी को नैवेद्य चढाकर प्रसाद के रूप में लेना, यही उन की दिनचर्या बनी।

बस, शंकण को निरंतर श्रीनिवास का ही ध्यान! और विश्वास भी! प्रत्येक क्षण और प्रत्येक समय स्वामी पर ही एकाग्रता! स्वामी! हे श्री निवासा! पुकारते! गोविंदा! गोविंदा! कीर्तन करते! लक्ष्मीपती! अलमेलुमंगपति! दर्शन दीजिए स्वामी! कहकर विनति करते! उन्हें भूख नहीं लगती। प्यास नहीं होती। तन, मन, बात, खबर, उठना, बैठना सभी संदर्भों में ध्यान आनंद निलय भगवान के ऊपर ही। आनंद निलय की पटराणी अलमेलुमंगा के ऊपर ही। माई! अलमेलुमंगा पर ही। वे राज दंपति निरंतर उस जगत्सार्वभौम की पूजा करने लगे। इस तरह लगभग छे महीने का समय बहुत आसानी से बीत गया। एक दिन पुष्करिणी में स्नान करने के बाद खडे होकर दोनों हाथ जोडकर -

श्री वेंकटेशं! लक्ष्मीशं! अनिष्टघ्नमभीष्टदम्
चतुर्मखेर तनयं श्रीनिवासं भजेऽनिशम्

स्वामी! हे श्रीवेंकटेश्वर! तुम इस शेषाचल पहाड के स्वामी हो! साक्षात श्रीमहालक्ष्मी के पति हो! ऐसे तुम भक्तों को जो पसंद नहीं है उन से उन को मुक्त करते हो। इतना ही नहीं अत्यंत प्रिय इह लोक एवं पर लोक की इच्छाओं की पूर्ति करनेवाले स्वामी तुम ही हो! सकल चराचर प्राणियों के सृष्टि-कर्ता ब्रह्मा, उसी रूप में चराचर जीव-जंतुओं के जीवनाधार पवन के पिता भी तुम ही हो। ऐसे तुम हे श्रीनिवास! सतत तुम्हारा भजन करेंगे, कहते हुए राज दंपति ने प्रार्थना की।

इतने में एक अद्भुत घटना घटी। स्वामी पुष्करिणी के मध्य भाग से विचित्र कांति के साथ प्रकाशित एक सोने का आनंद निलय विमान पानी में से बाहर निकला।

ततस्स्वामिसरो मध्यादुदतिष्ठन्महाद्भुतम्
अनेकसूर्यसंकाशं शोभयच्च दिशो दश
दिव्यं विमानं तत्रैव तस्य देवः श्रियःपतिः
शंखचक्रगदापाणिः श्रीभूमिसहितः परः

पुष्करिणी के मध्य भाग में एक अद्भुत सोने का विमान कोटि सूर्य प्रकाश से चारों दिशाओं में कांति विकीर्ण करते हुए उद्भूत हुआ। वह दिव्य विमान आश्चर्य पैदा करते हुए एक अद्भुत सफेद मेघ के रूप में स्वच्छ कांति से अनेक सोने के शिखरों से अलंकृत था। श्रीमन्नरायाण के निलय के रूप में शाश्वत तेजोकांति से प्रकाशित होने लगा। इस से बढकर वह दिव्य विमान अनेक रत्नों से जडित था। मोतियों की मालाओं से शोभित एवं अलंकृत था। दिव्य कांतियों से शोभित देखनेवालों में और देखने की इच्छा पैदा करते हुए दिव्य कांतियों से चमक रहा था। उस दिव्य विमान में साक्षात श्रीमन्नारायण श्री-भू-नीला देवियों के साथ साक्षात्कार हुए। स्वामी ने भी अपनी देवेरियों के साथ दिव्य आभरणों, सुमनोहर पुष्प मालाओं से अलंकृत होकर दिव्य कांतियों से प्रकाशित हो दर्शन दिए। अपूर्व एवं अद्भुत इस दृश्य को देखते हुए ब्रह्मादि देवताओं ने श्रीस्वामी के ऊपर फूलों की वर्षा की। अनेक रूपों से स्तुति व कीर्तन किया।

शंखण राज दंपति ने समस्त देवताओं के द्वारा स्तुति ग्रहण करनेवाले श्रीमहाविष्णु के नेत्र पर्व दर्शन किए। साष्टांग नमस्कार कर

उन का कीर्तन गाया। उस सम्राट की भक्ति-प्रपत्ति से संतुष्ट होकर श्रीनिवास ने कहा -

''हे राजन! इस समय मैं ने सिर्फ तुम्हारे लिए ही दर्शन दिए। तुम दोनों दंपति, पद्मसरोवर में स्नान करने के बाद वेंकटाचल पर्वत पर आकर, स्वामी पुष्करिणी में स्नान करने के कारण आप के समस्त पाप दूर हो गए हैं। महालक्ष्मी समेत मेरे दर्शन भाग्य से जलित सोने के रूप में तुम्हारे सभी कलुष दूर हो गए। तुम दोनों अत्यंत पुनीत हो गए हो। श्री महालक्ष्मी का पूर्ण अनुग्रह भी तुम दोनों को प्राप्त हुआ। तुम्हारा राज्य भी तुम को यथाशीघ्र प्राप्त हो जाएगा। कई वर्षों तक राज भोग, सुख-भोग प्राप्त करने के बाद तुम्हें मोक्ष भी प्राप्त हो जाएगा। ''विजयोस्तु! तुम्हारा कल्याण हो''-- कहते हुए स्वामी विमान के साथ अदृश्य हो गए।

श्रीस्वामी की अमृत तुल्य बातें, दिव्य वरदानों से अत्यंत आनंदित होकर शंखण राज दंपति अपने राज्य लौट आयी। बडी आसानी से शत्रुओं को पराजित करके फिर से राज्याधिकार प्राप्त किया। पहले से अधिक मात्रा में राज भोग और सुख प्राप्त करके आखिर में पुनरावृत्तिरहित कैवल्य प्राप्त किया।

गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!!

सार्वभौम सम्राट शंखण ने ग्रहाचार दोष के कारण तथा स्वयंकृत दोषों के कारण कई कष्टों को झेला है। आखिर राज्य भी खोकर घुमक्कड बनकर घूमते घूमते श्री शुकपुर के (तिरुचानूर) पद्मसरोवर में स्नान करके, वहीं बसी और 'स्वतंत्र वीर लक्ष्मी' अलमेलु मंगा के दर्शन प्राप्त करके, पुनीत होकर खोए राज्य को पुनः प्राप्त किया।

इस गाथा के द्वारा भक्तों को एक अद्भुत संदेश प्राप्त होता है। कोई भी मनुष्य असहनीय वेदनाओं को, बाधाओं को, या अष्ट कष्टों को झेलते हुए - और भी अनेक संकटों का शिकार होने पर, - असहनीय रोगों से पीडित लोगों को, तिरुमल यात्रा में प्रप्रथम श्रीशुकपुर (तिरुचानूर) में श्रीपद्मसरोवर का दर्शन अवश्य करना चाहिए। उस पवित्र पुष्करिणी के तीर्थ जलों में संकल्पपूर्वक भक्ति प्रपत्ति के साथ स्नान करना चाहिए। बाद में इस पद्मसरोवर में सहस्रदल कमल संभूता साक्षात श्रीमहालक्ष्मी अलमेलुमंगम्मा का ध्यान करना चाहिए। बाद में वहीं की ''स्वतंत्र वीर लक्ष्मी'' अलमेलु मंगा के नेत्रवपर्व युक्त दर्शन करना चाहिए। माई की पूजा करके मन भर ध्यान करने के बाद ही तिरुमल की यात्रा करनी चाहिए। उस वेंकटाचल में वक्षःस्थल वासिनी व्यूहलक्ष्मी समेत श्रीनिवास भगवान की उपासना करनी चाहिए। उस प्रकार करने से सारी बाधाएँ दूर हो जाएंगी। सारी इच्छाओं की पूर्ति हो जाएगी। यात्रा पूरी तरह सफल हो जाएगी।

उपर्युक्त ''पद्मसरोवर महिमा'' में वर्णित शंखण महाराज दंपतियों के वृत्तांत से भक्तों एवं पाठकों के मन में अनेक संदेह शर-परंपरा के रूप में पैदा हो सकते हैं। जिनकी इच्छाओं की पूर्ति होनी है, जिन की इच्छाएँ पूर्ति हो चुकी हैं, निरंतर बाधाओं को झेलनेवाले, दीर्घ रोगों से मुक्ति चाहनेवाले लोग, गरीबी से बचकर संपदाओं को चाहनेवाले लोग,- इस प्रकार के कई - और कई भक्त, उनकी आपदाओं को दूर करनेवाले स्वामी, आपद्धांधव, भक्तों के बारे में ही दिन रात सोचनेवाले स्वामी के, सप्त गिरीश के, श्रीवेंकटेश्वर के दर्शन करने के लिए तिरुमल की यात्रा

करते हैं। कर रहे हैं न! लेकिन अपनी तिरुमल यात्रा से पहले तिरुचानूर (श्रीशुकपुर) में स्थित पद्मसरोवर का दर्शन क्यों करना है? आराधना क्यों करनी है? उस के बाद ही तिरुमल यात्रा के लिए क्यों जाना है? वहाँ तिरुमल में सर्वप्रथम आदि वराह स्वामी के दर्शन ही क्यों करना चाहिए? उस के बाद ही वक्षस्थल महालक्ष्मी समेत श्रीनिवास भगवान के दर्शन क्यों करना चाहिए?

तिरुचानूर के पद्म सरोवर में, प्रादुर्भूत पद्मावती माई जी के साथ तिरुमल श्री वेंकटेश्वर के विलसे क्षेत्र को ही वेंकटाचल कहते हैं न! लेकिन उस से पहले ही वह आदिवराह क्षेत्र है। आदिवराह स्वामी कौन हैं? कब अवतरित हुए! क्यों अवतरित हुए! इस में सात पहाड होने पर भी, इस का दूसरा नाम 'आदिवराह क्षेत्र' क्यों पडा है!?

इस विषय में प्रत्येक जिज्ञासु को, प्रत्येक भक्त को होनेवाले सभी संदेह अर्थवान ही नहीं अवश्य जानने की प्यास को बढाते हैं। बढा भी रहे हैं।

इन बारे में थोडा बहुत जानने से भक्तों की तिरुमल यात्रा, तिरुचानूर यात्रा और भी फलयुक्त और पूर्ण होकर असीम संतुष्टि प्रदान करेगी।

श्रीवैकुंठ में श्रीमन्नारायण शेष पर शयनित रहते हैं न। निरंतर उस स्वामी के साथ रहते हुए एकांत में भी सेवा करनेवाली, देवेरियाँ ही हैं - श्रीमहालक्ष्मी! और भू महालक्ष्मी! सभी संदेह-परंपरा के मूलभूत कारण ये दोनों ही हैं। वह कैसे? क्यों ऐसे?

भूलोक वैकुंठ मानेजानेवाले वेंकटाचल क्षेत्र में वक्षस्थल लक्ष्मी के साथ श्रीनिवास भगवान अर्चामूर्ति के रूप में अवतरित होने के हजारों वर्ष के पहले से ही, यह क्षेत्र 'आदिवराह क्षेत्र' के रूप में आविर्भूत हुआ है। इस दिव्य स्थल में श्रीमहाविष्णु भयंकर श्वेत वराह के रूप में अवतरित होने के कारण ही यह ''श्वेतवराह क्षेत्र'' है। वराहस्वामी के अपने वामांक में (बाए जांघ पर) भूदेवी को धारण करने के कारण यह ''भूवराह क्षेत्र'' है।

तदुपरांत कई हजारों वर्षों के बाद फिर श्रीवैकुंठ से श्रीवेंकटेश्वर के नाम से वक्षस्थल लक्ष्मी के साथ अर्चा मूर्ति के रूप में इस आदि वराह क्षेत्र में वास करने के लिए साक्षात श्रीमहालक्ष्मी ही प्रधान कारण बनी हैं। तब से वेंकटाचल क्षेत्र के रूप में प्रचलित हो गया। उस के बाद श्री वेंकटेश्वर की प्रार्थना पर श्रीमहालक्ष्मी अपने आप श्रीशुकपुर के (तिरुचनूर में) पद्मसरोवर में अलमेलु मंगा के रूप में अवतरित हुईं। वहीं ''स्वतंत्र वीर लक्ष्मी'' बनकर अर्चा मूर्ति के रूप में और वेंकटाचल क्षेत्र में श्रीनिवास के वक्षस्थल पर ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में विराजमान होकर भक्तों के द्वारा आराधना प्राप्त कर रही हैं।

इससे अलग आकाश राज की पुत्री ''पद्मावती'' के रूप में अवतरित होने के लिए भी श्रीमन्नारायण की दोनों देवरियाँ भूमहालक्ष्मी एवं श्रीमहालक्ष्मी प्रधान कारण हैं। त्रेता युग में ''वेदवती'' कलियुग में भूदेवी के अंश से ''यज्ञ भूमि'' से, श्रीमहालक्ष्मी के अंश से सोने के पद्म से ''पद्मावती'' के नाम से अवतरित हुई हैं।

सारांश यही है कि श्रीवराह क्षेत्र में, वेंकटाचल क्षेत्र में या श्रीपद्म सरोवर में, इस रूप में भू महालक्ष्मी, श्रीमहालक्ष्मी दोनों के आविर्भूत

होने के साथ साथ वे दिव्य स्थल महालक्ष्मी के सन्निधान के रूप में प्रचलित हो गए हैं।

भू महालक्ष्मी अगर तैयार नहीं होती तो ''वराहस्वामी'' का अवतार ही नहीं होता। तद्वारा वराह क्षेत्र भी नहीं होता। इस से अलग श्रीमहालक्ष्मी वैकुंठ छोडकर, भूलोक में अवतरित नहीं होती तो भूलोक वैकुंठ समझे जानेवाला वेकंटचाल क्षेत्र और उस क्षेत्र में प्रत्यक्ष भगवान के रूप में श्रीवेंकटेश्वर का आविर्भाव नहीं होता। श्रीमहालक्ष्मीदेवी के आविर्भाव का प्रथम क्षेत्र कोल्हापुर है। उस के बाद अलमेलुमंगा के आविर्भूत स्थल ''तिरुचानूर'' है। इस प्रकार श्रीमन्नारायण की दोनों देवेरियाँ भूलोकवासी मनुष्यों के लिए वरदान साबित हुई हैं। ''हरि कोलुवु'' (''श्रीनिवास सन्निधि'') समझे जानेवाला वेंकटाचल, ''सिरि कोलुवु'' (''श्री पद्मावती सन्निधि'') समझे जानावाला ''तिरुचानूर'' दिव्य क्षेत्र, इस प्रकार बने हैं। उन दोनों माताओं के दिव्य लोक से भूलोक पर अवतरित होकर भक्तों को अनुग्रह करने के वृत्तांत को विस्तार से हम आगे प्राप्त करेंगे!

पहले भू महालक्ष्मी (भूदेवी) के अवतरित होने के कारण से उत्पन्न आदिवराह क्षेत्र की दिव्य गाथा को फिर श्रीमहालक्ष्मी के कारण उत्पन्न तिरुचानूर क्षेत्र की पवित्र गाथा को प्राप्त कर लेंगे। जानने के पहले श्री महालक्ष्मी समेत श्रीनिवास भगवान का जी भर स्मरण करेंगे!

श्रीलक्ष्मीवेंकटरमण गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!!

((((()))))

श्रीवैकुंठ में परंधाम

श्रीवैकुंठ श्रीमहाविष्णु का लोक है। वहाँ एक असीम श्रीर सागर है। अनंत एवं गंभीर उस सागर में आकाश को छूनेवाली लहरें! उस सागर के बीच सहस्रफणी आदिशेष पर शयनित श्रीमहाविष्णु हैं। सहस्रफणी आदिशेष अनंत ही नहीं अति भयंकर भी है। दो में फटी काली जीभ सहस्रफणों से अंदर बाहर चलते अति तेज गति से हिल कर रही हैं। उन जिह्वाओं से जहरीली ज्वालाएँ बाहर की ओर व्याप्त हो रही हैं। आँखों की पुतलियाँ भयानक और देखनेवालों में भय पैदा कर रही हैं।

ऐसे शेष पर शयन करनेवाले श्रीमहाविष्णु तो अत्यंत प्रशांत हैं। प्रसन्न भी हैं। दाएँ हाथ पर सर रख कर दाई तरफ करवट बदलकर सोये श्रीमन्नारायण के चरणों के पास श्रीलक्ष्मी और भूलक्ष्मी बैठी हैं। वे दोनों श्रीहरि के चरणों को अति कोमल रूप से, हल्के से, अपने मृदु कर-कमलों से दबा रही हैं। जोर से दबाने से उन के सुकुमार चरण सूज जाएंगे समझकर बहुत कोमल ढंग से दबाती सेवा कर रही हैं।

फिर स्वामी जी तो! - - - -

आदिशेष पर लेटे मुस्करा रहे हैं। गोल गोल, विशाल नेत्र खोलकर वे कुछ देख रहे हैं। स्वामी के नेत्र बाहर किसी को देखते रहने के बावजूद, अंतर्मुख में किसी को देखते जैसे लग रहे हैं। वह 'दृष्टि' मानो कह रहीं है - ''मैं सर्वांतर्यामी हूँ!'' सकल चराचर जगत को देखता रहता हूँ, बता रही है। मेरी दृष्टि से कोई बच नहीं सकता है। कुछ भी आडा नहीं आ सकता है। मेरी निशित दृष्टि सर्वत्र जाती है। इस रूप में श्रीहरि

किसी की ओर न देखते हुए सब को देखते रहते हैं। ऐसे ही वे सब को दर्शन देते रहते हैं।

पीत रेशमी वस्त्रों से, नवरत्न खचित दिव्य आभरणों से, सुंदर-सुकुमार शरीर लावण्य से शोभायमान श्रीमन्नारायण की तेज कांति को अपलक नेत्रों से भक्त देखते हुए परवश हो रहे हैं। स्वामी की यह तेज कांति और उनका वह वर्चस्व निगम निगमांत वेद स्वामी होने के कारण प्राप्त है। उन के शरीर पर आभरण, भूषण, पुष्पों की मालाएँ आदि के द्वारा द्विगुणित हुई है। यह स्वामी के साथ रहने से उन आभरणों को ही प्राप्त तेज-कांति है। यह समस्त चराचर सृष्टि को अपने लीला-विलास से नचानेवाली श्रीमहालक्ष्मी और भूमहालक्ष्मी दोनों स्वामी की चरण सेवा में लगे रहने के कारण उत्पन्न कांति है! इस पर सोचते सोचते भक्तगण आश्चर्य चकित होकर आनंद का अनुभव कर रहे हैं। श्रीमहाविष्णु के दिव्य-मंगल रूप को भक्त अपनी आँखों से अपलक देखने में असमर्थ होकर , देखने की शक्ति न होने से आंखें मूँद रहे हैं। नहीं नहीं। उन की आंखें अपने आप बंद हो रही हैं। इस के बावजूद भी वहाँ स्थित सब की दृष्टि श्रीमहाविष्णु पर केंद्रित हो गयी हैं। उस अनंत मूर्ति के अनंत तेजोमय रूप को समग्र एवं संपूर्णतः क्या सभी देख पाते हैं! थोडा भी देख नहीं पायेंगे, नहीं देख पायेंगे। अगर स्वामी ही अपने रूप को दिखाने की कोशिश करेंगे तो बात दूसरी है।

उस शेषशायी के आगे अपने दोनों पंखों को विशाल रूप में फैलाये किसी भी क्षण उडने के लिए पूरी तरह तैयार होकर दोनों हाथों से नमस्कार करते हुए श्रीस्वामी की आज्ञा की प्रतिक्षा में हैं स्वामी के सेवापरायण गरुड।

दूसरी तरफ देखें, ओह! कितने ऋषिगण! योगी! मुनीश्वर! उन के पास ही देवतागण! सभी लोकों के देवता शायद यहीं हैं। एक देवतासमूह ही नहीं, यक्ष, गंधर्व, किन्नर, किंपुरुष! आदि सभी दोनों हाथ जोडकर नमस्कार करते हुए श्रीहरि का कीर्तन गा रहे हैं।

एक और तरफ - - - देवर्षी नारद - - - तुंबुर हैं। वे भी बहुत हृदयांगम और श्रुतिमाधुर रूप में अपनी वीणाओं को बजाते हुए भक्ति परवशता में श्रीमन्नारायण की स्तुति कर रहे हैं।

यह उस समय का वैकुंठ दृश्य है!

उस श्रीवैकुंठ में सब की दृष्टि, श्रीमन्नारायण पर ही है! सब का ध्यान श्रीहरि की ओर ही! सब की नजर श्रीमहाविष्णु के ऊपर ही! सब के विचार उसी अनंतराय पर ही हैं! सब की बहसों में वे ही हैं! सब की भावनाएँ भी उन्हीं पर केंद्रित हैं! सब के गीत उस परंधाम की लीलाओं के केंद्र में ही हैं! सब के कीर्तन भी उस पहाड सप्तगिरि पर ही हैं! सब के स्तोत्र भी गरुडवाहन स्वामी को लेकर ही हैं!

लेकिन!

सब के सब सोच रहे हैं कि स्वामी मेरे गीत ही सुन रहे हैं, नहीं नहीं, स्वामी मेरे गीत ही सुन रहे हैं, मुझे ही देखकर हँस रहे हैं। मेरा ही प्रश्न सुन रहे हैं। मुझे ही देख रहे हैं। - मेरे संदेह की निवृत्ति कर रहे हैं। मेरे विचारों के अनुकूल ही मेरी ही तरफ देखते हुए मुस्कराते हुए मुझे मना रहे हैं। - भक्त यही अपने आप में सोच रहे हैं। अपने आप को समझा रहे हैं।

फिर श्रीमन्नारायण तो! - - -

सब को देख रहे हैं! सभी को मना रहे हैं! सभी को प्रसन्न रख रहे हैं! सब की प्रार्थनाएँ सुन रहे हैं! सब की बातें भी सुन रहे हैं। सब के विचारों को समझ रहे हैं। सब की भावनाओं को, व्यवहारों को बहुत आसानी से समझ रहे हैं। सब को सभी रूपों में संतुष्ट कर रहे हैं। सिर्फ संतुष्ट करना ही नहीं बल्कि उन को आनंद सागर में डुबो रहे हैं। ऐसे ही कई! ऐसे भी और कई!!

इस प्रकार सब के अपने भावों, भावनाओं, विचारों, संदेहों, समस्याओं के अनुरूप सभी रूपों में सुनते, समझते, उत्साहित करते रहने के बावजूद श्रीवैकुंठवास का ध्यान अपने नाभि से उद्भूत कमल के डंटल के शिखराग्र पर खिले पद्म पर ही केंद्रित रहा है।

परंधाम उस स्वामी का उदर जितना विशाल है उतना ही गहरा है। कहा जाता है कि उस में कई लोक हैं। उस उदर की नाभि को चीरकर एक लंबा और दुबला कमल का डंटल ऊपर आया है। सुंदर, कोमल उस कमल का डंटल के अंत और भी सुंदर और आकर्षणीय सोने का कमल विकसित है। उस पद्म पर चतुर्मुख ब्रह्म हैं।

आदिशेष पर सोनेवाले श्रीहरि पद्मनाभ बने लेकिन पद्म पर आविर्भूत ब्रह्मा तो सिर्फ पद्मसंभव ही रहे हैं।

लीजिए! अब उस पद्मनाभ की दृष्टि, अपने उदर के पद्म से अवतरित चतुर्मुख ब्रह्मा पर पडी। लक्ष्मीवल्लभ की दृष्टि को पहचान कर ब्रह्मा ने ''पिताश्री! क्या आज्ञा है! अवश्य पालन करूँगा!'' कहते हुए झुक कर प्रणाम किया।

''हे पुत्र! समस्त चराचर लोकों को,पंच भूतों को सृजन करने की अनंत शक्ति और अद्भुत निपुणता तुम्हें प्रदान कर रहा हूँ। उस सृष्टि कार्यक्रम को एक पवित्र महायज्ञ मानकर, असावधान हुए बिना अत्यंत जागरूकता के साथ व्यवहार करना चाहिए। तुम्हारे द्वारा सृजित जीवजाल का तथा लोकों का पोषण मैं करूँगा।'' ऐसा ब्रह्मा को आदेश देकर अपने सामने हाथ जोडकर खडे सब पर दृष्टि डालकर भगवान ने कहा-

''हे देवतागण! यक्ष, गंधर्व,किन्नर, किंपुरुष, महनीय, तपस्संपन्न परमयोगी! आप सब अपने अपने स्वस्थल लौट जाइए! आप अपने अपने कामों में निमग्न रहिए। सब के अपने अपने कार्य हैं। सब के काम पवित्र ही नहीं बल्कि महान भी हैं। एक दूसरे का स्थानग्रहण नहीं कर सकते। इसलिए सब अपने अपने कार्यक्रमों को उन्नत ही नहीं उत्तम रूप में ही मानिए। सिर्फ मानना ही नहीं त्रिकरण शुद्ध रूप से अमल कीजिए। आप के कार्यक्रम, आप के काम, आप के लोकों में, अपने दिव्य स्थलों में धर्म बद्ध रूप से प्रचार कीजिए। सभी जनता सुसंपन्न एवं सुख-समृद्धि से रहे। इसलिए बिना आलस्य के आप अपने कामों को धर्मयुक्त अमल कीजिए। ''धर्मो रक्षति रक्षितः'' आशीर्वाद देते हुए सब की बिदाई की भू रमानाथ श्रीमन्नारायण ने।

''जो आज्ञा! जो आज्ञा! महाप्रभो! वैकुंठवासा! जो आज्ञा! जो आज्ञा!'' कहते हुए सर झुकाकर नमस्कार कर सब श्री वैकुंठ से अपने अपने लोक लौट गए।

देवर्षी नारद जी भी 'नारायण! नारायण!' कहते हुए अपनी वीणा 'महती' को बजाते विशेष रूप से श्रीहरि को नेत्र पर्व रूप से दर्शन करते हुए त्रिलोक संचार के लिए निकले।

बाद में श्रीमहाविष्णु के आदेश से ब्रह्मा ने सृष्टि कार्य का आरंभ करके बहुमुख प्रज्ञा से अद्भुत एवं परमाद्भुत रूप में निर्विघ्न आगे बढाया।

चतुर्मुख ब्रह्म के द्वारा सृजित भावनामय जगत को विष्णु भगवान संरक्षण करते रहे हैं। काफी समय बीत गया। पल, घंटे, पहर, दिन, सप्ताह, महीने, वर्ष, युग - काफी समय बीत गया। और भी बीतने लगा। भगवान की तरह समय भी आदि और अंत रहित है। इसलिए काल को भगवत्स्वरूप माना जाता है। अनंत रूप में बीतनेवाले काल, किसी के लिए, एक क्षण के लिए भी रुक सकता है क्या! अगर रुक जाएगा तो वह भगत्स्वरूप कैसे होगा?

कालचक्र के घूमते घूमते कुछ महाकल्पों का काल ऐसे ही बीत गया।

सुंदर भूलोक! :

चतुर्मुख ब्रह्मा ने अनेकानेक लोकों के साथ साथ मनुष्यों के वास स्थल भूलोक को भी अत्यंत सुंदर सृजित किया है।

धरती पर कदम कदम पर मनोहर सौंदर्य है। कण कण में अद्भुत दृश्य हैं। सब जगह व्याप्त सौंदर्य को लोगों को अपने आप देख लेना चाहिए। देख कर आनंद का अनुभव करना चाहिए। इस से बढ़कर उन का विवरण देना, उन का सृजन करनेवाले ब्रह्म देव को भी शायद संभव नहीं है!

इस मानव लोक की सुंदरता के आधार एक दो नहीं हैं!! एक तरफ आकाश को छूनेवाले ऊँचे पर्वत शिखर! उन के बगल में ही पाताल को

छूनेवाली घाटियाँ हैं। सभी कालों में हरे भरे वृक्षों से, फूल-पौधों से, सुगंध से भरे वन, पर्वत, घाटियाँ, पर्वतों के शिखरों से झूम झूम कर गिरनेवाली झरनें, अत्यंत तेज गति से बहनेवाली नदियाँ! नद! इन के अलावा निश्चल रहनेवाले सरोवर, उन सरोवरों के कमलों पर झूमनेवाले भ्रमरों के झुंड! आँखों को सुंदर लगते हुए रमणीय वर्णचित्र रूपी प्रकृति का सौंदर्य! ये ही नहीं! और भी - - -

जहाँ देखो वहाँ मुँह में पानी फिरोनेवाले फलों के बगीचों से युक्त सुंदर धरती! हरे भरे पेडों पर कूहू कूहू आलाप करनेवाली कोयल! चित्र -विचित्र जानवरों के गर्जनों से गूँजनेवाले घने जंगल! इन सब के बीच में निश्चल और प्रशांत आश्रमों के आँगन! उन आश्रमों में अपने वैरी जानवरों के साथ संचरण करनेवाले जंगली जीव, आश्रमों के आँगनों में वेदों का गायन करनेवाले तोते, नाचनेवाले मोर!

इन के अलावा ऐसे ही अनेक चमत्कार भी अनेक विशेषताओं से भरी सुंदर प्रकृति के साथ, विशेष श्रद्धा से, चतुर्मुख ब्रह्मा ने एक तरफ ऊर्ध्व लोकों और इसरी तरफ पाताल को निर्मित किया। दोनों के बीच में भूलोक का निर्माण किया।

इस अद्भुत विश्व में अन्य किसी लोक में दिखाई नहीं देनेवाले शत कोटि जीव-जंतुओं का सृजन किया। इन जीव-जंतुओँ के अन्न, निद्रा, भय, संभोग, संतान - आदि सामान्य गुण हैं। लेकिन ब्रह्मदेव ने सृष्टि में मकुट मानेजानेवाली मानव जाति का सृजन कर भूलोक के लिए सोने की भेंट दी। मनुष्य में दूसरे जीवों से अलग एक उन्नत शक्ति है। वह ज्ञान शक्ति है। इसी ज्ञान के कारण ही मानव को भगवत्साक्षात्कार संभव हो

सका है। किसी दूसरे लोक में यह संभव नहीं है। इस कारण देवतागण भी मानव को देखकर ईर्ष्या करते हैं।

इस तरह विशेष दृष्टि से ब्रह्मा के द्वारा सृजित भूलोक का, श्रद्धा और प्रेम के साथ परंधाम श्रीमहाविष्णु ने पोषण करना आरंभ किया। वैकुंठवासी श्रीमन्नारायण के आदेश से कई परम योगी, अनेक मुनिगण और ऋषि लोक कल्याण के लिए तप करने लगे। बिना किसी कष्ट के अनेक हजारों वर्ष बीत गए।

इस प्रकार शांति के साथ तप करनेवाले ऋषीश्वरों को ध्यान के समय कुछ अमंगलकारी दृश्य दिखाई दिए। अनेक सांसारिक कष्ट, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूचाल, जल प्रलय, तूफानी हवाएँ, भयानक दीर्घ रोग - आदि अनेक ने भूलोक को घेर लिया तथा इन के साथ राक्षसों की बाधाएँ भी बढ गई। ऐसी भीति जगानेवाले दृश्यों को देखा। इन सब से मुक्त होने में असमर्थ, परेशान होनेवाले भूलोकवासी मनुष्य के विवशता में, सहायता के लिए, सहानुभूति के लिए आकाश की ओर आर्ति से देखने के दृश्य और प्रसंग उन महानुभावों को दिखाई पडे।

''इन समस्याओं के लिए समाधान क्या हैं? भविष्य में मानव वैकुंठ या कैलास सीधे जाकर श्रीमहाविष्णु से या परमशिव से अपनी यातनाओं को सुना सकते हैं? शायद संभव नहीं! ऐसे में उन के लिए क्या उपाय है? भविष्य में आनेवाली आपदाओँ से मनुष्य की रक्षा कैसे करनी चाहिए? इस का एक ही उपाय है - हम सब को त्रिमूर्तियों के पास जाकर शरण लेना। दूसरा उपाय ही नहीं बचा है।'' कहते हुए भूलोक के तपस्संपन्न सभी मुनिगण, देवतागण मिलकर सीधे ब्रह्मा के पास गए।

''जी हाँ! आप जो कह रहे हैं वह सही है। इस का उपाय शायद शिव ही बता सकते हैं'' कहते हुए ब्रह्मा सभी को कैलास ले चले।

ब्रह्मादि देवतागण के साथ आए ऋषिगण को देखकर उन के द्वारा कही गई बातों को संयम के साथ सुनकर शिव ने कहा। ''जी हाँ! आप ने जो कहा वह परम सत्य है। भविष्य में उत्पन्न होनेवाली आपदाओं को दूर करके लोक कल्याण कर सकने की शक्ति रखनेवाले कल्याण सम्राट सिर्फ श्रीमहाविष्णु ही हैं। सब का समाधान करके रास्ता दिखा सकनेवाले सिर्फ वैकुंठवासी ही हैं। इसलिए हम सब मिलकर वहीं जाएँगे।'' सभी को शिव भगवान वैकुंठवासी के पास ले चले।

ईशानादि दिक्पाल, ब्रह्मादि देवतागण, मुनिगण, तपस्वी सभी ने जाकर श्रीवैकुंठनाथ के दर्शन करके विनति की। निकट भविष्य में होनेवाले अनेक अनर्थो से संबंधित दृश्यों के बारे में बताकर, उन से बचने के उपाय की याचना की। अनर्थों से बचाकर लोक कल्याण का मार्ग बताने की प्रार्थना की। यह भी विनति की कि इस से सिर्फ आप ही बचा सकते हैं! उन्हें दंडवत प्रणाम किया। साष्टांग नमस्कार समर्पित किया।

श्रीमहाविष्णु ने उन सब की बातों को गंभीर एवं प्रशांत मुद्रा में सुनकर उन की तरफ निशित दृष्टि से देखते हुए कहा ''हे देवतागण! मुनीश्वर गण! चिंता करने की कोई बात नहीं है। मेरे दर्शन किए हैं न! सभी प्रकार के अनर्थ, दुर्घटनाएँ सारी दूर हो जाएँगी। आप के सभी कष्ट भी दूर हो जाएँगे। समस्त कल्याकारी कार्य संपन्न होंगे।

आप के बताये जैसे ही आनेवाले दिनों में कमजोर लोग, आलसी लोग, अल्पायु लोग, निरंतर सांसारिक व व्यापरिक मन रखनेवाले मनुष्य प्रत्यक्ष रूप से वैकुंठ आकर मेरे दर्शन नहीं कर पायेंगे। मेरे ही नहीं, वे प्रत्यक्ष रूप से न कैलास जा सकते हैं न ब्रह्म लोक। इसलिए भविष्य में ऐसे विपरीत होते रहेंगे। हे महानुभाव! आप के ध्यान में दिखाई दिए समस्त कष्ट सभी मनुष्यों को न हो। ऐसा कुछ अवश्य करना चाहिए। उस के लिए सिर्फ एक ही उपाय है। सिर्फ मेरा फिर से अवतार लेना ही है। भूलोक में अवतार लेकर कलियुग के अंत तक उन के लिए प्रत्यक्ष दर्शन देना चाहिए। दर्शन करनेवाले सभी का उद्धार करना चाहिए। उन की आपदाओं को दूर करना चाहिए। उन के द्वारा कुछ न कुछ दान के रूप में स्वीकार करके उन की सारी इच्छाओं की पूर्ति करनी चाहिए। ये ही मेरे अवतार के लक्ष्य बनने चाहिए। तभी आप को दिखे अनर्थों का प्रभाव कम हो जाएगा। या पूरी तरह मिट जाएगा।

किंतु मेरे भूलोक में अवतरित होने के लिए श्रीमहालक्ष्मी और भूमहालक्ष्मी को अत्यंत मुख्य भूमिका निभानी होगी। इस के अलावा मेरे पूर्व अवतारों के समय मेरे साथ लोक कल्याण के लिए तथा भक्तों की रक्षा के लिए श्रीदेवी और भूदेवी दोनों ने अपनी अमूल्य भूमिका निभायी है। असल में श्रीमहालक्ष्मी और भूमहालक्ष्मी रहित मेरे आनेवाले अवतार निर्वीर्य, निष्प्रयोजन हैं। बगैर उन के मेरे अवतारों की कल्पना करना भी असंभव है। पहले के युगों में सभी अवतारों में मेरे साथ श्रीमहालक्ष्मी और भूलक्ष्मी आयी हैं। लेकिन आगे के विशिष्ट अवतारों में श्रीमहालक्ष्मी और भूलक्ष्मी दोनों मुझ से पहले ही धरती पर अवतरित होंगी। उन के बाद ही मैं उन के लिए अवतार लूँगा। उन दोनों की भूमिका अत्यंत आवश्यक है। भूलोकवासियों के अरिष्ट और अनर्थो को दूर करके अभीष्ट सिद्ध करते हुए लोक कल्याण करनेवाले अवतारों के लिए देवर्षी नारद महर्षि का सहयोग भी चाहिए।'' कहते हुए एक क्षण के लिए श्रीमहाविष्ण ने नारद की ओर देखा। फिर सभी को संबोधित करते हुए कहा।

''हे देवतागण! परमयोगी महानुभाव! आप सब परेशान हुए बिना निश्चिंतता के साथ अपने लोक लौट जाइए। सभी लोक - कल्याण की कामना करते हुए तप कीजिए। ध्यान को आगे बढाइए। यज्ञ, यागादि कीजिए। आप के भय अपने आप दूर हो जाएंगे। सर्वत्र शुभ होंगे। तद्वारा नित्य कल्याण कारी कार्य होंगे। कुछ समय तक आप को प्रतीक्षा करनी होगी! अब आप कुशल - मंगल अपने लोक लौट जाइए।'' कहते हुए सब की बिदा की।

सभी अपने अपने लोक लौट गये। कई हजारों वर्ष बीते।

((((()))))

वैकुंठ दर्शन और शापग्रस्त

सनक,सनंदन, सनत्कुमार,सनस्सुजात नामक चार महर्षिगण थे। ये चारों ब्रह्मदेव के मानससंकल्प से पैदा हुए हैं। इसीलिए उन्हें ब्रह्ममानस पुत्र कहते हैं। इन के शरीर अंगूठे भर के अतिछोटे हैं। फिर भी उन को असीम ज्ञान प्राप्त है। त्रिकाल ज्ञान संपन्न ये कभी भी कहीं भी चाहे तो पहुँच सकते हैं।

वे चारों एक बार संचार करते हुए वैकुंठ गए। भक्त जन पारिजात और अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक रमानाथ के दर्शन करने वैकुंठ में प्रेवश किया। उन को कौन रोक सकता है? फिर भी उन्हें रोका गया।

पता नहीं किस मुहूर्त में वे वहाँ पहूँचे वैकुंठ के द्वार पालक जय और विजय ने उन्हें रोका है। अंदर जाने के लिए मना किया। अंदर श्री लक्ष्मी और श्रीमन्नारायण एकांत में थे, इसलिए इस समय कोई अंदर नहीं जा सकता, कहकर उन्हें रोका गया।

सदा परम शांत रहनेवालों के रूप में प्रसिद्ध ब्रह्ममानस पुत्रों को तीव्र मानसिक कष्ट हुआ। अपने को तीव्र अपमानित मानकर वे बहुत क्रोधी हो गए। उन्होंने अपने को रोकनेवाले द्वार पालकों को धरती पर राक्षसों के रूप में पैदा होने का शाप दिया।

अचानक धटित इस घटना से जय विजय दोनों हताश हो गए। सनक सनंदादि घनीभूत शांत स्वरूप हैं। लेकिन क्षणिकावेश के वे शिकार हो गए। उन का गुस्सा सीमाओं को पार कर गया।

जगन्माता और जगद्दाता श्रीलक्ष्मी और नारायण दोनों क्या कभी एकांत में रहते नहीं! क्या उन्हें एकांत की आवश्यकता नहीं! उन्हें एकांत नहीं होता! ऐसे संदर्भों में भी कितने ही आप्त क्यों न हो उन के एकांत को भंग करना उन के लिए क्या उचित है! अंदर इस रूप में जाना उचित

है! उचित अनुचित न देखकर इस रूप में गुस्सा करना क्या उचित है! कठोर शाप देना उचित है! ऐसे महानुभावों का इस प्रकार का व्यवहार उचित है! इसलिए बुजुर्ग कहते हैं कि भाग्य सब से बडा होता है।

निरंतर प्रशांत रहनेवाले वैकुंठ में श्रीमन्नारायण के अभ्यंतर मंदिर के प्रधान द्वार के समीप सोने के दरवाजे के पास हुई इस घटना के कारण, हलचल के कारण, अपने एकांत को भंग होते देखकर श्री महाविष्णु शीघ्र ही दौड कर बाहर आये। बाहर आते ही परंधाम ने पूरी स्थिति को भांप लिया। कुछ भी नहीं हुआ हो, कुछ भी नहीं देखा हो जैसा व्यवहार करते हुए उस लीला विनोदी ने उन योगीश्वरों को दर्शन देकर, प्रसन्न करके बिदा की।

बस! जय विजय दोनों सर पकड कर बैठ गए। नारायण के चरणों पर गिर कर क्षमा माँगते हुए शरण की याचना की। स्वामी ने अपने सिपाहियों को समझाते हुए कहा - ''हे जय! हे विजय! उन महनीयों के शाप को अवश्य भोगना ही पडेगा। अब कोई उपाय नहीं है। उसे बदलने की शक्ति किसी को नहीं है। इसलिए सिर्फ तीन जन्मों में राक्षसों के रूप में जन्म लेकर, निरंतर हृदय में मुझ से द्वेष करते हुए वैरी भक्ति से शीघ्र मेरे पास लौट आयेंगे!'' कहते हुए उनको तसल्ली दी।

श्रीवैकुंठ में घटित इस तीव्र परिणाम से देवता प्रसन्न हो गए। परम योगीगण भी आनंदित हुए। देवर्षी नारद ''श्रीस्वामी जी के नए अवतार के लिए यह शायद नांदी बनेगी!'' मानते हुए ''नारायण! नारायण!'' जपते त्रिलोक संचार के लिए निकले।

फिर हमेशा की तरह श्रीवैकुंठ में गंभीर एवं प्रशांत वातावरण।

((((()))))

धरती पर पधारी भूमहालक्ष्मी !

श्रीमहाविष्णु करवट बदलकर शेष पर एक तरफ लेटे हुए घटित घटना के बारे में गंभीरता से सोचने लगे। भूमहालक्ष्मी और श्रीमहालक्ष्मी दोनों ने श्रीहरि की पादसेवा करती हुई पूछा - ''क्या बात है स्वामी?''। सोच से बाहर निकलकर स्वामी दीर्घ साँस छोडते हए हे श्रीदेवी! भूदेवी! श्रीवैकुंठ में हमारे अभ्यंतर मंदिर के द्वार के सामने जो घटना घटी वह हमारे नए अवतारों के लिए नांदी बनी है। ''हे भूदेवी! तुम अपने अंश से भूमंडल में अपनी पूर्ण शक्ति के साथ व्याप्त रहो। तुम्हारे पूर्णांश से भरे भू मंडल समस्तश्चैर्य, अच्छी फसलों के साथ सुखों से भरा रहेगा। भूखंड पर कदम कदम पर, कण कण में एक विचित्र तेज कांति, अनंत आध्यात्मिक वर्चस्व झलकता रहेगा। उस समय तुम्हारा आकार और दिव्य स्वरूप पूरे विश्च में व्याप्त होने के कारण महोन्नत सर्व कलाएँ एवं सर्वसंपदाओं की जननी तुझे मानकर तुम को ''भू महालक्ष्मी'' नाम से आराधना करेंगे। (तिरुमल पहाड पर वराह स्वामी के बगल में रहनेवाली भूदेवी को अर्चक स्वामी ''भूमहालक्ष्मी'' कहकर पुकारते हैं।) तुम्हारे द्वारा भूलोकवासियों के कल्याण के लिए एक महोन्नत दिव्य क्षेत्र सारे भूखंड को आधार बनाकर अवतरित होगा। उस क्षेत्र में मैं अद्भुत अवतार के साथ तुझे गोद में लेकर विराजमान रहूंगा। 'भूलक्ष्मी शीघ्र जाओ! मेरे अवतरित होने के लिए तुम ही कर्ता हो! बिना देरी के अपने आप संतुष्ट होकर, पूरी तरह स्वीकारते हुए जल्दी चली जाओ। धरती पर पूरी तरह व्याप्त होकर उस का संरक्षण करो।'' - कहा। श्रीहरि के आदेश पर ''स्वामी हमारे लिए आप के वचन ही वेद हैं। आप जो कहेंगी वही हम करेंगी।'' कहती हुई भूमहालक्ष्मी वैकुंठ से अदृश्य हो गयीं।

'तो फिर मेरा क्या होगा!' श्रीमहालक्ष्मी ने अपने स्वामी की ओर देखा। शायद वह दृष्टि नहीं प्रश्न ही था।

श्रीमहालक्ष्मी के संकेत को समझकर श्रीहरि ने ''अब भू महालक्ष्मी जिस रूप में एक अवतार के लिए जिम्मेदार हो रही है, भविष्य में लोक कल्याण के लिए हे श्रीमहालक्ष्मी! तुम भी जिम्मेदार बनोगी। वह अवतार नहीं होगा। तुम और मैं भूलोक में अलग अलग क्षेत्रों में बसेंगे भक्त जनों को प्रत्यक्ष दर्शन देते होंगे। लेकिन अभी वह समय नहीं आया। समय का इंतजार करना होगा।'' श्रीमहालक्ष्मी को समझाया।

((((()))))

भूमहालक्ष्मी - आदिवराहस्वामी

काल चक्र घूमता गया। जगन्नाथ श्रीमहाविष्णु के आदेश पर चतुर्मुख ब्रह्मा ने अपनी कल्पना वैचित्री से चारों तरफ विचित्र एवं चमत्कार पूर्ण लोकों का सृजन किया। सृजन सतत लोगों को आकर्षित करते हुए नित्य नवीन लगते हुए आनंद देने लगे। फिर काल चक्र दिन, सप्ताह, महीने, वर्ष और युगों के रूप में घूमने लगा। उस काल चक्र के लिए कोई थकान नहीं है। उस में कोई शिथिलता नहीं है। मानवकाल के अनुसार कृत, त्रेता, द्वापर और कलियुग चारों एक होकर बीत गए। ऐसे समिष्टि युग एक नहीं। दो नहीं। हजार बीत गए। कोमल उंगलियों से सृष्टि रचना करनेवाले ब्रह्म देव का सिर्फ आधा दिन कट गया। यानी सिर्फ एक दिन का समय बीत गया। ठीक उतनी मात्रावाले कालचक्र का घूमना शुरु होने के बाद ब्रह्म देव के लिए रात का समय शुरु हो गया। दिन भर बिना किसी रुकावट के सृजन करने के कारण सृष्टि कर्ता बहुत थक गया। थकान से ब्रह्मा थोडी देर के लिए आराम करने के उद्देश्य से सृष्टि कार्य को थोडी देर तक रोकना चाहते थे। नेत्र बंद किए। बस अचानक पद्मसंभव को अनियंत्रित नींद आ गयी। ब्रह्म देव को इस रूप में नींद आने पर तब तक निर्मित सृष्टि पूरी तरह अस्तव्यस्त हो गयी। सूर्य चंद्रों का गति-मार्ग बदल गया। मेघों ने अतिवृष्टि की। पूरा विश्व जलमय हो गया। जल प्रलय के कारण पूरा भूखंड डूब गया।

सनक, सनंदादि ब्रह्म मानस पुत्रों के शाप वश जय और विजय हिरण्याक्ष और हिरण्य कश्यप के रूप में जन्म लेकर लोक कंटक बने।

श्रीहरि के प्रति द्वेष पालनेवाले ये दोनों ऋषि-मुनियों के तप को भंग किया। मुनियों की वाटिकाओं को ध्वंस किया। यज्ञ-यागादियों का नाश किया। मंदिरों को तोडा। आदेश किया कि मंदिरों में किसी देवता की पूजा नहीं करनी चाहिए। सिर्फ अपनी ही पूजा करने का आदेश दिया। इस रूप में आदेश देने के साथ साथ सभी को अनेक रूपों में सताया। इस में हिरण्याक्ष नामक राक्षस ने जल प्रलय में डूबनेवाले भूखंड को गेंद बनाया। उस गेंद से वह खेलेगा, पीटेगा, हवा में उडायेगा, लुढकायेगा। इस रूप में वह नाना भीभत्स करने लगा। इस से बढकर जल गर्भ में रहनेवाले भूखंड को पाताल ले गया।

इन अत्याचारों से भूदेवी परेशान हो गयी। दुखी हो गयी। ''पाही ! पाही! रक्षा! रक्षा!'' कहती हुई श्रीमहाविष्णु की हजारों बार प्रार्थना की है। भूदेवी के साथ भूखंड़ पर स्थित सकल जीव जंतु हिरण्याक्ष के अत्याचारों से परेशान हो गये। कई रूपों में श्रीमन्नारायण की शरण माँगे।

इस तरह हजार युगों का समय बीता। रात कट कर सुबह होने पर, दिन का समय शुरु होने पर, ब्रह्म देव की आंखें खुल गयीं। यह क्या अनर्थ हो गया! मुझे कैसे नींद आ गयी? ये कौन सी चीखें और अक्रंदन हैं। ब्रह्म देव को बहुत आश्चर्य हुआ। स्वामी! तुम ही अब हमारी रक्षा कर सकते हो, कहते हुए श्रीमहाविष्णु की शरण मांगी।

भूखंड के अक्रंदन आनंदधाम श्रीवैकुंठ में प्रतिध्वनित हुए। एक तरफ भूदेवी की वेदना! दूसरी तरफ जीवराशियों के अक्रंदन! एक और तरफ ब्रह्म देव की शरणागति!

श्रीमन्नारायण भक्त वत्सल हैं न! भक्त की प्रार्थनाओँ को अनसुना कैसे करेंगे! सुन कर कैसे छुप रहेंगे! भक्तों की मनोवेदना से श्रीमन्नारायण का हृदय स्पंदित हो गया। बस अगले ही क्षण में उन्हें उग्र क्रोध आया। अत्यंत भयानक श्वेत वराह रूप को धारण किया। ऊपर की तरफ वक्र सफेद दांतों के साथ, पूरे ब्रह्मांड को प्रतिध्वनित कर सकनेवाले भयंकर गर्जनों से, भीम आकार के साथ श्रीमन्नारायण श्वेत वराह अवतार धारण करके प्रलय सागर जल में डूब कर पाताल लोक पहुंचे। वहाँ से भूखंड का उद्धार करके अपने नुकीले दांतों पर रखकर ऊपर लाते समय हिरण्याक्ष ने उन्हें रोका। रोकनेवाले हिरण्याक्ष के साथ वराह स्वामी ने घमसान युद्ध किया। अपने नुकीले दांतों से हिरण्याक्ष को मारना ही नहीं भूखंड को अपने दांतों पर रखकर पानी के ऊपर ले आए।

वराह स्वामी हिरण्याक्ष का वध करके, भूखंड का उद्धार करते समय देवतागण ने दुंदुभियाँ बजायीं। यक्ष, किन्नर, किंपुरुषों ने मंगल गीत गाए। पूष्पों की वर्षा की। ब्रह्मादि देवतागण वहाँ पहुँचकर आदि वराह स्वामी की अनेक रूपों में स्तुति की। फिर महा आवेश में काँपनेवाले उस वराह स्वामी की उग्रता कम नहीं हुई। उस समय श्वेत वराह स्वामी अवतार में श्रीहरि के स्पर्श से, दांतों पर गतिमान भूदेवी पुलकित हो गयी। आनंदित हो गयी। संतोष का अनुभव किया।

''हे स्वामी! वराह देव! हिरण्याक्ष से मेरा उद्धार करने से बडा संतोष हुआ। क्योंकि मैं उस दुष्ट राक्षस के कारण कई युगों से अनेक बाधाओं को झेल रही थी। उन की यातानाओँ से मेरा शरीर नष्ट हुआ है। मुझ पर रहनेवाली जीवराशि क्षोभ का शिकार हुई। इस रूप में अनेक

युगों तक मैं ने कष्ट झेले। ऐसे में मेरी प्रार्थना सुनकर तुम विचित्र, चमत्कार, अद्भुत तथा आश्चर्यकारी रूप में अवतरित हुए। हे श्रीहरि! तुम इस अवतार में अत्यंत भयानक हो। अति उग्र लग रहे हो। अब इस प्रकार के रूप की आवश्यकता हुई। इतने भयानक रूप में ही तुम ने हिरण्याक्ष का आसानी से वध किया। उस राक्षस का संहार करनेवाला तुम्हारा दिव्य रूप आकर्षणीय है। लोक कल्याण के लिए तुम ने यह अवतार लिया। हे वराह रूपी भगवान, मैं तुम को पति के रूप में मान रही हूँ। मुझे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कीजिए। हे देव! आप के अवतार के कारण हिरण्याक्ष की बाधा दूर हो गयी। इसलिए परम शांत होकर इसी रूप में मुझ से परिणय कीजिए।'' वराह स्वामी के दांतों पर भखंड के रूप में स्थित भूमहालक्ष्मी ने अनेक रूपों से में प्रार्थना की।

''हे भूमहालक्ष्मी! हिरण्याक्ष से तुम्हारी रक्षा करने हेतु, तुम्हारा उद्धार करने हेतु ही मैं ने श्वेत वराह अवतार लिया है। भीकर उग्रवराहावतार से हिरण्याक्ष का वध करके विश्व का कल्याण किया। मुख्य रूप से तुम्हारे कारण ही यह वराहावतार आविर्भूत हुआ। तुम्हारी इच्छा के अनुसार तुझे अपनी देवेरी के रूप में स्वीकार करूँगा। तुम्हारे साथ रहते हुए भू वराहस्वामी के रूप में प्रचलित हो जाऊँगा। यहाँ इस भूलोक में रहते हुए भक्तों को दर्शन देता रहूँगा। आज से यह दिव्य क्षेत्र हे भूदेवी! तुम्हारे नाम के साथ ''भू वराह क्षेत्र'', ''आदिवराह क्षेत्र'', या ''श्वेतवराह क्षेत्र'' आदि अनेक नामों से पुकारा जाएगा। इस के अलावा यह पुण्य क्षेत्र आगे आनेवाले अवतार के लिए प्रधान पीठ या मंच बनेगा।'' कहते हुए बगल में ही भक्ति प्रपत्ति से नमस्कार मुद्रा में खडे गरुड से वराह स्वामी ने कहा -

''हे पक्षिराज! अनेक अवतारों से मेरे साथ रहते हुए मेरी सेवा करते आये हो। देखो इस वराह अवतार में भूदेवी की रक्षा करके उद्धार किया है। असल में इस अवतार को भूदवी के लिए ही लिया है। इसलिए इन्होंने मुझे पति के रूप में माना है। मैं ने इसे स्वीकार किया है। भूदेवी के साथ इस अवतार में कुछ समय तक मैं यहीं रहना चाहता हूँ। इसलिए हे गरुड! तुम तुरंत वैकुंठ जाओ। वहाँ के मेरे क्रीडाचल को यहाँ ले आओ! श्रीमहालक्ष्मी को इस के बारे में बताओ। अगर वह यहाँ आना चाहती है तो उन्हें लेते आओ! अब शीघ्र चले जाओ।'' गरुड को यह आदेश था।

पक्षींद्र तुरंत श्रीवैकुंठ के लिए उड चला।

वैकुंठ पहुंच कर गरुड ने श्रीमहालक्ष्मी को भूलोक की घटना के बारे में बताया। ''वैकुंठ में रहनेवाले क्रीडाचल को ले जाने की आज्ञा स्वामी की है!'' इसलिए मैं आया हूँ, कहा गरुड ने।

श्रीमहालक्ष्मी भी गरुड के साथ चली। अपने मूल स्वारूप को वैकुंठ में ही छोडकर सिर्फ अंश रूप से वे चली आयी हैं। वैकुंठ परिवार से, श्रीलक्ष्मी देवी समेत क्रीडाद्रि के साथ गरुड भूलोक पहुँच गया। सुवर्णमुखी नदी के तट पर उत्तर भाग में श्रीहरि के द्वारा सूचित जगह पर अपने साथ लाये पहाड को गरुड ने प्रतिष्ठित किया।

श्वेत वराह स्वरूपधारी श्रीहरि ने अपने दांतों पर भूखंड आकार में स्थित भूमहालक्ष्मी समेत गरुड के द्वारा प्रतिष्ठित क्रीडाचल पर अधिरोह किया।

इस बीच वहाँ ब्रह्मा, इंद्रादि दिक्पाल, यक्ष, किन्नर, गंधर्व आदि, ऋषि, योगी - और अनेक वहाँ आये। आदिवराह रूप में वक्र होकर

नुकीले सफेद दांतों से चारों तरफ घूमनेवाले भूखंड से विचित्र रूप से प्रकाशित होते दर्शन देनेवाले श्रीमहाविष्णु का वहाँ पधारे सभी ने अनेक रूपों में कीर्तन किया। भय जगानेवाले भयानक वराह अवतार से हिरण्याक्ष का वध करके भूदेवी की रक्षा करनेवाले लोक कल्याण कार्य की सब ने प्रशंसा की।

''हे श्वेतवराह स्वामी! आप को अनंत कोटि प्रणाम! हे श्रीहरि आप की लीलाएँ विचित्र हैं! परमाद्भुत हैं!''

महाक्रूर हिरण्याक्ष का वध करने के लिए आप का यह उग्र रूप उचित ही है। अत्यंत नुकीले और लंबे इन दांतों से आप ने अत्यंत आसानी से हिरण्याक्ष का संहार किया है। आप का यह कार्य अत्यंत स्तुत्य है स्वामी!

''हे वराहदेव! आप इस अवतार में बहुत सुंदर हैं। बहुत आकर्षणीय भी हैं। आप के रूप का दर्शन आनंद देनेवाला और आसक्ति जगानेवाला है। लेकिन वह भय भी जगा रहा है। भयंकर वह राक्षस आप के हाथों से मारा गया है न स्वामी! आप के अवतार का लक्ष्य पूरा हो गया है न स्वामी! इसलिए अब इस भयानक रूप को छोडकर प्रशांत रूप में दर्शन दीजिए स्वामी! असल में देवतागण, मुनिगण, योगी, - सभी आप के इस भयानक रूप से डरते हुए आप के पास नहीं पहुँच पा रहे हैं। हे वराह रूपी! श्रीहरी! हमारी यही प्रार्थना है। लोक कल्याण के लिए हिरण्याक्ष को मारने के उन्नत कार्य में सफल होनेवाले इस वराह रूप में परम शांत बनकर दर्शन दीजिए स्वामी!'' देवतागण ने प्रार्थना की। आदि वराह स्वामी के दांतों पर चारों तरफ घूमनेवाला भूखंड आकार में स्थित श्रीमहालक्ष्मी की स्तुति भी इस रूप में की -

''माई! श्वेतवराह स्वामी जी के नुकीले दांतों पर भूगोल आकार में चारों तरफ घूमती प्रकाशित होनेवाली हे भूमाता! आप के अनुग्रह से ही श्रीहरि ने वराहावतार लिया। अद्भुत एवं आश्चर्य कारक इस अवतार को इस से पहले किसी ने दर्शन नहीं किया।

हे भूमहालक्ष्मी! तुम्हारे लिए तुम्हारी रक्षा के लिए श्री महाविष्णु विशिष्ट और विचित्र रूप में भयानक वराहावतार को धारण किया। उस क्रूर राक्षस को अपने नुकीले दांतों से संहार करके तुम्हारी रक्षा कर फिर उन्हीं दांतों से तुम्हारा उद्धार किया है!

हे वसुंधरा! सर्वसंपदाओं को अपने में निक्षिप्त करनेवाली तुम ही हो! हे भूमहालक्ष्मी! तुम में और श्रीमहालक्ष्मी में अभेद है। तुम दोनों अभिन्न होने के साथ साथ दोनों एक ही है! सिर्फ बाहरी रूप से तुम दोनों अलग अलग दिखाई देती हैं!

श्रीविष्णु भगवान के लिए अत्यंत प्रिय लगनेवाली! हे भूदेवी! आपने अनेक रत्नों को अपने गर्भ में धारण किया है। समस्त शुभों को देनेवाली मंगल स्वरूपिणी आप ही हैं। आप के गर्भ में निक्षिप्त अनेकानेक संपदाओं के साथ सदा रहनेवाली माई! आप के विश्व रूप को हमें दिखाकर आनंद प्रदान कीजिए माई!

रत्नगर्भस्थिते लक्ष्मि परिपूर्णहिरण्मयि।
समागच्छ समागच्छ स्थित्वाऽशु पुरतो मम।।

रत्नगर्भा के रूप में प्रचलित, भूगोल रूप में, वराह स्वामी के नुकीले दाँतों पर प्रकाशित होनेवाली हे हिरण्मई! शीघ्र ही आकर हमारे सामने दिव्य मंगल रूप को धारण कर श्रीवराह स्वामी के साथ हमारे प्रति संपूर्ण रूप में प्रसन्न होकर अनुग्रह कीजिए माई!

संपूर्ण भूखंड पर स्थित निक्षेपों के रूप में, निधियों के रूप में, पशु-पक्षियों के रूप में, फसल-संपदाओं के रूप में व्याप्त हे भू महालक्ष्मी! शीघ्र ही पधारिए। माई जगज्जननी! आप के सेवकों के सेवक बनकर आप के दर्शन शीघ्र करने की हमारी इच्छा की पूर्ति कीजिए। इस के अलावा, आप के लिए ही विशिष्ठ रूप से आदि वराहावतार लेनेवाले श्रीहरि के बगल में आप के होते, आप दोनों के दर्शन करने की अत्यंत कुतूहलता बनी रहती है माई! भूमंडल आकार से अलग दिव्य मंगल मूर्ति के रूप में तुरंत श्री वराह स्वामी के बगल में पहुँच कर हमारे लिए दर्शन भाग्य प्रदान कीजिए।

श्री वराहस्वामी के नुकीले दांतों पर गोलाकार में चारों तरफ घूमनेवाली हे भू महालक्ष्मी! कर-चरणादि अवयवकों के साथ सशरीरी बनकर दिव्य मंगल रूप धारण करके श्वेत वराह स्वामी के बगल में पहुँचकर आप के दर्शन से हमें धन्य बनाइए माई!'' - इस रूपमें देवता गण ने दुष्ट संहार करनेवाले आदि वराह स्वामी की, उस स्वामी के दाँतों पर विराजित भूमाता की अनेक रूपों में स्तुति पूर्वक प्रार्थना की।

सभी देवताओं की प्रार्थनाएँ सुनकर आनंद के साथ आदि वराह स्वामी ने उन लोगों से इस प्रकार कहा- -

''हे देवतागण! हिरण्याक्ष से भूदेवी की रक्षा करने के लिए विकृत इस रूप में मैं ने अवतार लिया। मेरे इस आदि वराहावतार के लिए

भूमहालक्ष्मी ही मुख्य जिम्मेदार है। इसलिए भूमहालक्ष्मी समेत यहाँ इस क्षेत्र में बसकर सभी भक्तों को प्रत्यक्ष दर्शन देने का भाग्य प्रदान करना चाहता हूँ। उन सब की मनौतियों की पूर्ति करना चाहता हूँ। आप सब मेरे संकल्प के अनुकूल ही वर माँग रहे हैं। इसलिए मैं स्वीकार कर रहा हूँ। भू महालक्ष्मी मेरे वामांक पर बैठ कर'श्री भूवराहास्वामी', के नाम को सार्थक बनायेंगी। 'आदि वराहस्वामी' और 'श्वेतवराह स्वामी' नाम से जन जन मुझे पुकारेंगे।

अब से, आज से, कलियुगांत तक यह दिव्य क्षेत्र भूवराह क्षेत्र, आदि वराह क्षेत्र, श्वेत वराह क्षेत्र नामों से लोकप्रिय हो रहेगा।''

वराह स्वामी ने अपने उग्रत्व को उपशमन करके सौम्य रूप को धारण किया। तुरंत श्रीवराह स्वामी के नुकीले दांतों पर गोलाकार में रहनेवाली भू महालक्ष्मी ने करचरणादि अवयवों के साथ दिव्य मंगल सौम्य रूप को धारण किया। तदुपरांत वहाँ सब के देखते हुए श्री वराह स्वामी की जांघ पर भू महालक्ष्मी अभय, वरद हस्त मुद्राओं के साथ अपने रूप को दिखाती बैठ गयी। इस महोज्वल प्रसंग को देखते हुए आकाश संचारी देवतागण ने फूलों की वर्षा की। दुंदुभियाँ बजायीं। अप्सरसाओं ने नाट्य किया। भक्तों ने जय जयनाद किया। अनेक रूपों में कीर्तन किया। भू महालक्ष्मी समेत आदिवराह स्वामी ने वहाँ मौजूद सभी भक्तों की कामनाओं की पूर्ति की। भक्त सभी दिव्य मनोरथ सिद्धियों को प्राप्त करके अपने अपने लोक लौट गए।

सब के लौट जाने के बाद, श्रीवैकुंठ से गरुड के साथ वहाँ आकर बगल में खडी श्रीमहालक्ष्मी से वराह स्वामी ने कहा -

''हे श्रीमहालक्ष्मी! तुम्हारा यहाँ आना मुझे आनंद दे रहा है। समुचित भी लग रहा है। तुम मेरे इस विकृत वराह रूप को देखकर भयभीत हो जाओगी, जुगुप्सा करोगी समाझा था। इसलिये गरुड के साथ यहाँ आने के लिए तुझे नहीं बुलाया। फिर भी तुम चली आयी। मुझे संतोष हुआ है।'' वराह स्वामी ने मुस्करा दिया।

''हे स्वामी! आप किसी भी रूप में क्यों न हो, किसी भी अवतार में रहें आप के साथ ही मैं रहूँगी। आप जहाँ रहेंगे मैं वहाँ रहूंगी। आप के साथ ही मेरा लोक है! आप को छोडकर मैं क्या एक क्षण भी अलग रह सकती हूँ? इसलिए मैं भी वैकुंठ से आ गयी हूँ। लोक कल्याण के लिए धारण किए इस अवतार में भूदेवी के साथ मुझे भी स्वीकार की जिए।'' कहती हई श्री महालक्ष्मी ने प्रार्थना की।

'देवी! हे आदि लक्ष्मी! राक्षसत्व से व्यवहार करनेवाले दुष्टों से इस लोक की रक्षा करने के लिए मैं अभी कुछ समय यहाँ रहना चाहता हूँ। इसलिए तुम को भी मैं स्वीकार करता हूँ। आओ!'' कहते हुए उन्होंने श्री महालक्ष्मी का आलिंगन कर अपने वक्षःस्थल पर व्यूह लक्ष्मी के रूप में धारण किया।

उस दिन से वक्षःस्थल व्यूह लक्ष्मी समेत आदि वराह स्वामी अपने वामांक (बाए जांघ पर) पर भूदेवी को धारण करके वहीं बस गए। भक्तों को सौम्य रूप में दर्शन देते हुए बाकी समय में लीलामानुष रूप में क्रीडाचल पर विहार करते रहे।

सारांश है कि 'भू महालक्ष्मी' के कारण ही श्रीआदिवराह क्षेत्र का आविर्भाव हुआ है।

इस रूप में कुछ युगों का समय परमानंद से बीत गया।

उस के बाद श्रीवैकुंठ से श्रीमहालक्ष्मी धरती पर रहने के लिए आने के कारण, श्रीवेंकटेश्वर स्वामी भी वराह क्षेत्र में अवतरित हुए। उस दिव्य गाथा को आगे जानेंगे।

गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!!

((((()))))

श्रीवैकुंठ में श्रीमहालक्ष्मी

वह श्रीवैकुंठ है- - - -

हमेशा की तरह एक दिन, नित्य आनंदधाम के अभ्यंतर मंदिर में एकांत में श्रीलक्ष्मी और नारायण दोनों सरस विनोद में तन्मय थे -

इतने में कहीं से - - किसी लोक से कठोर आक्रंदन सुनाई पडे। उन को सुनते ही श्रीमहालक्ष्मी वेदना का शिकार हो गयी। अपने स्वामी से कुछ दूर हटते उन्होंने इस प्रकार कहा -

''स्वामी! ये आर्तनाद क्या हैं? किस लोक से सुनाई पड रहे हैं। यहाँ तक व्याप्त हो सुनाई दे रहे हैं। मेरा मन व्याकुल हो रहा है स्वामी!''

''देवी! ये भूलोक से आनेवाली आवाजें हैं। उस लोक में हर दिन व्याप्त होनेवाली वेदनाएँ! आर्ती, आशांतियों के प्रभाव से मनुष्य का जीवन वेदना से भर गया है। देवी! उन के आर्तनाद इस वैकुंठ तक व्याप्त हो रहे हैं। ये और तीव्र होकर आगे आनेवाले कलियुग में समस्त भूलोक को तितर बितर करने की संभावना है देवी!''

''ऐसे खतरे का कोई निवारण नहीं क्या स्वामी!'' श्रीमहालक्ष्मी ने चिंतित हो पूछा।

''क्यों नहीं देवी? है! उस के लिए सिर्फ एक ही उपाय है। भूलोक में हमें अवतार लेना है। इस का यही एक मात्र समाधान है। किंतु पहले के अवतारों की तरह नये नये रूपों में नहीं। प्रस्तुत इस वैकुंठ में हम जिस रूप में हैं, उसी रूप में हम दोनों को धरती पर अवतरित होना होगा। यही इस समस्या का समाधान है देवी!''

''जी हाँ। स्वामी! जी हाँ। आप जैसा कहेंगे वैसा ही होगा! आप के साथ मैं भी। बीते कई युगों में, सभी अवतारों में मैं ने आप का ही अनुसरण किया हैं। आगे भी आप के साथ अवश्य चलूँगी। स्वामी!''

''नहीं। श्रीमहालक्ष्मी नहीं नहीं। प्रस्तुत धरती पर सीधे अवतरित होने के संदर्भ में पहले तुम को धरती पर जाना होगा। उस के बाद ही मैं तुम्हारा अनुसरण करते हुए धरती पर चला आऊँगा।''

''यह कैसा विचित्र है! स्वामी! मेरे पीछे आप का आना! यह लोक विरुद्ध है न!''

''हे श्रीलक्ष्मी यह लोक विरुद्ध नहीं है। विरुद्ध बिलकुल नहीं है। पूर्व युगों में एक या दो, दुष्टों के संहार के लिए मैं अवतरित हुआ था। उन अवतार कार्यों में तुम ने मेरा अनुसरण किया। लेकिन आगे आनेवाले कलियुग में एक दो नहीं है, भूलोक भर दुष्ट व्याप्त होंगे। रहेंगे। युग लक्षणों के अनुसार, काल स्वभाव के अनुसार मानवों में अधिकांश भाग में राक्षस प्रवृत्ति से, दुष्ट लक्षणों से विच्छृंखल होकर व्यवहार करेंगे।

उन से भक्तों को किसी प्रकार की हानि और आपदा न हो। उन की अच्छी देखभाल करनी चाहिए। उस के साथ साथ उन दुष्टों में भी परिवर्तन लाकर उन्हें अच्छे मार्ग में लाना है। तभी लोक कल्याण सिद्ध होगा। यही हमारा अवतार का लक्ष्य है। इतना ही नहीं, श्रीमहालक्ष्मी तुम्हें अकेली ही पहले भूलोक जाकर दुष्ट शिक्षण और शिष्ट रक्षण करने का एक महाकार्य करना है। उस के बाद ही मैं धरती पर आकर तुम्हारे साथ मिलकर कल्याणार्थ और भी अनेक कार्य करूँगा।

कुछ भी हो इस अवतार में सिर्फ तुम ही प्रधान सूत्रधार बननेवाली हो, लक्ष्मी! तुम्हारे कारण श्री वैकुंठ भूलोक में प्रतिष्ठित हो जाएगा। वही आनेवाले कलियुग में भलोक वैकुंठ के रूप में प्रचलित होगा।

उस अवतार में मेरा कोई विशेष नाम नहीं होगा। तुम्हारे नाम के साथ मैं भी सार्थक नामवाला बनूंगा। हे देवी! तुम भूलोक जाने के लिए तैयार हो जाओ।''

''जी स्वामी! लेकिन मेरा एक संदेह है। मेरे जाने के कितने समय के बाद आप आयेंगे। कब मेरे साथ मिलेंगे। कहाँ मिलेंगे। मुझे भय लग रहा है स्वामी! आप को छोडकर मैं क्या एक क्षण भर भी रह सकती हूँ!''

''अवश्य देवी! अवश्य। कुछ समय के लिए अवश्य छोडकर रहना होगा। लोक कल्याण के लिए यह बिछुडन अनिवार्य है। फिर भू लोक में तुम्हारे साथ मिलकर मैं पूर्ण रूप से प्रकाशित हो जाऊँगा। तब तक हम दोनों का बिछुडना अनिवार्य है। भूलोक जाने के लिए तैयार हो जाओ। देवी! किसी भी क्षण मुझे छोडकर जाने का समय आ सकता है। तैयार हो जाओ देवी!'' कहते हुए दोनों एकांत में दीर्घ विचार में डूब गए। इस बीच श्रीवैकुंठ में सोने के द्वार के पास कोई तीव्र हलचल शुरु हो गया। श्रीमहालक्ष्मी और श्रीमन्नारायण का एकांत भंग हो गया। उन का संवाद रुक गया।

किसी भृगु मुनि नामक मुनि द्वारा उग्र रूप से तीव्र क्रोध में किया हलचल ही था वह।

वह योगी कौन है? ऐसा व्यवहार क्यों किया? उस का कोई कारण है? जी हाँ, है, लीजिए हत्तांत!

((((()))))

आदिलक्ष्मी का रूठना

भृगु महर्षि ने सत्य लोक में ब्रह्मदेव की, कैलास में परम शिव की परीक्ष लेने के बाद वैकुंठ में प्रवेश किया। तब तक निराशा एवं निस्पृहा के शिकार हुए भृगु को वैकुंठ में कुछ और निरादर मिला। द्वार पालक जय विजय ने उसे रोका। फिर भी उन की परवाह किए बिना बडे गुस्से के साथ वैकुंठ के अभ्यंतर मंदिर में वह घुस गया।

श्रीवैकुंठ में क्षीर सागर में आदिशेष अपने सहस्रों फणों को छातों की तरह और शरीर को शय्या की तरह बना कर श्रीलक्ष्मी और श्री मन्नारायण की सेवा करने का मनोहर दृश्य नेत्र पर्व कर रहा था। शेष शय्या पर श्रीमहाविष्णु लेटकर अर्धनिमीलित नेत्रों से लक्ष्मी की तरफ देख रहे थे। श्रीमहालक्ष्मी वैकुंठनाथ के वक्ष पर सर रखकर, उस स्वामी की आँखों में आँखें डालकर, कुछ बात कर रही थीं। उसे विष्णु भगवान बडे चाव से तथा आसक्ति से सुन रहे थे।

अचानक अंदर घुस आये भृगु ने अनेक रूपों में श्रीलक्ष्मीनाथ की स्तुति की और सिरियों की देवता श्रीमहालक्ष्मी की भी।

किंतु उस की स्तुति को उन्होंने अनसुना कर दिया। यहाँ तक की उन की परवाह तक नहीं की। इससे बढकर वैकुंठ में भृगु के प्रवेश से अनभिज्ञ बन कर उन आदि दंपति ने व्यवहार किया। दोनों अपने आप में लीन रहे। तभी श्रीहरि ने श्रीमहालक्ष्मी को अपने वक्ष से लगाया।

पहले से भृगु क्रोधी थे। तब तक दो लोकों में निरादर का शिकार होकर और गुस्से में हैं। अब इस लोक का वातावरण भी उसे भिन्न नहीं

लगा। बस भृगु क्षणिकावेश का शिकार हो गया। ‘‘मैं कहाँ? परम पुरुष श्रीमन्नारायण कहाँ?’’ यह विक्षचण ज्ञान भी उस ने खोया। बस! अचानक दौड कर बडे गुस्से के साथ श्रीमहाविष्णु के वक्ष पर लात मारने के लिए पैर उठाया।

एकांत का समय। बेसुध होकर श्रीपति के वक्ष पर सर लगाकर परवश में रहनेवाली श्रीमहालक्ष्मी इस हटात घटना से चौंक पडीं। श्री हरी से दूर हट गई। गुस्सैल उस मुनि का पैर विष्णु भगवान के वक्ष पर जाकर लगा।

इस विपरीत से पहले ही जागकर श्रीहरि तुरंत शय्या से उठ खडे हो गए। पूँछ दबे साँप की तरह गुस्सैल भृगु को मुस्कराते हुए नमस्कार किया। असावधानी में उन के आगमन को नहीं पहचानना अपना ही अपराध बताया। क्षमा की याचना की। मुनि को शेष पर बिठाकर शांत किया। उन के पैरों को दबाते हुए उस मुनि के चरणों में स्थित अहंकार नेत्र को मसल दिया। बस मुनि को अपने अज्ञान और अहं के पर्यवसान के बारे में पता चला। उस ने भी श्रीमहाविष्णु से क्षमा की याचना की। अनेक रूपों में श्रीमहालक्ष्मी और श्रीमन्नारायण का कीर्तन करके वैकुंठ लोक से चले गए।

निरंतर अनपाइनी के रूप में श्रीहरि के वक्ष पर रहनेवाली लक्ष्मी को प्रभु के वक्ष पर मारनेवाले मुनि को दंड दिए बिना सम्मान करके भेजनेवाले श्रीविष्णु पर गुस्सा आया। इस से श्रीमहालक्ष्मी बडी वेदना की शिकार हुई। मुनि के पाद ताडन से अपवित्र हुए श्रीहरि के वक्ष पर मैं

नहीं रह सकती समझकर श्रीमहालक्ष्मी रूठ कर वैकुंठ को छोड भूलोक के लिए निकली।

पति-पत्नी के बीच अन्यों के आने से उन के बीच में समझौता कराने से उन का दांपत्य जीवन ठीक चलता है। अगर समझौता नहीं हो तो श्रीमहालक्ष्मी और श्रीमन्नारायण की तरह सदा विरह का शिकार होना पडेगा। उन दोनों को एक दूसरे से अलग होकर एकाकी हो अनेक बाधाओं का सामना करना पडेगा।

((((()))))

धरती पर उतरायी संपदाओं की माई!

अपने को तथा श्रीवैकुंठ को छोडकर जाना उचित नहीं है, कहते हुए परंधाम ने अनेक रूपों में श्रीलक्ष्मी से प्रार्थना की। श्रीमहालक्ष्मी ने उन की बात को बिलकुल नहीं माना। अपमान भार से जिद पकडी। अपने स्वामी श्रीमन्नारायण की बात को भी उन्होंने ठुकरा दिया। श्रीहरि की प्रार्थना को ठुकरा कर भूलोक जाकर वहाँ से पाताल में कपिल मुनि के आश्रम में पहुँच गयीं।

श्रीमहालक्ष्मी के रूठकर वैकुंठ से चले जाने से श्रीवैकुंठ कलाविहीन हो गया। सिरि श्री के बगैर वैकुंठ में श्रीहरि की स्थिति अति दुर्बर हो गयी। प्रत्येक पल असीम निराशा और निस्पृहा के छाने से अत्यंत असहनीय बना। वे सन्नाटे एवं अकेलेपन के शिकार हुए। तीव्र विरह से बाधित होकर विष्णु भगवान ने श्रीमहालक्ष्मी को तलाश कर लाने के लिए वैकुंठ छोडने का निर्णय लिया। बस!

लक्ष्मी! लक्ष्मी! कहते सनकी आदमी की तरह बडबडाते वैकुंठ छोडकर लक्ष्मीदेवी के चले मार्ग पर धरती पर चले आये। उन के लिए सब जगह तलाश की। ढूंढ ढूंढ कर थक गए। फिर भी उन का कोई पता नहीं चला। लक्ष्मी देवी के बिना वैकुंठ लौट जाना बाधा की बात समझी। असल में लक्ष्मी देवी बगैर वैकुंठ लोक उन को व्यर्थ लगा। इस तरह सोचते, आहें भरते घूम घूम कर आखिर श्रीनिवास भूवराह क्षेत्र वेंकटाचल पहुँच गए।

विष्णु भगवान से रूठकर श्रीमहालक्ष्मी श्रीवैकुंठ को छोड सीधा पाताल में कपिल मुनि के आश्रम में पहुँच गयी। उस महर्षि ने उन का

स्वागत ससम्मान करके विचलित लक्ष्मी देवी को ढाढस दिलाया। उन के अभीष्ट के अनुसार जितने दिन चाहे उतने दिन आश्रम में ही रह कर एकांत में तप करने की सलाह दी।

इस तरह में पाताल पहुँचनेवाली श्रीमहालक्ष्मी प्रशांत वातावरण में तप करती हुई अज्ञात रहने लगी। कुछ समय बीत गया।

अगत्स्य आदि महर्षिगण ने पाताल के कपिल महामुनि के आश्रम जाकर, वहाँ तप करनेवाली श्रीमहालक्ष्मी के दर्शन कर प्रार्थना की - ''माई! जगन्माता! शिवालय के रूप में, यक्षालय के रूप में, पद्मावती पुर के रूप में, दक्षिण काशी के रूप में प्रचलित करवीरपुर में अर्चा मूर्ति के रूप में बसकर भक्तों का अनुग्रह कीजिए। काशी से भी यह क्षेत्र अतिमहत्व का है। काशी में सिर्फ मुक्ति मात्र ही सिद्ध होती है। यहाँ तो कामनाओं की पूर्ति के साथ साथ मुक्ति भी प्राप्त होती है। उससे बढकर काशी में सिर्फ शिव अकेले रहते हैं। यहाँ शिव के साथ साथ समस्त देवतागण और शक्ति भी हैं। काशी से करवीरपुर एक गेहूँ के धाने भर वजन में ज्यादा ठहरता हैं। यह बात स्वयं विष्णु भगवान ने बातायी है। इस के अलावा दक्ष यज्ञ के समय सती देवी की आँखें जहाँ गिरी थीं वही करवीरपुर है। इस क्षेत्र का दर्शन करना अनेक रूपों में श्रेष्ठ है। भक्तों की प्रार्थनाओं को स्वीकार कर ''श्रीमहालक्ष्मी'' करवीरपुर में अर्चा मूर्ति रूप में कुछ कलांशों के साथ बसकर भक्तों पर अनुग्रह करती रही हैं।

ब्रह्मदेव ने गयु, लवण और कोलहु नामक तीन व्यक्तियों को अपने मानस पुत्रों के रूप में सृजन किया। किस मुहूर्त में उन का सृजन किया पता नहीं वे तीनों राक्षस प्रवृत्ति के हुए। ये तीनों महा शक्ति संपन्न होने

के साथ साथ क्रूर भी हैं। उन में से पहले गयासुर और लवणासुर का विष्णु भगवान ने संहार किया। अब सिर्फ कोलासुर ही रह गया है।

कोलहु का अर्थ है सूअरों को मारनेवाला। दुष्ट एवं महावीर कोलहु ने विष्णु पर तथा देवताओं पर शत्रुता बढायी। उन को यातना देने की पद्धतियों को ढूंढ निकाला। कुछ भी हो वह ब्रह्म का मानस पुत्र है न! इसलिए उस ने सोचा कि इन पर विजय सिर्फ तप द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

अपने शासनाधीन पद्मावतीपुर को अपने पुत्रों को सौंप कर तप करने चला गया। उस के जाने के कुछ दिनों में 'सुकेशी' नामक एक राक्षस ने कोलहु के सौ पुत्रों को मारकर राज्य पर कब्जा किया।

दुष्ट सुकेशी आसानी से राज्य प्राप्ति होने से और विच्छृंखल हो गया। वीर विहार करते राज्य का सर्वनाश किया। धर्म व्यवस्था को छिन्नभिन्न किया। देवताओं को कई प्रकार की पीडाएँ देकर उन्हें सताया। देवतागण उस के आतताई कार्यों से भयभीत होकर चारों दिशाओं में भाग गए। लोगों ने सुकेशी के द्वारा अनेक बाधाओं का सामना करते हुए समझा कि उससे कोलहु कुछ ठीक है। बस कोलहु का इंतजार करने लगे। इतने में ब्रह्म देव से अनेक वर प्राप्त कर कोलहु लौट आया। आते ही सुकेशी नामक राक्षस द्वारा अपने पुत्रों का वध और राज्य पर कब्जा, जानकर महोग्र होकर सुकेशी का पुत्र - मित्र समेत वध करके फिर से अपने राज्य पर अधिकार प्राप्त किया। लेकिन देवताओं के साथ उस की शत्रुता कम नहीं हुई। इसलिए देवताओं पर भी उस ने यद्ध प्रकट किया। बडे वीर होने के बावजूद भी कोलहु देवताओं को पराजित नहीं कर

सका। कारण जानने में असमर्थ कोलहु परेशान हो गया। उसने तलाश करना शुरु किया कि वह क्यों देवताओं पर विजय प्राप्त नहीं कर पा रहा है। परिणामतः कारण समझ गया।

अपनी राजधानी पद्मावतीपुर (कोल्हापुर) में ही तीनों माताओं की माँ साक्षात श्रीमहालक्ष्मी वैकुंठ से आकर बसी हैं। वही माई देवताओं की रक्षा कर रही हैं। इसलिए वह सरसों के बीज समान भी देवताओं को हरा नहीं पा रहा है। देवताओं पर कैसे विजय प्राप्त करना है, इस पर गंभीरता से सोचना शुरु किया। आखिर कोल्हासुर एक निर्णय पर आया। किसी भी तरह से देवताओं को श्रीमहालक्ष्मी की सुरक्षा से अलग करना चाहिए। इस के लिए तप ही एक मात्र उपाय समझा।

राज्य को करवीर नामक अपने पुत्र के हाथ में सौंप दिया। उस की सहायता के लिए बाकी अपने तीनों पुत्रों को रखकर तप करने चला गया। साक्षात श्रीमहालक्ष्मी को लेकर कठोर तप किया। कोल्हासुर के तप से प्रसन्न होकर श्रीमहालक्ष्मी ने वरदान के रूप में कुछ माँगने के लिए कहा।

''माई! जगन्माता! एक सौ साल पद्मावतीपुर को छोडकर आप को बाहर जाना है। मेरे राज्य में प्रवेश मत करना''- वरदान माँगा। बस श्रीमहालक्ष्मी कोल्हासुर राज्य छोडकर चली गयी। कोल्हासुर ने ब्रह्मदेव से चार पुत्रों का वर प्राप्त किया था। वे ही हैं करवीर, विशालासुर, कालांधक और लज्ञासुर। अपनी आयु को बढते देखकर, पत्नी कादंब की सलाह पर अपने राज्य को कोल्हासुर ने करवीर को सौंपा। उस की सहायता के लिए बाकी तीनों को नियुक्त किया। स्वयं तप करने चला गया।

करवीर के अत्याचार सुकेशी से बढ गये। उसने देवताओं को नाना यातनाएँ दीं। ऋषियों को सताया। मानवों को मारा। नास्तिकता को बढावा दिया। अपने को ही ईश्वर घोषित किया। इस रूप में नाना भीभत्स करनेवाले करवीर पर देवताओं के कहने पर परम शिव ने आक्रमण किया। भाईयों समेत करवीर का उन्होंने वध किया। अपने मरने से पहले करवीर ने अपने नाम से ही 'करवीरपुर' प्रचलित हो ऐसा वर माँगा। शिव जी ने 'हाँ' कह दिया।

उसी दिन से वह करवीरपुर के रूप में प्रसिद्ध हो गया।

तब तक शांत और धर्माचरण रत कोल्हासुर अपने पुत्रों का संहार होने के बाद देवताओं पर टूट पडा। धर्म का ध्वंस किया। यज्ञ-यागादि को नाश किया। राज्य में भयानक वातावरण का सृजन किया। देवतागण ने श्रीमहालक्ष्मी की शरण माँगी। सौ सालों तक उसे कोई संहार नहीं कर सकता, ऐसा वर श्रीमहालक्ष्मी ने उसे दिया था।

विजय विहार करनेवाले कोल्हासुर को समय का बोध नहीं रहा। उस की दुष्टता रोज बढने लगी। किसी की परवाह नहीं करनेवाले कोल्हासुर के सौ साल पूरा होते ही श्रीमहालक्ष्मी ने कात्यायनी, त्र्यंबुलि, केदारेश्वर आदि देवतांश गणों से करवीरपुर पर आक्रमण किया। उस युद्ध में कोल्हासुर समझ गया कि उस का समय आ गया है। लक्ष्मी देवी के हाथों में मरते हुए ''माई! जगज्ञननी! यह क्षेत्र ''कोल्हापुर'' नाम से प्रचलित हो!'' ऐसा वर दो। इस के अलावा इस के बाद इस क्षेत्र में पूर्ण कलाओं के साथ बसकर भक्तों को वर प्रदान करती रहो।'' उसकी प्रार्भना थी। श्रीमहालक्ष्मी ने स्वीकृति देती हुई ब्रह्मास्त्र से उस का संहार किया।

उस दिन से कोल्हापुर साधना क्षेत्र के रूप में, सिद्धि क्षेत्र के रूप में प्रचलित हो गया।

देवतागण ने श्रीमहालक्ष्मी का जय-जय गान किया। श्रीमहालक्ष्मी के लिए देव शिल्पी विश्व कर्मा ने चक्राकार में अद्भुत शिल्पनैपुण्य से एक भवन का निर्माण किया। अत्यंत दिव्य इस भवन के लिए लोहा, पीतल, ताम्र, चांदी, सोना आदि सोलह प्राकारों का निर्माण किया गया। मध्य में नवरत्नों से जडित चिंतामणी गृह का निर्माण किया। मंगल वाद्य घोष के बीच वेद मंत्र पठन के बीच, तीन करोड देवतागण की जय जय कार में सिंह वाहिनी श्रीमहालक्ष्मी अपने उग्र रूप का शमन करके संपूर्ण कलाओं के साथ चिंतामणी गृह में प्रवेश कर रहने लगी। तीन करोड देवता श्रीमहालक्ष्मी की सेवा करते हुए उस क्षेत्र की परिधि में, चारों तरफ अपने अपने स्थान बनाकर शाश्वत रूप से बस गए। उन देवताओं ने अपने अपने नामों से पुण्य तीर्थों की स्थापना भी की।

अष्टादश भुजाओं से, महा उग्र रूप में कोल्हसुर का संहार करनेवाली श्रीमहालक्ष्मी सिर्फ चतुर्भुजी के रूप में, चार हाथों में गदा, ढाल, मातुलंग फल और पान पात्र को धारण कर सिंह वाहन पर स्थानक मूर्ति के रूप में, पश्चिमाभिमुख हो संपूर्ण कलांशों के साथ भक्तों पर अनुग्रह करती रही हैं।

श्रीमहालक्ष्मी को ढूँढते हुए आदिवराह क्षेत्र पहुँचनेवाले श्री महाविष्णु श्रीलक्ष्मीरहित होने के कारण कई बाधाओं के शिकार हो गए, प्रधानतः भूख-प्यास का। रहने के लिए छायादार कुटी का भी अभाव था। घूमते घूमते वेकंटाचल क्षेत्र में स्वामी पुष्करिणी के समीप में इमली पेड के नीचे

पहुँच गए। थके हुए श्रीनिवास ने उस पेड के नीचे स्थित बिल में शरण ली। ध्यान दीजिए कि कौन थे? उन्हें क्या हो गया। कारण कुछ भी हो गृहलक्ष्मी के न होने से पत्नी रहित गृहस्थ का जीवन जिस रूप में बिखर जाता है। इस के लिए श्रीनिवास की गाथा ही एक अच्छा उदाहरण है।

भूख प्यास से तरसनेवाले श्री वेंकटपति की दीन स्थिति को जानकर ब्रह्मदेव और परमशिव तुरंत कोल्हापुर जाकर श्रीमहालक्ष्मी को बताया - ''अब तक कुछ थी नहीं बिगडा। कृपया श्रीनिवास के पास जाइए - यही उनकी की प्रार्थना थी। लेकिन माई श्रीमहालक्ष्मी ने इसे बिलकुल स्वीकार नहीं किया। पर श्रनिवास की भूख - प्यास मिटाने के लिए उन्हें राजी करवाया गया। उन की इच्छा पर श्रीमहालक्ष्मी ने गोपालिका का रूप धारण किया। ब्रह्मदेव गाय बने और शिव बछडा। श्रीमहालक्ष्मी उन्हें उस प्रदेश पर शासन करनेवाले चोल राजा को बेच डाला।

राजा की गायों के साथ यह नयी गाय और बछडा दोनों चरने के लिए जंगल जाने लगे। चरने के बाद नयी गाय बछडा सहित बाकी ढोर से अलग होकर ग्वाले की आँख बचाकर इमली पेड के नीचे बिल में वसित श्रीनिवास के पास जाकर रोज दूध गिराने लगी। भूख से पीडित श्रीनिवास उस दूध को बडी चाव से पीते थे।

यहाँ बिल में श्रीनिवास को दूध पिलाने के कारण घर पर वह गाय दूध नहीं दे पाती थी। ग्वाले ने इसे पहचान लिया। ग्वाले ने गाय पर नजर रखी। बस! एक दिन बिल में दूध गिरानेवाली गाय को उसने पकडा। गुस्से में उसने अपनी कुल्हाडी से गाय को मारा। गाय डर गयी, अचानक

बिल से बाहर आये श्रीनिवास के ललाट पर कुल्हाडी की मार पडी। श्रीनिवास घायल हो गए। घाव से खून बहने लगा। इसे देखते ही ग्वाला वहीं गिर कर मर गया।

इस की जानकारी प्राप्त होते ही चोल राज दौड कर आए। ग्वाले के साथ हुई भूल को पहचान कर श्रीनिवास से क्षमा याचना की। इस अपराध के लिए अवश्य दंड भोगना चाहिए कहते हुए श्रीनिवास ने राजा को भूत भी बनने का शाप दिया। प्रार्थना करने पर श्रीनिवास ने राजा पर करुणा दिखाते हुए कहा कि शीघ्र ही आकाश राज की पुत्री पद्मावती के साथ मेरा विवाह होगा। उस समय वे एक सोने की किरीट को भेंट के रूप में देंगे। उसे सर पर धारण करते ही तुझे शाप विमोचन हो जाएगा। राजा को यह वरदान था।

तदुपरांत मृत ग्वाले की संतति को कलियुगांत तक श्रीनिवास ने हर दिन प्रथम दर्शन प्राप्त करने का अनुग्रह किया।

तदुपरांत श्रीनिवास वेंकटाचल क्षेत्र पर संचरण करते हुए वराह स्वामी के दर्शन करके अपनी कहानी सुनाकर वेंकटाचल क्षेत्र में ही कलियुगांत तक रहने के लिए सौ कदम जमीन माँगी। वराह स्वामी से यह भी कहा कि उस के प्रतिफल के रूप में कलियुग में अपने दर्शनार्थ आनेवाले भक्त प्रथमतः श्रीवराह स्वामी जी के दर्शन करके, प्रथम पूजा तथा प्रथम नैवेद्य समर्पित करेंगे। यह नियमावली अब भी जारी है।

घर को (वैकुंठ को), घरवाली (श्रीमहालक्ष्मी) को छोडनेवाले श्रीनिवास की करुण कहानी को सुनकर वराह स्वामी ने वकुला माता को उन की देखभाल के लिए नियुक्त किया।

((((()))))

वेदलक्ष्मी

एक दिन सप्तगिरि के शिखरों पर श्रीनिवास आखेट खेलने निकले। उस समय वन में विहार करनेवाली नारायणवनम के शासक आकाशराज की पुत्री पद्मावती को देखा। 'पता नहीं किस जन्म का संबंध हो या कितने जन्मों का संबध हो' उसे देखकर श्रीनिवास, श्रीनिवास को देखकर पद्मावती परस्पर आकर्षित हो गए। लेकिन श्रीनिवास को पद्मावती देवी की सखियों के हाथों पथराव का शिकार होना पडा। खून भरे घायल शरीर के साथ श्रीनिवास वेंकटाचल पहुँच गए। वेंकटाचल में श्रीनिवास की दुस्थिति को देखकर वकुला माँ व्याकुल हो गयी। उन से कारण पूछा। कारण का पता चलने पर वकुला भयकंपित हो गयी। श्रीनिवास को समझाया कि पद्मावती और तुम दोनों के बीच में संबंध नहीं बैठेगा! संदेह प्रकट किया कि वे राज वंश के लोग हैं और हम सामान्य। वकुला माता के संदेह को दूर करते हुए श्रीनिवास ने पद्मावती के जन्म रहस्य को बताया।

((((()))))

वेदलक्ष्मी ही पद्मावती

त्रेतायुग में सीता के लिए लंका जानेवाली वेदवती ही यह पद्मावती है। वेदवती और कोई दूसरी नहीं है। मेरे लिए, मुझ से विवाह करने के लिए श्रीमहालक्ष्मी के एक अंश रूप से वेदलक्ष्मी के रूप में अवतरित हुई हैं।

पूर्व काल में निरंतर वेदों का पठन करनेवाला मयु नामक एक विप्र था। एक बार वेदों का पठन करते करते उसने ऊर्वशी को देखा। तब उस के सौंदर्य से मुग्ध हुआ। उस विप्र का वीर्य स्कलन हुआ। उस में से ''लक्ष्मी देवी'' एक शिशु के रूप में पैदा हो गयी। वेदों का पठन करते समय पैदा हुई पुत्री होने के कारण उसने उस का नाम 'वेदवती' रखकर पाल पोस कर बडा किया। वह मेरे साथ विवाह करने के लक्ष्य से निर्जनारण्य में तप करते समय रावण ने उस पर अत्याचार प्रयत्न किया। इस से वह योगाग्नि में जल कर भस्म हो गयी। उस समय वेदवती ने रावण को शाप दिया कि ''मेरे पति विष्णु के हाथों में तुम मारे जाओगे,।''

वेदवती योगाग्नि में प्रवेश करके अग्नि देव पास पहूँच गयी। अग्निदेव ने उसी वेदवती को सीता के स्थान पर लंका भेजा। रावण वध के अनंतर सीता ने राम से वेदवती के साथ विवाह करने की प्रार्थना की। तब राम ने इस अवतार में यह संभव नहीं है, कलियुग में वेंकटेश्वर के रूप में अवतरित होकर 'पद्मावती' नाम से पैदा होनेवाली वेदवती के साथ विवाह करने का वचन दिया था।

श्रीमहालक्ष्मी के अंशरूपी वह वेदलक्ष्मी ही मेरे साथ विवाह करने के लिए आकाश राज को अयोनिजा के रूप में सोने के पद्म में प्राप्त हुई है। उस दिन से आकाश राज की लाड प्यार पा कर, राजकुमारी के रूप में वेदवती पल कर बडी हो गयी।

इतना ही नहीं। द्वापर युग की यशोदा माई भी तुम ही हो। उस समय मुझे पाल पोसकर बडा करनेवाली तुम मेरा विवाह नहीं कर सकी। मेरा विवाह देखने का अवसर भी तुझे प्राप्त नहीं हुआ। इस का स्मरण करके तुम व्याकुल रहती थी। इसलिए तुम्हारी इच्छा की पूर्ति के लिए अब देखो यह विवाह हो रहा है। वकुलामाता अपने पूर्व जन्म को तथा पद्मावती के वृत्तांत को सुनकर विवाह के लिए तैयार हो गयी। दोनों के बीच में समझौता करावाने की कोशिश की। विवाह निश्चय हो गया।

वैशाख शुद्ध दशमी शुक्रवार के दिन, पूर्व फाल्गुणी नक्षत्र युक्त शुभ मुहूर्त में पद्मावती के साथ विवाह करने के लिए श्रीनिवास ने कुबेर के पास उधार लिया।

इस विवाह के समय अगर श्रीमहालक्ष्मी मेरे साथ रहोगी तो बहुत अच्छा होगा, सोचते हुए श्रीनिवास चिंता के शिकार हो गए। ब्रह्मादि देवताओं ने उसे लिवा लाने के लिए सूर्य भगवान को कोल्हापुर भेजा। सूर्य भगवान उन्हें लिवा लाये। भूलोक में अनेक समस्याओं का सामना करनेवाले अपने स्वामी को देखकर श्रीमहालक्ष्मी को दुख हुआ। कम से कम अब तो वे एक घरवाले बन रहे हैं, समझ कर उन्हें संतोष भी हुआ। श्रीमहालक्ष्मी ने श्रीनिवास को दूल्हे के रूप में सजाया। विवाह भी करवाया। विवाह के बाद श्रीनिवास ने श्रीमहालक्ष्मी से वहीं रह जाने की

प्रार्थना की। लेकिन श्रीमहालक्ष्मी इस प्रार्थना को अस्वीकार करते हुए फिर कोल्हापुर चली गयी।

नयी दंपतियों का नया जीवन कुछ दिनों तक सुखमय रहा। लेकिन कोई अदृश्य अशांति, अभाव, पता नहीं वह क्या है, सताने लगा। श्री महालक्ष्मी के लौट जाने के बाद विष्णु भगवान की समझ में कुछ भी नहीं आया। निराशा और निस्पृहाएँ उन में छा गयीं। श्रीमहालक्ष्मी का चले जाना कितना दुखदायक है, उस समय उन की समझ में आया। उन्होंने समझ लिया कि सिर्फ श्रीमहालक्ष्मी के चले जाने से उन का जीवन कलाविहीन हो गया है।

परंधाम ने पद्मावती से अपनी चिंता के बारे में बताया। ''पद्मावती! पद्मावती! श्री महालक्ष्मी रहित मेरा जीवन निराशजनक है। व्यर्थ भी है। अपने जीवन की गति में मैं ने वैकुंठ को छोड दिया। इस भूलोक में भूख प्यास से तडपा। रहने के लिए बिल में छिप गया। पामर ग्वाले के हाथों में घायल भी हो गया। रहने के लिए जमीन की याचना भी करनी पडी। तुम्हारी दासीजनों के हाथों में पथराव का भी शिकार हो गया। तुम्हारे साथ विवाह करने के लिए धनहीन होकर कुबेर से उधार भी लिया। इन जंगल-घाटियों में बिना किसी लक्ष्य के आवारा बन घूम रहा हूँ। साक्षात वैकुंठनाथ होते हए भी मैं क्या से क्या हो गया। फिर भी कुछ अच्छा भी हुआ है। तुम्हारे साथ विवाह के बाद मेरे जीवन में कुछ परिवर्तन आया है। लौटकर आयी श्रीमहालक्ष्मी का फिर से मुझे छोडकर जाना मेरी बडी मनोव्यथा के लिए कारण बना है। इतना ही नहीं आगे भूलोकवासी भक्त

सभी मेरी शरण में आयेंगे। अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने की प्रार्थना करेंगे।

अब मैं जिस दीन स्थिति में हूँ, मैं कैसे भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति कर सकता हूँ। साक्षात श्रीमहालक्ष्मी के सान्निध्य की सिद्धि प्राप्त होने से ही, उस जगन्माता का संपूर्ण अनुग्रह प्राप्त होने से ही, मैं इस कलियुग में भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति आनंदप्रद तथा संपूर्ण रूप से कर पाऊँगा।

इसलिए पद्मावती! श्री महालक्ष्मी को प्रसन्न करके उन्हें मेरे साथ लिवा लाने के लिए मैं कोल्हापूर जाना चाहता हूँ। तुम मुझे अनुमति दो।'' कहते हुए अनेक रूप में चिंता जताते हुए नारायण ने पद्मावती से विनती की। साथ ही दुःख भी प्रकट किया।

''जी हाँ स्वामी! कोल्हापुर क्षेत्र जाकर लाभ के साथ लौट आइए स्वामी! श्रीमहालक्ष्मी के साथ लौट आइए!'' कहती हुई पद्मावती ने श्रीनिवास की ससम्मान बिदाई की।

((((((()))))))

सप्तगिरीश कोल्हापुर में

पद्मावती से अनुमति लेकर श्रीनिवास कोल्हपूर पहुँच गए। लेकिन वहाँ पहुँचने के बाद श्रीनिवास भौंचक रह गए। पर्वत चट्टानों में घूमनेवाले तथा बिलों में छिपनेवाले श्रीनिवास के लिए कोल्हापुर शहर एक अद्भुत दुनिया लगा। आश्चर्यचकित होकर श्रीनिवास नेत्र विशाल करके आसक्ति के साथ नगर को देखने लगे।

जहाँ देखो वहाँ ऊँचे ऊँचे गोपुर हैं! जिस किसी भी कोने में देखो वहाँ शिखर हैं! जिस दिशा में देखो वहाँ मणिमय मंदिर हैं! वज्रों से बने प्राकार मंटप, नवरत्न खचित दिव्य भवन कदम कदम पर दिखाई पडने लगे। विशाल वीथियाँ, सजी गई सडकें, अत्यंत सुंदर ढंग से पाले बगीचे, पुष्पवाटिकाएँ, संगीत, नृत्य कलाओं से भरे सभामंदिर। ''आइए! अंदर आइए! थकान को दूर कीजिए! पेट भर खाना खाइए!'' कहते वात्सल्यपूर्वक निमंत्रण देनेवाले नित्य अन्नदान मठ, निरंतर श्रुतिमधुर ढंग से वेद, पुराण आदि का पठन-पाठन करानेवाले विद्यामंदिर, सुसंपन्न भोग भाग्यों से भरे आकाश को छूनेवाले हर्म्य, अनेक भवनों से, चमत्कारों से शोभायमान, संपन्न प्रकाश से भरा अत्यंत विशाल नगर है कोल्हापुर।

उस नगर के बीचों बीच अत्यंत चमत्कार पूर्ण, अद्भुत, आश्चर्य और आसक्तिपूर्ण ऊँचे प्राकारों से परिवेष्ठित अत्यंत दिव्य महाराज मंदिर है वह! वह राजमंदिर नहीं है। महाराज्ञी श्रीमहालक्ष्मी का मंदिर है! वाह! बाहर से देखने के लिए इतना अद्भुत लग रहा है! अंदर प्रवेश करने पर और कितना अद्भुत लगेगा!

उस भवन के अंतर्भाग में अभ्यंतर मंदिर के अंदर जाने के लिए पहले बहुत ऊँचे लोह प्राकार को पार करना है। उस के बाद क्रम से कांस्य प्राकार, सीस, तांबा, पीतल, चांदी, सोना आदि लोहों के प्राकार, पुष्यराग प्राकार, पद्मराग प्राकार, गोमेधिक प्राकार, वज्र प्राकार, वैढूर्य प्राकार, इंद्रनील प्राकार, मोतियों का प्राकार, मरकतमणि प्राकार, प्रवाल प्राकार इन सब को पार करते हुए अंदर जाना है। उन सब के बीच ही चिंतामणी गृह!

प्रत्येक प्राकार के प्रवेश द्वारों के सामने शंख चक्रादि दिव्यायुध लिए हुए सशस्त्र सिपाही चौबीस घंटे पहरा दे रहे हैं। प्रत्येक द्वार पर रथ, गज, अश्व, विमानादि पर आये देवतागण इंतजार करते दिखाई देते हैं। प्रत्येक प्राकार और प्राकार के बीच में पुष्पों के वन, फलों के पेड, उन पर श्रुतिमाधुर्य रागालाप करनेवाली पक्षि - संतति शोभायमान रूप में दर्शन देती हैं।

इस रूप में सभी प्राकारों को पार करके अंदर जाने पर सब के बीच में एक अद्भुत, आनंदधाम, प्रशांतधाम चिंतामणि गृह का दर्शन देगा। मणिमय मंदिर अत्यंत महत्व का है। दिव्य है। मंदिर भवन के मध्य भाग में नवरत्न खचित एक सोने के सिंहासन पर महादर्प, गंभीर, महाराजस, बडे संस्कार से बैठी श्रीमाता, श्रीमहाराज्ञी और श्रीदेवी श्रीमहालक्ष्मी दर्शन देगी। लक्ष्मी, पार्वती, सरस्वती, तीनों माताओं को चलानेवाली परात्परी, परमेश्वरी, ओमकार स्वरूपिणी, परमब्रह्म स्वरूपिणी देवेरी श्री महालक्ष्मी हैं। उस जगदीश्वरी की दोनों तरफ महासरस्वती और महाकाली पंका डुलाती सेवा कर रही हैं।

महाराज्ञी कोल्हापुरी श्रीमहालक्ष्मी को प्रसन्न करने के लिए त्रिमूर्ति, इंद्रादि देवतागण, और अनेक मुख्य देवतागण, उन केपरिवार देवतागण, उन के सेवक, उस माई के दिव्य भवन के सामने इंतजार करते रहते हैं। भवन के आंगन ऊँगते रहते हैं। उन को ऊब नहीं सताता है। आराम भी की चाह नहीं होती है। कब किस पल में उस माई की कृपा दृष्टि अपने पर पडेगी पता नहीं। उस के लिए इंतजार करते रहते हैं। कुछ और उस माई की मधुर मुस्कान क्या हम पर कभी नहीं पडेगी, सोचते चकोर पक्षियों की तरह इंतजार करते रहते हैं। 'उस माई की एक कांति की रेखा हम पर नहीं पडेगी' यही - सोचते इंतजार में लगे रहते हैं। इस रूप में अनेकों का नित्य इंतजार दिखाई देता हैं। कई वहाँ उन का स्मरण करते रहते हैं। कीर्तन करते रहते हैं।

इतने लोग इतने रूपों में उस जगज्ञननी की दया प्राप्त करने, उस लोक माता के अनुग्रह के लिए, उसकी लोक कल्याण कारक के करुणा के लिए इंतजार कर रहे हैं। चिंतामणी के गृहांतर्भाग में सुमेरु शृंगमध्यस्थ जगज्ञननी अत्यंत प्रशांत वदना हैं। शाश्वत आनंदमई प्रकाश की किरणों से देदीप्यमान हैं। उन के दिव्य नेत्र अक्षयानंद संधायक हो करुणा रस बरसा रहे हैं।

अर्धनिमीलित नेत्रों से छलकनेवाले सिर्फ करुणा रस ही क्या! और लाल लाल होंटों पर से कभी नहीं हटनेवाली, नहीं मिटनेवाली, कभी खत्म नहीं होनेवाली मुस्कान है! दर्शन मात्र से सभी पापों को दूर करनेवाले अभय हस्त! सभी आर्तियों की चिंता को दूर करके उन की नयी नयी सद्यः इच्छाओं की पूर्ति कर सकनेवाले वरद हस्त!

इस रूप में एक क्या? पानेवाले का भाग्य है! पकडनेवाले हाथों का सोना है! चाहनेवालों की कल्पतरू है? सेवाकरनेवालों के हाथों का मोती है! सुंदर, सुकुमार, लावण्य, दिव्यमंगल मूर्ति के दर्शन करनेवालों को तुरंत सत्य, शाश्वत, अनंत, परिपूर्ण आनंद को प्रदान कर रही हैं।

इस रूप में सर्वत्र दिव्य तेज कांति से, प्रकाश से, अनेक चमत्कारों से प्रकाशवान उस दिव्य नगर कोल्हापुर में श्रीनिवास ने पदार्पण किया। पूरे नगर को अपलक होकर, नेत्र और विशाल बनाकर वीक्षण किया। नगर शोभा को बार बार देखा। आनंद का अनुभव किया। आश्चर्य का अनुभव किया। फिर भी उन्हें ऐसा लग रहा है कि वे किसी चीज की खोज कर रहो हैं।

दिव्य पुरुष ने उस नगर में गली गली घूमते घूमते प्रत्येक गली को देखा। भवनों का परीक्षण किया। नगर शोभा से भौंचक हो गये। अपलक नेत्रों से उस नगर के सौंदर्य का कण कण निहारा।

करवीर पुर में श्रीमहालक्ष्मी की सेवा में निमग्न देवतागण, ऋषि, योगी, पुण्य स्त्रियाँ, आदि, विचित्र रूप से किसी के लिए आतुरता से खोज करते घूमनेवाले श्रीनिवास को देखकर, सोचने लगे कि ये महापुरुष कौन हैं? काले होने पर भी अत्यंत तेज से युक्त हैं। आजानबाहू और अत्यंत पुष्ट हैं। उन का चेहरा अत्यंत कांति से प्रकाशमान होने पर भी पता नहीं उस में अभाव दिख रहा है। अपनी बाधा को व्यक्त नहीं कर पाने की आकुलरता नजर आ रही है। पता नहीं ये महापुरुष कौन हैं? सोचते हुए वहाँ के लोग उस की तरफ देखते हए अपने अपने कार्यों में निमग्र हो रहे थे। माई के दर्शन करके दिव्य भवन

से बाहर जाते हुए श्रीमहालक्ष्मी के दिव्य मंगल स्वरूप का स्मरण करते हुए, माई के दर्शन से अपने जन्म को धन्य समझते एक दूसरे से चर्चा कर रहे थे। इतना ही नहीं कुछ तो उस जगन्माता के वैभव की प्रशंसा करते आनंदित हो लौट रहे हैं।

श्रीनिवास ने उन सब की बातें सुनकर आनंद का अनुभव किया। श्रीमहालक्ष्मी के दर्शनार्थ रत्नों से बने उस महल में प्रवेश किया। बडी विचित्र किंवा विस्मय की बात है! वहाँ श्रीनिवास को कुछ भी दिखाई नहीं दिया। शून्य दिखाई दिया। लेकिन समीप में खडे भक्तों ने तो महालक्ष्मी को अत्यंत भक्ति - श्रद्धा से देखने का अनुभव कर रहे हैं। माई को देखते हुए अपनी अपनी इच्छा से कीर्तन भी कर रहे हैं। लेकिन श्रीनिवास ने तो वहाँ कुछ भी देख पाने में असमर्थ हो कुछ भी दिखाई नहीं पडने से अपने मन में इस प्रकार सोचना शुरु किया -

'श्रीमहालक्ष्मी के दर्शन सब कर रहे हैं। अपनी अपनी इच्छाओं की पूर्ति से संतोष के साथ लौट रहे हैं। लेकिन मेरे लिए तो उनके दर्शन नहीं हुए। लगता है कि शायद उन्हें मुझ पर क्रोध कम नहीं हुआ। इसलिए मुझे दर्शन नहीं दे रही हैं। मुझ से बात भी नहीं कर रही हैं। फिर भी उन्हें प्रसन्न करके, दर्शन करके, उन्हें यहाँ से लिवा ले चलने तक इस करवीर पुर को मैं नहीं छोड़ूँगा, नहीं छोड़ूँगा। खाली हाथों वेकंटाचल हरगिज नहीं जाऊँगा, नहीं जाऊँगा।' सोचते हुए श्रीनिवास ने अपने मन में दृढ संकल्प करके करवीरपुरनिवासिनी लक्ष्मी को लेकर तप करने का निर्णय लिया।

श्रीनिवास ने प्रत्येक दिन करवीर पुर के पद्मकुंड, कपिलतीर्थ, पंचगंगा, रुद्रप्रयाग आदि पुण्य तीर्थो में डुबकी लगाते श्रीमहालक्ष्मी देवी

के दर्शन के लिए तप को आगे बढ़ते। मंदिर के सामने आंगन में बैठकर कुछ समय के लिए श्रीमहालक्ष्मी मंत्र का जप करते। कुछ समय ध्यान करते। कुछ दिनों तक अल्पाहार के साथ, कुछ और दिन उपवास के साथ अपने तप को आगे बढाया।

नित्य माई के दर्शन के लिए आनेवाले भक्त श्रीनिवास की दीक्षा को देखकर आश्चर्य चक्ति होते थे। क्योंकि सामने बिना किसी प्रयास के जगन्माता के दर्शन हो रहे हैं, माता वरदान भी प्रदान कर रही हैं, ऐसी स्थिति में सीधे माई से याचना कर सकते हैं न! पता नहीं है इस रूप में अनावश्यक संकल्प लेकर बैठा है। तप भी कर रहा है। भक्त अपने आप में सोचते लौटते थे।

लेकिन परंधाम के द्वारा कठोर तप के बावजूद, ध्यान करने के बावजूद, जगन्माता थोडी सी भी करुणा दिखाने के लिए राजी नहीं हुई। फिर भी श्रीनिवास ने अपने प्रयास को नहीं छोडा। इस प्रकार एक दिन नहीं दो नहीं पूरे दस वर्ष बीत गए। दस वर्षों तक करवीरपुराधि देवता श्रीमहालक्ष्मी के दर्शन के लिए श्रीनिवास ने तरसते हुए कठोरातिकठोर अपने तप को आगे बढाया। सरसों बीज सम सफलता भी उन के हाथ नहीं लगी।

((((()))))

अशरीरवाणी

एक दिन! वह भी शुक्रवार का दिन था! प्रातः काल का समय था! इस के पहले कभी भी ऐसा नहीं हुआ। करवीरपुर एक नयी अद्भुत कांति से प्रकाशित होने लगा। यथाविधि श्रीनिवास का स्नान संध्यादि पूरा करके तप शुरु करने का शुभ मुहूर्त! मंगलप्रद और शुभप्रद पवित्र घडियों में श्रीनिवास से अशरीरवाणी ने समधुर स्वर से में कहा -

''हे श्रीनिवास! सिरियों की माई श्रीमाहलक्ष्मी के अनुग्रह के लिए तप करनेवाले हे परंधाम! मेरी बातों को सावधानी से सुनो। स्वामी ! तुम्हें और श्रीवैकुंठ को छोडकर रूठ कर चली आयी श्रीमहालक्ष्मी यहाँ इस कोल्हापुर क्षेत्र में सत्व गुण से ओतप्रोत रजोगुण को प्राप्त करके बसी हुई हैं। इस अवतार के कारण एक लोक कल्याणकारक महत्कार्य संपन्न हुआ। वही कोल्हासुर का वध! लोक कंटक कोल्हासुर का वध करने के बाद भी उसी उग्र रूप में इस कोल्हापुर में बसी श्रीमहालक्ष्मी के दर्शन यहाँ तुम को संभव नहीं हैं। इसी रूप में कलियुगांत तक वे माई यहीं बसी रहेंगी।

तमोगुण संपन्न भृगु मुनि के पाद ताडन से लक्ष्मी देवी का नित्य आवास स्थल तुम्हारा उर स्थान दोष पूरित हो गया, ऐसी भावना उन में है। इसी भावना से तुम पर रूठ कर तम्हें और वैकुंठ को छोडकर माई चली गयी हैं। 'फिर से तुम्हारे हृदय स्थान में आऊँगी नहीं, आऊँगा नहीं' - ऐसी शपथ लेकर तुम्हें छोडकर चली गयी है न! इसलिए उसी रूप में तुम पर अनुग्रह नहीं करेंगी। तुम्हारे समीप भी नहीं आयेंगी। इतना ही नहीं श्रीमहालक्ष्मी कोल्हापुर से अदृश्य होकर पाताल लोक पहुँच गयी हैं। वहाँ जाने के बावजूद भी तुम्हें लक्ष्मी के दर्शन नहीं होंगे।

श्रीमहालक्ष्मी के दर्शन तुम को सिर्फ एक मार्ग से सिद्ध हो सकते हैं। वह यहाँ, इस क्षेत्र में संभव ही नहीं है। तुम तुरंत यहाँ से दक्षिण दिशा में जाओ। कृष्णा नदी का तट आयेगा। उस से २२ योजनाओं की दूरी पर सुवर्णमुखी नदी प्रवाहित हो रही है। उस के उत्तरी तट पर एक प्रांत में, जहाँ मुनियों के द्वारा पावन आश्रम बसाकर सेवाएँ प्रदान की जा रही हैं, उन पवित्र आश्रमों के समीप तुम अपने भाले से एक सरोवर को खोदो। उस सरोवर में देव लोक से लाये सुवर्ण कमलों को प्रतिष्ठित करो। निरंतर नियम निष्ठा से पद्मों से श्रीमहालक्ष्मी की उपासना करो। इस तरह बारह साल श्रीमहालक्ष्मी मंत्र से साधना करने से तुम्हारा तप सफल हो जाएगा। लक्ष्मी देवी का अनुग्रह संपूर्ण रूप से तुम्हें प्राप्त हो जाएगा। वहाँ उस क्षेत्र में श्री महालक्ष्मी कोल्हापुर के उग्ररूप में न होकर परम शांत स्वरूपिणी के रूप में आविर्भूत होकर तुम्हारे पास पहूँच जाएगी। फिर से तुम्हारे हृदय स्थान पर विराजमान हो जाएगी। इससे तुम नखशिख लक्ष्मीकलाओं से प्रकाशित होकर भक्तों के लिए निधि, भक्त वत्सल बनकर, समस्त कामनों की पूर्ति करनेवाले देव के रूप में 'कलौ वेंकट नायकः' उपाधि से ख्यात हो जाओगे।''

अशरीरवाणी की बातों को सुनकर श्रीनिवास भौंचक रह गए। साथ ही उन्होंनेआनंद का भी अनुभव किया। माई के दर्शन के लिए, उन के अनुग्रह के लिए तरसनेवाले अपने लिए शुभप्रद और आशावान बातें सुनकर श्रीनिवास को तसल्ली हुई। ''श्रीमहालक्ष्मी के दर्शन नहीं करने के

बावजूद, उस दिव्य क्षेत्र में दस वर्षों तक वास करने का दिव्य सौभाग्य अपने को प्राप्त हुआ है न! काशी से भी महिमावान, सर्वदेवतागण का निवास स्थल, इस करवीरपुर क्षेत्र में रहते हुए कई देवताओं के दर्शन अपने नेत्रों से किए। और भी कई महानुभावों और महर्षियों के दर्शन करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ है न!'' इस प्रकार अनेक रूपों में सोचते हुए श्रीनिवास श्री महालक्ष्मी के उस सोने के भवन तथा कोल्हापुर क्षेत्र दोनों को हाथ जोडकर नमस्कार करते हुए ऊँचे स्वर में प्रार्थना की -

''हे महालक्ष्मी! तुम्हारे आने के लिए, तुम्हारे अनुग्रह के लिए मैं निरंतर इंतजार करते रहूँगा। लोक कल्याण की सिद्धि के लिए, मुख्य रूप से कलियुग में भक्तों की रक्षा के लिए मेरी प्रार्थना को स्वीकार करके मुझ पर अनुग्रह अवश्य करोगी। मेरी यही प्रार्थना है।'' करवीरपुराधीश्वरी श्रीमहालक्ष्मी का मन भर स्मरण करते हुए श्रीनिवास ने स्तुति की।

((((()))))

तिरुमलेश की तपोदीक्षा

उस के बाद श्रीनिवास गरुड पर आरूढ होकर वेंकटाचल क्षेत्र पहुँच गए। वकुला माता को, पद्मावती को पता न लगे, सावधानी भरती। स्वामी की पुष्करिणी में स्नान करके वराह स्वामी के दर्शन किए। सुवर्णमुखी नदी के उत्तरी तट पर स्थित शुक महर्षि के आश्रम के समीप पहुँच गए। अनेकानेक पुष्प-फल वृक्षों से शोभायमान और दिव्य कांतियों से प्रकाशित होनेवाले उस दिव्याराम में अपने भाले से एक सरोवर को खोदा। वायु देव को बुलाकर स्वर्ग जाकर इंद्र की अनुमति से देव लोक से सुवर्ण कमलों को मंगाकर उस सरोवर में रोपित किया। उन पद्मों के हमेशा खिले रहने के लिए उस सरोवर की पूरब दिशा में श्रीनिवास ने सूर्य भगवान को वैखानस आगम के अनुसार प्रतिष्ठित किया।

प्रतिनित्य ओमकार सहित श्रीमहालक्ष्मी मंत्र का भीजाक्षर समेत जप करते हुए, सिर्फ क्षीर को स्वीकार करके तप किया। पद्मसरोवर में अपने द्वारा प्रतिष्ठित सुवर्ण कमल के मध्य कर्णिक भाग पर श्री महालक्ष्मी की कल्पना कर आराधना करते हुए उपासना की। यह साधना दिन-प्रति-दिन तीव्र हो एकाग्रता के साथ चली। श्रीनिवास की तपस्साधना को देखकर इंद्र माया में पड गए। भ्रम में पडे। कोई सम्राट इंद्र पद के लिए तप कर रहे समझकर चिंता करने लगे। तुरंत उन के तप का भंग करने के लिए अप्सराओं को भेजा। वे अप्सरसाएँ सभी रूपों में तपोभंग का प्रयत्न करके श्रीनिवास की साधना में किसी भी प्रकार का विघ्न पहुँचाये बिना अपमानित होकर लौट गईं।

तीव्राति तीव्र रूप में श्रीनिवास का यह तप बारह वर्ष बिना किसी रुकावट के चला। तेरहवाँ वर्ष आरंभ हो गया।

यहाँ श्रीनिवास की स्थिति ऐसी होने पर वेंकटाचल पर पद्मावती की स्थिति एक और दूसरे प्रकार की हो गयी।

वेंकटेश्वर वराह क्षेत्र को, वकुल माता को, प्रियपत्नी पद्मावती को छोडकर श्रीमहालक्ष्मी देवी की प्राप्ति के लिए गये लगभग बाईस वर्ष बीत गए। अपने स्वामी के जाने से लेकर पद्मावती निद्राहार छोडकर श्रीनिवास की राह देखती रही। इंतजार करती रही। अपने को छोडकर गए स्वामी पता नहीं कहाँ हैं? क्या कर रहे हैं? यही नित्य सोचती चिंता का शिकार हो, उस चिंता को सहन नहीं कर पायी। एक दिन वकुला माता से पद्मावती ने -

''माई! वकुल माता! मुझे एक सपना आया है। उस सपने में मेरा स्वामी श्रीनिवास मुनि रूप में भूख प्यास को भूल कर निद्रा छोडकर कठोर तप करते हुए नाना यातनाओं को झेल रहे हैं। मुझे बहुत दुख हो रहा है कि मेरा स्वामी इतने कष्ट झेल रहे हैं।'' पद्मावती वकुला माता के सामने सिसकियों के साथ रो पडी।

''बेटी! पद्मवाती! राजाधिराज आकाश राज की पुत्री! युवराणी! तुम्हारा इस तरह कायर के समान भयकंपित होना ठीक नहीं है। तुम्हारा पति भी तो सामान्य मनुष्य नहीं है बेटी! वे साक्षात श्रीमन्नारायण ही हैं। बहुत शीघ्र ही श्रीमहालक्ष्मी समेत वे अवश्य लौट आयेंगे। इस में कोई संदेह नहीं है। हे मेरी लाडली बेटी! वैसे तुम भी सामान्य मनुष्य स्त्री नहीं हो। इस तरह चीखना चिल्लाना और रोना ठीक नहीं है। मेरी बात पर पूरा विश्वास करो बेटी! विश्वास करो!'' कहती हुई वकुल माता ने पद्मावती को गोद में लेकर सर पर हाथ से सांवरती हुई तसल्ली दी।

वकुला माँ की तसल्ली से, उन के हाथ के स्पर्श से पद्मावती पुलकित हो गयी। उस का मन थोडा हलका हो गया।

इधर श्रीशुक ब्रह्माश्रम प्रांत में श्रीनिवास भगवान के कठोर तप देखकर कपिलादि सभी महामुनिगण ने पाताल में रहनेवाली श्रीमहालक्ष्मी को बताया। कम से कम अब तो श्रीमहाविष्णु के प्रति रूठ को तथा गुस्से को छोडकर उन के पास जाने के लिए अनेक प्रकार से सलाहें दीं। पति-पत्नी परस्पर समझौते करते रहेंगे तो उन का दांपत्य जीवन अत्यंत सुखमय होगा नहीं तो एक दूसरे से अलग होकर एकाकी जीवन बिताना पडेगा, जिससे उस दंपति को ही भारी नुकसान होगा, इसलिए कम से कम अब तो सब कुछ भूल कर उनके लिए तरसनेवाले परंधाम के पास लौटने का उपदेश दिया श्रीमहालक्ष्मी को कपिल मुनि ने।

श्रीमहालक्ष्मी और विष्णु भगवान के बिछुडने के लिए जिम्मेदार भृगु महर्षि भी श्रीमहालक्ष्मी को नमस्कार करते हुए - ''माई! सिरियों की माई! तुमको तथा तुम्हारे दिव्य आवास स्थान श्रीनिवास के हृदय का पाद ताडन करना मेरा बहुत बडा अपराध है। वह अक्षम्य दोष भी है। किंतु माई! नारदादि अनेक मुनियों के आदेश से, विष्णु देव के परम सात्विक गुण को, भक्त वात्सल्य को, आप की अपार करुणा को, लोक को बतलाने के संकल्प से ही मैं ने ऐसा किया। कुछ भी हो कुछ आवेश में मूर्ख के समान, अपने स्तर को भूल कर उस रूप में व्यवहार करना अपराध है। मेरे इस घोर अपराध को पूरी तरह क्षमा कर, तुरंत तुम्हारे

के लिए तरसनेवाले परंधाम के पास पहुँच जाओ माई! पहुँच कर लोक कल्याण के लिए अखिल जगत की रक्षा करो माई!'' अनेक रूपों में प्रार्थना की।

सब की प्रार्थनाएँ तथा कामनाओं को सुनने के बाद श्रीमहालक्ष्मी ने उस दिन अपने से हुई त्वरित प्रतिक्रिया के लिए चिंता व्यक्त की। ''सच है कारण कुछ भी हो, कारण कितने भी रहे, पति-पत्नियों का बिछुड जाना अच्छा नहीं है। इस के लिए अपनी कहानी ही एक उदाहरण है।'' समझकर, अपने लिए तरसनेवाले परंधाम के पास जाने का निर्णय लिया श्री महालक्ष्मी ने। श्रीमहालक्ष्मी ने सब को तसल्ली दी। बस श्री महालक्ष्मी कपिल मुनि के आश्रम से अदृश्य हो गयीं।

((((()))))

अलमेलुमंगा का अवतरण

वह दिन था अत्यंत शुभ दिन! कलियुग के मनुष्यों के भाग्य की सफलता का दिन! भक्तों की कामनाओँ की पूर्ति की दिशा में नांदिवाला दिन! कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष, पंचमी शुक्रवार का दिन! उत्तराषाढा नक्षत्र युक्त विजय लग्न का दिव्याति दिव्य दिन! अत्यंत शुभ दिन! ऐसे कल्याण प्रद समय में पाताल से श्रीमहालक्ष्मी श्रीनिवास के तपो स्थल पद्मसरोवर में अवतरित हुई। श्रीनिवास के द्वारा रोपित सहस्रदल पद्म प्रकाशित हो फूल गया। अद्भुत रूप से विकसित मनोहर सुगंध चारों दिशाओं में व्याप्त होने लगी। सोने के पद्म के नाल के द्वारा पद्म के बीच की कर्णिका से श्रीमहालक्षमी आविर्भूत हुई। वज्र, वैडूर्य, मरकत, माणिक्यादि सर्वाभरणों से, फूल मालाओं से श्रीमहालक्ष्मी अवतरित हई। दिव्य कांति फैली। मंगल शंखनाद, भेरी मृदंग नाद सभी दिशाओं में प्रतिध्वनित हए। आकाश से फूलों की वर्षा हुई। गंधर्वों ने आनंद से नाचा और परवश होकर गीत गाये।

सहस्रों कांतियों से प्रकाशित स्वर्ण रथ का आविर्भाव हो गया। उस सुवर्ण रथ के मध्य में पद्म पीठ पर आसीन होकर, सोलह वर्ष की युवती के रूप में श्रीमहालक्ष्मी आविर्भूत हुई।

माई का सौंदर्य अवर्णनीय है! माई की शोभा नयन मनोहर है! उस माई का वदन पूर्ण चंद्र की तरह अतिसुंदर है। उस सौंदर्य को सौ गुणा बढाते लाल लाल अधरों पर अमिट मंद मुस्कान! अधरों के बीच लुकाछिपी करनेवाली मोतियों जैसे दांतों का क्रम! जुही की कली जैसी

नासिका! उस नासिका सौंदर्य को बढानेवाला रत्नों से जटित बेसर! नासिका की दोनों तरफ करुणा रस छटकानेवाले सुंदर नेत्र! नासिका के ऊपर कस्तूरी, कुंकुम से भासित फाल भाग, उस फाल भाग के ऊपर, पद्मसरोवर की शीतल मंद हवाओँ से डोलित मृदु काले भ्रमर जैसे जूमनेवाले केश! जगन्माता ही सर्व जगतों की महा राज्ञी! उनके सिर पर शोभित सुंदर नवरत्नों का किरीट! आम के कोंपलों जैसे लाल रंग से प्रकाशित माई के कंठाभरण! हाथों में कंगन, पैरों में घुंघुरु, कमर पर कमरबंध - नखशिख शोभा से, ललित लावण्य से माई विराजित थीं। जगन्माता के हाथों में पद्म शोभित हैं। गले में पद्म माला शोभित है। इस दिव्य रूप में सोलह वर्ष की युवति के रूप में पद्मसरोवर के बीच गजराजों के द्वारा सेवा लेती सुवर्ण कमल से श्रीमहालक्ष्मी अवतरित हुई।

उस शुभ संदर्भ में वहाँ के सभी ने सहस्र सुवर्ण पद्म के बीच में आविर्भूत श्री महालक्ष्मी का जय जयनाद किया -

जयतु जयतु लक्ष्मीर्लक्षणांलंकृतांगी
जयतु जयतु पद्मा पद्मसद्माभिवंद्या
जयतु जयतु विद्या विष्णुवामांकसंस्था
जयतु जयतु सम्यक् सर्वसंपत्करी श्रीः

माई! सर्व शुभ लक्षणों से प्रकाशित श्रीमहालक्ष्मी! तुम्हारी जय हो! जय हो! पद्मसंभव ब्रह्म देव के द्वारा कीर्तित पद्मालया हे पद्मावती! तुम्हारी नित्य जय हो! जय हो! श्री महाविष्णु के वामांक में स्थित हो नित्य दर्शन देनेवाली विद्यादेवी! विज्ञान स्वरूपिणी! तुम्हारी जय हो! निरंतर तुम्हारी जय हो! समस्त संपदाओं को सृमद्ध रूप में प्रदान

करनेवाली हे श्रीदेवी! समस्तश्वैर्य स्वरूपिणी! तुम्हें सब कालों में शुभ हो! जय हो!!

जगन्माता श्रीमहालक्ष्मी के आविर्भाव को भृगु, नारद, तुंबुर आदि महर्षि, योगी, मुनिगण तथा अनेक देवताओं ने देखा। अनंत दिव्य कांतियों से प्रकाशित हो सोने के कमल से, असमान जगदेक सौंदर्य के साथ आविर्भूत श्रीमहालक्ष्मी को अपलक नेत्र पर्व के रूप में देखते हुए श्रीनिवास ने असीम आनंद प्राप्त किया। तन्मयता में अपने तप को छोड दिया। इतने वर्षे के बाद, रूठ को छोडकर अपने पास आयी श्री महालक्ष्मी को आदर के साथ, आनंद के साथ, प्रेम से अपनी बाहुओं में लिया। श्रीनिवास ने अपने गले की कल्हार माला को श्रीमहालक्ष्मी के गले में डाल कर आलिंगन किया।

कई युग पर्यन्त अलग अलग एकाकी जीवन व्यतीत करनेवाली आदि दंपति के इस भूलोक में इतने लोगों के समक्ष एक होनेवाले इस शुभ समय में उन के दर्शन करनेवाले यक्ष, गंधर्व, किन्नर, किंपुरुष आदि ने उन पर फूलों की वर्षा की। मंगल वाद्य बजाये। श्रीनिवास समेत श्री महालक्ष्मी के दर्शन करनेवाले ब्रह्मादि देवतागण ने उन की अनेक प्रकार से स्तुति की। उन अनेक कीर्तनों में एक -

ओं नमः श्रियै लोकधात्र्यै ब्रह्ममात्रे नमो नमः
नमस्ते पद्मनेत्रायै पद्ममुख्यै नमो नमः
प्रसन्न मुखपद्मायै पद्म कांत्यै नमो नमः
नमो बिल्ववनस्थायै विष्णु पत्नैय नमो नमः

विचित्र क्षौमधारिण्यै पृथुश्रोण्यै नमो नमः
पक्वबिल्वफलापीनतुंगस्तन्यै नमो नमः
सुरक्तपद्मपत्राभकरपादतले शुभौ
सुरत्नांगदकेयूरकांचीनूपुरशोभिते!
यक्षकर्दमसंलिप्तसर्वांगे कटकोज्ज्वले!
मांगल्याभरणैश्चितैः मुक्ताहारैर्विभूषिते!
ताटंकैरवतंसैश्च शोभमानमुखांबुजे
पद्महस्ते नमस्तुभ्यं प्रसीद हरिवल्लभे!
ऋग्यजुस्सामरूपायै विद्यायै ते नमो नमः
प्रसीदास्मान् कृपादृष्टिपातैरालोकयाब्धिजे
ये दृष्टास्ते त्वया ब्रह्म रुद्रेंन्द्रत्वं समाप्नुयुः

इस रूप में कीर्तन करते हुए प्रार्थना करनेवाले देवताओं, मुनियों और भक्तों को संबोधन करते हुए श्रीमहालक्ष्मी ने श्रीनिवास भगवान की अनुमति से अनेक वरदान देती हुई कहा -

''हे देवतागण! हे भक्त गण! आप सब की स्तुतियों से मुझे बहुत संतोष हुआ। इस स्तुति के साथ बिल्व दलों से मेरी आराधना जो करेगा मैं उस का पूर्ण रूप से अनुग्रह करूँगी। ऐसे लोग अपनी खोयी संपदाओं को, स्थानों को, पदों को पुनः प्राप्त करने के साथ साथ और भी समृद्धि प्राप्त करेंगे। इस रूप में स्तोत्र करनेवाले सभी को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष रूपी चारों पुरुषार्थ आसानी से प्राप्त हो जायेंगे। इतना ही नहीं, आज जिस सरोवर से मैं उद्भूत हुई हूँ उस पद्मसरोवर में, इसी शुभ मुहूर्त में संकल्पपूर्वक स्नान करके मेरी स्तुति करने से दीर्घायु के साथ साथ सर्व

सुख प्राप्त हो जायेंगे। ऐश्वर्य, विद्या, तेजोवंत संतान भी प्राप्त होंगी, ऐसा वरदान दे रही हूँ।'' सब ने श्रीमहालक्ष्मी के वर देने पर ''माई! इस दिव्य मुहूर्त में सुवर्ण पद्म में अवतरित होने के कारण पद्मालया के रूप में, पद्मासनी के रूप में, पद्महस्ता के रूप में, पद्मावती के रूप में, अलमेलुमंगा के रूप में कीर्तन कर रहे हैं। माई!'' कहते हुए साष्टांग प्रणाम किए।

बाद में ब्रह्मादि देवतागण, तुंबुर, नारदादि देवर्षिगण, वशिष्ट, वामदेवादि परम योगी और कई भक्तों के समक्ष श्रीनिवास ने सुवर्ण पद्म से अवतरित श्री महालक्ष्मी को अपने हृदय पर विराजमान होने के लिए सादर निमंत्रित किया।

श्रीविष्णु भगवान के आदेश के अनुसार श्रीमहालक्ष्मी उन के वक्षस्थल पर ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में आविर्भूत हो गयी। ''द्वि भुजा व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में पद्मावती दोनों हाथों में दो पद्मों को धारण करके स्वामी का ध्यान करती हुई श्रीस्वामी के हृदय पद्म में पद्म पीठ पर आसीन हो गयीं।

((((()))))

श्रीनिवास के आश्रय में आयी अष्ट लक्ष्मियाँ

श्रीनिवास की हृदयपद्मवासिनी महालक्ष्मी उस दिन से ''व्यूहलक्ष्मी'' और ''भूतकारुण्यलक्ष्मी'' कहलाकर भक्तों से पूजाएँ प्राप्त कर रही हैं। वह माई श्रीनिवास के पास आनेवाले भक्तजनों पर, सभी जीवों पर स्वयं करुणा बरसाने के साथ साथ श्रीनिवास के द्वारा भी करुणा बरसाती हैं। इसलिए श्रीमहालक्ष्मी 'भूतकारुण्यलक्ष्मी' नाम से प्रचलित हो गयीं।

श्रीनिवास के हृदय पर ही नहीं श्रीमहालक्ष्मी श्रीस्वामी के शरीर में 'भाग्य लक्ष्मी' के रूप में, करतल में, सभी कालों में, 'दान लक्ष्मी' के रूप में, दोनों भुजाओं में 'वीरलक्ष्मी' के रूप में, हृदय कमल में 'भूत कारुण्य लक्ष्मी' के रूप में, नंदक खड्गाग्र में 'शौर्य लक्ष्मी' के रूप में, श्रीनिवास के अखिल गुणगणों में 'कीर्ति लक्ष्मी' के रूप में, शरीर भर सर्वांगों में शांत स्वरूपा 'सौम्य लक्ष्मी' के रूप में, 'सर्व साम्राज्य लक्ष्मी' के रूप में विराजमान हैं। इस रूप में श्रीनिवास के चरणों से लेकर हृदय तक ''अष्ट लक्ष्मियों' के रूप में अलग अलग स्थानों में बस कर उक्त नामों से प्रचलित हो गयी हैं। इससे अलग विष्णु भगवान को परिपूर्ण लक्ष्मी ने सुसंपन्न बनाकर श्रीनिवास नाम सार्थक बनाया। नित्य तिरुमल के श्रीनिवास इस रूप में कीर्तित हो रहे हैं।

वक्त्राब्धौ भाग्यलक्ष्मीः करतलकमले सर्वदा दानलक्ष्मीः
दोर्दंडे वीरलक्ष्मीर्हृदयसरसिजे भूतकारुण्यलक्ष्मीः
खड्गाग्रे शौर्यलक्ष्मीः निखिलगुणगणाडंबरे कीर्तिलक्ष्मीः
सर्वांगे सौम्यलक्ष्मीः सर्वसाम्राज्य लक्ष्मीर्मयि तु
विजयताम्।।

''पादों से लेकर हृदय तक सुसंपन्न लक्ष्मी वेंकट प्रभु मुझे विजय प्रदान करें!'' इस अर्थ के इस कीर्तन में, श्रीमहालक्ष्मी मुख्य रूप से श्रीनिवास के हृदय पद्म में 'भूत कारुण्य लक्ष्मी' के रूप में दर्शन दे रही है। श्रीमहालक्ष्मी अनपाइनी के रूप में श्रीस्वामी से मिली हैं। इसलिए स्वामी परिपूर्ण आनंदनिलय बनकर सब को आनंद प्रदान करते हैं। सब की इच्छाओं की पूर्ति करते हुए, सब के लिए एक मात्र आधार बन ''कलौ वेंकट नायकः'' उपाधि से प्रचलित हैं।

स्पष्ट है कि श्रीनिवास अपने भक्तों को भाग्य, दातृत्व, वीरत्व, भूतदया, शौर्य, कीर्ति, सात्विकता आदि समस्त संपदाओं से अनुग्रह करते हैं।

आठ स्थानों में अष्टलक्ष्मियों के रूप में महालक्ष्मी को बसानेवाले श्रीनिवास के दर्शन करनेवाले देवतागण ने स्तुति की -

श्रीवत्सवक्षसं श्रीशं श्रीलोलं श्रीकरग्रहम्
श्रीमंतं श्रीनिधिं श्रीड्यं श्रीनिवासं भजेऽनिशम्।

''हे स्वामी! हे श्रीनिवास! वक्षःस्थल में 'श्रीवत्स' नामक चिह्न पाये हो। तुम ही साक्षात देवदेव लक्ष्मीपति हो! निरंतर लक्ष्मी देवी के साथ मिलकर विलासों में रमे रहते हो। उस लक्ष्मी देवी के हाथ को पकडनेवाले तुम ही हो स्वामी! इतना ही नहीं स्वामी! तुम सर्व विद्या परिपूर्ण हो! समस्तैश्वर्य संपन्न पुरुष भी तुम ही हो! स्वामी तुम नित्य श्रीमहालक्ष्मीदेवी के द्वारा ध्यान करवाते, कीर्तन करवाते रहते हो न श्रीनिवास! मैं भी तुम्हारा सदा ध्यान करूँगा स्वामी!'' इस रूप में वहाँ उपस्थित सभी ने लक्ष्मी वेंकटेश्वर की स्तुति की।

श्रीवेंकटाचलपति अपने दिव्यांगों में, संपूर्ण अंशों के साथ अष्टलक्ष्मियों को धारण करने के कारण ''श्रीनिवास'' के रूप में सार्थक नामधारी बने हैं। 'श्री' का मतलब संपूर्ण समस्तैश्वर्य संपन्न स्वरूपिणी श्री महालक्ष्मी है। ऐसी माई को अपने में बसानेवाले ही श्रीनिवास हैं।

लक्ष्मीसुसंपन्न श्रीनिवास के वेंकटाचल क्षेत्र के लिए निकलते समय ब्रह्मादि देवतागण, शुकादि ऋषिगण और भक्तों ने इस रूप में प्रार्थना की -

''स्वामी! श्रीनिवास! साक्षात श्रीमहालक्ष्मी इस पद्मसरोवर में अलमेलु मंगा के रूप में, पद्मावती के रूप में, अवतरित दिव्य मुहूर्त को लेकर उत्सव मनाने का संकल्प हो रहा है''

श्रीनिवास के स्वीकार पाने के बाद, ब्रह्मदेव, शुकादि ने पांचरात्रागम के अनुसार श्रीपद्मवाती माई के लिए बडे धूमधाम से ब्रह्मोत्सवों का आयोजन किया। प्रत्येक सत्र में एक एक वाहन पर उत्सवों का आयोजन किया। तब से यहाँ माई के लिए भी श्रीनिवास की तरह उत्सव और शोभा यात्राएँ स्वतंत्र रूप से मनाये मानाये जाते हैं। पद्मावती के रूप में अवतरित होनेवाली तिथि पंचमी के दिन तिरुमल स्वामी की ओर से 'साडी सागुन' (सुहागिनों के लिए दी जानेवाली भेंट) भेजे जाने का नियम भी बनाया गया। श्रीशुक महर्षि की प्रार्थना पर, श्रीमहालक्ष्मी ने अर्चा रूप में रहना स्वीकार किया। श्रीनिवास और अलमेलुमंगा दोनों ने सहर्ष इसे स्वीकार किया। श्रीनिवास वेंकटाचल क्षेत्र पहुँच गए।

(((())))

आकाशराज की पुत्री पद्मावती का व्यूहलक्ष्मी के से मिलना

आनंद निलय में स्थित आकाश राज की पुत्री, अपनी प्रिय पत्नी, पद्मावती को पूरी घटनाएँ श्रीनिवास ने बतायीं। लगभग बाईस वर्षों से श्रीनिवास के विरह में तडपनेवाली आकाशराज पुत्री पद्मावती देवी ने विनति की कि 'स्वामी! हे श्रीनिवास! अब मैं आप के विरह को सहन नहीं कर सकती। आगे कभी इस तरह मुझे छोडकर कहीं मत जाइए!''

इस पर श्रीनिवास ने अनेक रूपों में पद्मावती को तसल्ली देते हुए कहा कि ''तुम्हारा एक मानव युवति के रूप में दुःखी होना उचित नहीं है। तुम श्रीमहालक्ष्मी के अंश से अवतरित कारण जन्मा हो। त्रेता युग में सीता देवी के स्थान पर लंका में कष्ट झेलनेवाली वेदवती हो। 'लक्ष्मी' के अंश से पैदा हुई 'वेदलक्ष्मी' हो तुम। साक्षात वेद स्वरूपिणी तुम, वेद नारायण व मत्स्य नारायण के अवतरित प्राँत में, वेदभूमि के रूप में प्रचलित नारायणवन में, अयोनिजा के रूप में अवतरित साक्षात श्री महालक्ष्मी भी तुम ही हो। मेरे वरदान के अनुसार मैं ने तुम्हारे साथ विवाह किया है। इस अवतार में आगे मैं तुम्हें छोडकर नहीं जाऊँगा। शायद नहीं रह पाऊँगा भी। इसलिए तुम मेरे हृदय में बसी 'व्यूहलक्ष्मी' के साथ रह जाओ। तुम दोनों, समय के और अवतार लक्ष्य के अनुसार भिन्न भिन्न रूपा होने पर भी अभिन्न हैं। इसलिए हे पद्मावती! मेरे पास आओ! तुझे आलिंगन करूँगा, मेरे हृदय में व्यूहलक्ष्मी से मिलकर भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति करने में मेरी मदद करो।

इतना ही नहीं मेरा यह अवतरण विशिष्ट है। इसका अत्यंत वैशिष्ट्य भी है। पहले के अनेक अवतारों में देवेरियाँ प्रत्येक रूप से मेरे बगल में ही विराजमान रही थीं। बसी हुई थीं भी। लेकिन कलियुग में इस वेंकटाचल क्षेत्र में 'श्रीनिवास' के नाम के इस अवतार में मेरे पास देवेरियाँ नहीं होंगी। मेरे अंदर ही देवेरियाँ बसी रहती हैं। यहाँ मैं अकेला ही रहता हूँ। वेंकटाचल श्रीनिवास के रूप में मेरा स्मरण करते ही भक्तों के सभी पाप दूर हो जाएंगे। कीर्तन करते ही सारी कामनाओं की पूर्ति हो जाती है। नेत्र पर्व दर्शन करने मात्र से इह और पर सुखों को भोगने के बाद मोक्ष प्राप्त हो जाएगा।'' तब श्रीनिवास ने पद्मावती का आलिंगन किया। बस! तुरंत पहले की वेद लक्ष्मी और आज की आकाश राज की पुत्री पद्मावती श्रीनिवास के वक्षस्थल की 'व्यूह लक्ष्मी' के साथ संयुक्त होकर ''भूत कारुण्य लक्ष्मी'' के रूप में विलसी। श्रीनिवास के भक्त संरक्षण और लोक कल्याणकारक महाकार्य में सहायता करने लगी। भक्तों पर असीम वात्सल्यादि गुणों को बरसाती उन्हें दर्शन देने लगी।

करुणामई, प्रेम स्वरूपिणी, दयार्द्रहृदयवाली श्रीमहालक्ष्मी, वेंकटाचल क्षेत्र में तिरुमलेश के हृदय की 'व्यूहलक्ष्मी' के रूप में, तिरुचानूर में अर्चा मूर्ति पद्मावती माई के रूप में, अलमेलुमंगा के रूप में भक्तों से नित्य अर्चना पा रही हैं। आराधना प्राप्त कर रही हैं।

इस तरह कुछ समय बीत गया।

एक दिन, एकांत समय में सप्त गिरीश ने अपने वक्षस्थल वासिनी श्रीमहालक्ष्मी से एक बात कही।

(((())))

व्यूहलक्ष्मी और श्रीनिवास का संवाद

''देवी! तुझे देखकर कई युग बीत गए। मुझे तथा वैकुंठ को छोडकर गयी तुम फिर से इतने वर्षों बाद यहाँ इस भूलोक में वेंकटाचल क्षेत्र में मुझ से मिली हो, मेरे वक्षःसथल पर तुम्हारा, बसना मुझे अत्यंत संतोष दे रहा है। लेकिन हे सिरियों की देवी! आज से भू लोक में लोक कल्याण के लिए मेरे द्वारा संकल्पित कार्यक्रमों में तुम्हारी संपूर्ण सहायता और अनुग्रह और भी अधिक चाहिए।

मैं ने वेदलक्ष्मी के रूप में प्रचलित आकाश राज की पुत्री पद्मावती के साथ विवाह कर लिया है न! वह विवाह भी तुम्हारे समक्ष और तुम्हारे हाथों में ही संपन्न हुआ है न! मेरे पास धन न होने के कारण विवाह खर्चे के लिए कुबेर से उधार लेना पडा। तब से वह उधार ब्याज के साथ बढ रहा है। उस उधार को कैसे चुकाना है? इसके बारे में सोचते सोचते मेरा मन व्याकुल हो रहा है। सर्व संपत्तियों को अनुग्रह करनेवाली श्री महालक्ष्मी! मुझ पर दया करके उस उधार को चुकाने का उपाय बताओ?''

''स्वामी! उस दिन अपने विवाह के लिए मुझ से पूछकर उधार लिया है क्या! अब उस के लिए उपाय बताने के लिए! इतना ही नहीं, उस विवाह में मुझे बुलाया। ठीक है। तभी मुझ से धन मांगते तो मैं प्रेम से दे सकती थी न! अब यह उधार की पीडा नहीं होती। मुझे बगल में ही रखकर, मुझे छोडकर, मेरी परवाह नहीं करते हुए, दीनातिदीन बनकर कुबेर की तरफ हाथ फैलाकर याचना की। तुम ही सोच लो कि वह कितने अपमान की बात थी। मुझे नीचे दिखाते हुए अलग रखना क्या

उचित था? तुम साक्षात लक्ष्मीपति हो। तुम को क्यों लेना था उधार?'' कहकर लक्ष्मी ने ताना दिया और कहा -

''इसीलिए तुझ पर मुझे बडा गुस्सा आया। पद्मावती के साथ तुम्हारा विवाह होते ही तुम्हारे गिडगिडाने के बावजूद तुझे छोडकर मैं कोल्हापुर चली गयी। इतना ही नहीं तुम मेरे लिए कोल्हापुर भी आये। लेकिन मैं तुझे देखना नहीं चाहती थी। इस लिए वहाँ से भी अदृश्य होकर पाताल लोक चली गयी। कम से कम अब तो समझ में आया? तुम ने मुझे कितना दुःख दिया।'' कहती हुई लक्ष्मी देवी ने श्रीनिवास की अनेक रूपों में भर्त्सना की।

''प्रिये! श्रीदेवी! तुम इस रूप में मुझ पर ताना मत मारो। उस दिन तुम से मेरे धन नहीं माँगने का एक कारण है। लक्ष्मी! तुम मुझ से काफी समय तक अलग रहने के दुख में थी। कई दिनों के बाद मुझ पर दया करके मेरे विवाह में आयी थी। ऐसे समय में संपन्न होनेवाले मेरे दूसरे विवाह के लिए संतोष के साथ कैसे मैं तुम से धन मांगता! क्या यह उचित होता।'' श्रीनिवास ने जवाब दिया।

''ठीक है स्वामी! जो होना था सो हो गया। मूल ब्याज से भी बढकर शायद बहुत भारी पड रहा है न। उस के समान धन अभी मैं देती हूँ। तुरंत कुबेर का ऋण चुकाओ।'' श्रीदेवी की ये बातें सुनकर तिरुमलेश ने संतोष व्यक्त करते हुए कहा -

''देवी! तुम्हारी महिमा और शक्ति-सामर्थ्य मुझे मालूम है। अभी कुबेर का ऋण चुकाने की कोई आवश्यकता नहीं है। बिना किसी जल्दी

के धीरे धीरे कलियुगांत तक सिर्फ ब्याज ही चुका सकते हैं। उस के बाद कलियुगांत में उधार पूरी तरह चुकाने के बाद श्रीवैकुंठ लौट जायेंगे। तब तक भूलोक वैकुंठ समझे जानेवाले इस वेंकटाचल क्षेत्र में ही रहते हुए, हम दोनों भक्तों की सदा रक्षा करते रहेंगे। उनके पापों को दूर करते रहेंगे।

लक्ष्मी! दीन मनुष्यों के उद्धार के इस महत्कार्य में तुम को अत्यंत मुख्य भूमिका निभानी होगी। लोकोद्धरण कार्य को कैसे संपन्न करना है, सविवरण बताऊँगा। सावधानी से सुनो। -

''कलियुग के मानव काल स्वभाव के कारण, जान बूझ कर कुछ पाप, अनजाने में कुछ पाप करते हैं। उन दोषों के कारण, उन पापों के कारण उन्हें अनेक विचित्र रोग और व्याधियाँ सतायेंगी। उनकी आतुरताएँ बढ जायेंगी। कमजोर मानव रोगों से, व्याधियों से, बाधाओं से भयभीत हो जाते हैं। भय के कारण दिशाहीन और, आश्रयहीन होकर, भूलोक वैकुंठ, इस पुण्य स्थल, में तुम्हारे साथ रहनेवाले मुझे 'श्रीनिवासा! गोविंदा! गोविंदा!!' पुकारते हुए, 'श्रीलक्ष्मी वेंकटरमण गोविंदा!' पुकारते हुए अनेक रूपों में शरण माँगेंगे। हम दोनों अभिन्न होकर आनंद निलय में रहने पर हम से अनेक रूपों में विनति करेंगे। उन भक्तों की आपदाओं को दूर करना ही हमारा परम धर्म है!

भूख के समय, थकान के समय, निराश्रित होने के समय, भ्रष्ट हुए समय, दुष्टों के हाथ में पडकर जेल में रहते समय, सिर्फ श्रीनिवास का ही आश्रय है, समझकर हमारी शरण में आएँगे।

आपदाओं के होने पर, कष्टों के घेरने पर, पाप करने पर, भय खाने पर सिर्फ वेंकटेश ही एक मात्र आश्रय है - मानकर मेरा नाम स्मरण करते वेंकटाद्री पर पहुंचते हैं। इतना ही नहीं, जेल में डालने पर, खून करने बुलाने पर, उधारवाले सताने पर, सिर्फ वेंकटेश का नाम स्मरण ही हमें मुक्त कर सकता है - ऐसे विश्वास लेकर अनेक कष्टों को झेलकर अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए सिर्फ सप्तगिरियों का मार्ग पकड कर मेरी शरण में आएँगे। अनेक रूपों में मुझ से विनति करेंगे।

इस कलियुग में 'कलौ वेंकट नायकः' नामक सूत्र नाम पानेवाला मैं भक्त मानवों के पापकर्मो को, दोषों को, रोगों को, सभी को अपने अपने धन के आधार पर ही आकर्षित करके उसी में निक्षिप्त करूँगा। इस प्रकार रोगों से, पापों से भरे धन को, संपदाओं को भक्तों से मैं स्वीकार करके उन्हें पापों से, दोषों से मुक्त करूँगा। उन्हें पवित्र बनाऊँगा। उनकी समस्त कामनाओं की पूर्ति करूँगा। जिस धन को मैं ने उन से स्वीकार किया, उसे अज्ञानी, दुराशा, दुष्ट लोगों से भ्रम पैदा करके , उन्हें आशा में डालकर आकर्षित करके, उन के द्वारा प्राप्त उस धन को, उस के साथ संक्रमित पापों को, रोगों को और बाधाओं को फिर से उन को झेलने के लिए विवश करूँगा।

लेकिन मेरे पास आनेवाला धन या मेरे द्वारा स्वीकृत धन पूरा पापी नहीं होगा। रोगभूइष्ट भी नहीं होगा। उस में सज्ञनों, उपासकों, साधक भक्तों के द्वारा भक्ति प्रपत्तियों से, नियम-निष्ठाओं, नीति-नियमों से, विनम्र रूप से भेंटों के रूप में दिया गया धन भी होगा। बहुत से लोग

बिना किसी कामना के अपने धन को निष्काम रूप में समर्पित करते हैं। कुछ भक्त व्यक्तिगत रूप से नहीं कर सकनेवाले, लोक कल्याणकारक मानव सेवा कार्यो के लिए, उदारता से मुझे धन समर्पित करेंगे। इस प्रकार उत्तम भक्तों के द्वारा समर्पित पवित्र धन में से कुछ भाग कुबेर को ब्याज के रूप में चुकाऊँगा। थोडा और धन भक्तों की सेवा करनेवाले मेरे कर्मचारियों को, यात्रियों, भक्तों की चिकित्सा और कुछ, विद्या के लिए, अन्न दान के लिए - - लोक कल्याणकारक सत्कार्यों के लिए खर्च करूँगा।

इसलिए, कलियुगांत में ही पूरा ऋण चुकाऊँगा, इस संबन्ध में लिख कर दिए उधार पत्र को अभी रद्ध करने की आवश्यकता नहीं है लक्ष्मी!'' श्रीनिवास ने एक लंबा व्याख्यान दिया।

यह सुनकर ''स्वामी! आप ने इस प्रकार का संकल्प लेकर निर्णय लिया है न! फिर उधार चुकाने के उपाय का प्रश्न मुझ से क्यों किया? आप का विधान मेरी समझ में बिलकुल नहीं आ रहा है। स्वामी!'' कहती हुई श्रीमहालक्ष्मी ने श्रीनिवास की तरफ निशित दृष्टि से देखा।

''ओह! वह कुछ नहीं है देवी! तुम भक्तों को धन उदारता से दो। मेरा सिर्फ यही आग्रह है। तुम्हारे द्वारा उन्हें दिए गए धन को ही मैं स्वीकार करूँगा। समझ गयी!''

''यह ठीक है स्वामी! ठीक है! उधार पूरी तरह चुकायेंगे, कहती हूँ तो स्वीकारते नहीं। फिर भक्तों को धन देने की बात कहते हैं! मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा है। एक और बात है स्वामी! कलियुग के मनुष्य

कठिन हृदयवाले होते हैं। पैसे को न छोडनेवाले कंजूस लोग होते हैं। जन्मजन्मांतर के दारिद्र्य को झेलने के लिए तैयार होते हैं। परम लोभ के साथ जीते रहते हैं। बाहर निकलने की कोशिश ही नहीं करते हैं। बाहर निकलने की इच्छा भी नहीं रखते हैं। ऐसे लोगों को मुझे धन देने के लिए कहते हैं। मैं बिलकुल नहीं दूँगी। उस धन को चाहें तो मैं आप को समर्पित करूँगी। आप ही उन को दे दीजिए स्वामी!'' रमादेवी ने श्रीनिवास से कहा।

''देवी! मोक्ष के लिए योग्य लोगों को मोक्ष देना, पुण्यात्मा की इच्छाओं की पूर्ति करना मेरे लिए बहुत प्रिय है। इसलिए सर्वसंपदाओं के लिए अधिष्ठात्री होने के नाते हे श्रीमहालक्ष्मी! तुम मेरे भक्तों को सर्व संपदाएँ देने की आदत बना लो। तुम्हारे द्वारा दिए गए धन को उन से मैं दुबारा स्वीकार करके उन की सारी आपदाओं को दूर करने के साथ साथ संतानादि वर उन्हें प्रधान करूँगा। इच्छाओं की पूर्ति हो जाने के बाद वे भक्त अत्यंत खुश होंगे तो उसे देखकर प्रसन्न होना हमारा धर्म है।''- कहते हुए श्रीनिवास ने लक्ष्मी की आँखों में आँखे डालकर देखा।

''प्रभु! दान, धर्म और परोपकार नहीं करनेवाले मनुष्यों को मैं क्यों सिरि-संपदाओं को दूँ? उन्हें फिर उस धन को तुम्हें क्यों देना है? मनुष्यों में संपदाएँ प्राप्त होते ही दंभ, दर्प, लोभ और अहंकार आदि बढ जाएँगे। क्या स्वामी आप सचमुच विश्वास करते हैं कि ऐसे लोग धन प्राप्त होते ही आप को धन लौटाएँगे! क्या वह संभव है!'' कहती हुई लक्ष्मी देवी ने संदेह प्रकट कर अपने नाथ की ओर देखा।

''सच है! सच है! यह बहुत बडा सच है। तुम ने सच ही कहा देवी! इस कलियुग में अधिकतर मनुष्य कपटी और परम कंजूस रहते हैं। इस में कोई संदेह ही नहीं है। लेकिन मैं ने एक उपाय के बारे में सोचा है। वह जानना चाहती हो तो सुनो। कलियुग के मनुष्य अनेक पाप करते हैं। इन पापों के कारण उन्हें कई रोग सतायेंगे। कई बाधाएँ उन को होंगी। उन रोगों एवं बाधाओं को सहने में असमर्थ हो वे मुझे स्मरण करेंगे। आपदाओं से मुक्ति के लिए मनौतियाँ माँगेंगे। 'वें' - पापों को, रोगों को, 'कट' - दूर करनेवाले वेंकटेश्वर मैं हूँ। इसलिए उन में से कुछ को सपने में दर्शन देकर उन के द्वारा मनौतियाँ कराऊँगा। उन की मनौतियों के द्वारा प्राप्त धन में थोडा उन्हीं के द्वारा ब्याज के रूप में वसूल करूँगा। वे समय पर मनौतियाँ पूरा नहीं करेंगे। इसलिए ब्याज सहित चुकाने के लिए तैयार हो जाएँगे। इस रूप में मूल धन को ही ब्याज के ब्याज बनाकर बढाऊँगा। हर दिन ब्याज पर ब्याज बढने के कारण, स्वामी की मनौतियाँ और भेंट चुकाने के लिए उन में भय जगाऊँगा। तुम जानती हो न मेरे लिए 'भय कृत भयनाशनः' एक सार्थक नाम है! यानी 'मेरे लोग' समझनेवाले मेरे भक्तों में भय उत्पन्न मैं करता हूँ। बस! उस भय से वे और कोई उपाय न देखकर विवश होकर मेरी शरण में आयेंगे। उस रूप में मेरी शरण में आने के लिए ही मैं उन्हें डराऊँगा। मेरी शरण में आनेवाले सभी के भय, आपदाओं तथा रोगों को पूरी तरह मैं दूर करूँगा।

ऐसे मनुष्य सभी मेरे पास आकर ब्याज पर ब्याज बढनेवाले धन को मनौतियों और भेंटों के रूप में समर्पित करेंगे। उन के द्वारा समर्पित

धन को मैं 'निशित' दृष्टि से देखकर उस में पुण्य और पाप धन को अलग करूँगा। उस में से पाप धन को सिर्फ दुष्टों में ही बाँटूँगा। इस के लिए उन में आकर्षण पैदा करूँगा। उसे अज्ञान से और आशा से अनुभव करनेवालों को शारीक एवं मानसिक रोग होंगे। यही उन का भाग्य है! बस!

फिर पुण्य धन को अन्नदान, विद्यादान, वैद्य दान जैसे दीन-जन सेवा-कार्यक्रमों में उपयोग करूँगा। तद्वारा महिमावान इस क्षेत्र में सत्कार्य करने का फल उन भक्तों को प्राप्त होगा। इसलिए हे श्रीमहालक्ष्मी! उन भक्तों के द्वारा किया स्वल्प दान को ही भूरी समझकर उन्हें समृद्ध रूप में संपदाएँ प्रदान करो। तुम्हारे अनुग्रह से प्राप्त संपदाओं को वे फिर इसी क्षेत्र में मंगाऊँगा। उन के द्वारा फिर से दान कराऊँगा। इस वेंकटाद्रि में किए जानेवाला स्वल्प दान भी अत्यधिक फल देगा। इस के द्वारा इस कलिकाल में मनुष्यों को वेंकटाचल क्षेत्र की महिमा समझ में आयेगी। बार बार यात्रा करते हुए, मेरे दर्शन करके बार बार मेरे लिए दान-पुण्य करेंगे। अगर इस रूप में नहीं होता है तो इस कलियुग में कलिपुरुष के द्वारा अनेक रूपों में सताये जाएँगे। उन बाधाओं से वे बार बार और पाप करते हुए अति भयंकर नरक को प्राप्त करेंगे। भक्तों को इस प्रकार की कलिबाधाएँ न हो, उन की रक्षा करने के लिए इस दिव्य-भव्य वेंकटाचल क्षेत्र में मनौतियों के स्वामी के रूप में, अपद्बांधव के रूप में वास, वरों के देव के रूप में उपाधि प्राप्त करके भक्तों की रक्षा करता रहूँगा। इसलिए देवी! दीन जन बांधव के रूप में प्रसिद्ध मैं जो लोक रक्षण का कार्यक्रम कर रहा हूँ, इस कार्यक्रम में तुम भी सहायता पहुँचा दो। मेरे

उत्सवों, शोभायात्रों के लिए, भेंटों, मनौतियों और धन को चुकाने के लिए भक्तों को तुम बडी मात्रा में संपदाओं को प्रदान करो। मैं इसकी प्रार्थना भी करता हूँ।

ऐसा न होकर अभी कुबेर के उधार को पूरी तरह तुम चुकाओगी तो! मुझे इस भूलोक में कोई काम नहीं बचेगा। यह सच है। तब कलियुग में भक्तों की रक्षा करने का मेरे अवतार का लक्ष्य भी पूरा नहीं होगा। इसलिए देवी! श्रीमहालक्ष्मी! एक और बार मैं विनती कर रहा हूँ। तुम इस कलियुग में भक्तों की रक्षा करने का काम मुझे दे दो। वही मेरे लिए बहुत बडा धन है।''

स्वामी की प्रार्थना से श्रीमहालक्ष्मी ने मंद मुस्कान से स्वामी के वक्षःस्थल पर जम कर बसती हुई परमानंद के साथ कहा -

''स्वामी! श्रीनिवास प्रभू! अभी इसी समय मैं प्रतिज्ञा कर रही हूँ। इस भूलोक में एक तरफ दान, धर्म और परोपकार करते हुए, दूसरी तरफ ''कलौ वेंकट नायकः'' अपाधि पाकर, पुकारने मात्र से दर्शन देनेवाले आप का इस पुण्य क्षेत्र में दर्शन करके, शरण माँगकर मनौतियों के द्वारा, भेंटों के द्वारा उदारता से धन आप को समर्पित करनेवले भक्तों को मैं बडी मात्रा में धन, धान्य, वस्तु आदि समृद्ध रूप में प्रदान करूँगी। इतना ही नहीं, लोभियों के रूप में रहते हुए, पापों को करनेवाले लोगों की संपदाओं का नाश करूँगी।'' कहती हुई व्यूह लक्ष्मी ने श्रीनिवास का समर्थन किया। वे भी कलियुग के मनुष्यों को सर्वसंपदाओं को प्रदान करती रहेंगी। वे भक्त वेंकटाचल पहुँच कर धन को मनौतियों के रूप में

चुकाकर अपनी बाधाओं से मुक्त हो जाएँगे। इस भू लोक में सिर्फ यही एक मात्र मार्ग है। इससे बढकर इस कलियुग में इससे श्रेष्ठ मार्ग भी नहीं है। नहीं है। बिलकुल नहीं है।''

तिरुमल क्षेत्र में कलियुग में भक्तवरद के रूप में रह कर दर्शन देनेवाले श्री वेंकटेश्वर स्वामी की मूल विराट मूर्ति कितना महिमावान है! उस मूर्ति के हृदय में ''व्यूहलक्ष्मी'' के रूप में विराजमान श्रीमहालक्ष्मी की मूर्ति उससे भी बडी महिमावान देवी है।

उस समय से लेकर आज तक प्रति दिन तिरुमल में श्रीस्वामी की मूल विराट मूर्ति को तोमाल सेवा, अर्चन, नैवेद्य आदि सेवाएँ संपन्न होने के तुरंत बाद क्रम से श्रीनिवास के हृदय पर बसी अलमेलुमंगा के लिए भी तोमाल सेवा, अर्चन, नैवेद्य आदि सेवाएँ संपन्न की जाती हैं। शुक्रवार के दिन का अभिषेक तो और भी विशेष है। सिर्फ वक्षःस्थल की महालक्ष्मी को लेकर ही किए जानेवाले शुक्रवार के अभिषेक में गीले पडे स्वामी के लिए भी विवशता में अभिषेक किया जा रहा है। भक्त, अलमेलुमंगा के भी नेत्र पर्व रूप में दर्शन करेंगे और उन का कीर्तन भी करेंगे।

माता समस्त लोकों की एक मात्र स्वामिनी हैं! साक्षात श्रीवेंकटेश्वर प्रभु की पटराणी हैं! अत्यंत प्रिय भी हैं! जगन्माता श्रीनिवास भगवान के क्षमागुण को बढानेवाली करुणामाई हैं! वे माई नित्य पद्मासन पर विराजमान होकर अपने मृदु कर कमलों से और मृदु पद्मों से अलंकृता हो दर्शन देनेवाली अलमेलुमंगा हैं! प्रेम, दया, सहानुभूति, करुणा आदि अनेक अतुलनीय गुणों से ओतप्रोत अत्यंत दयार्द्र हृदय स्वामिनी हैं। श्री

वेंकटेश्वर के हृदय में निरंतर विराजमान होने के लिए अत्यंत आसक्ति दिखानेवाली माई अलमेलु मंगा सदा समस्त लोकों पर शासन करती रहती हैं।

देव्यै नमोऽस्तु दिवि देवगणार्चितायै
भूत्यै नमोऽस्तु भुवनार्तिविनाशनायै
धात्र्यै नमोऽस्तु धरणीधरवल्लभायै
पुष्ट्यै नमोऽस्तु पुरुषोत्तमवल्लभायै।।

सुतीव्रदारिद्य दुःखहंत्र्यै
नमोऽस्तु ते सर्वभयाशुहंत्र्यै
श्री विष्णुवक्षःस्थलसंस्थितायै
नमो नमः सर्वविभूतिदाय्यै।

माई! जगन्माता! देवगण से अर्चना प्राप्त करनेवाली महादेवी! श्रीमहालक्ष्मी! तुम्हें प्रणाम! समस्त लोकों के सभी आर्तियों की समस्त बाधाओं को दूर कर सकनेवाली 'भूति' प्रणाम! धरणी धर श्रीमहाविष्णु की प्रेयसी हे धात्री! तुम्हें सर्वदा प्रणाम! पुरुषोत्तम श्रीनिवास की प्रीतिपात्रा बनकर प्रकाशित होनेवाली 'पुष्टि' को नित्य प्रणाम!

इतना ही नहीं है।

असह्य तीव्र दारिद्रय दुःखों को अत्यंत आसानी से दूर कर सकनेवाली हे जगन्माता! तुम्हें प्रणाम! हे माई! अनेक और अनंत, जाने और अनजाने भयों को आसानी से दूर करनेवाली माई तुम ही हो! तुम्हें प्रणाम! नित्य श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर रहकर शोभायमान दर्शन देते

हुए सर्व विभूतियों को अत्यंत दया से और सुनायास ही प्रदान करनेवाली हे श्री महालक्ष्मी! तुझे सर्वदा प्रणाम!

मातस्समस्तजगतां मधुकैटभारेः
वक्षोविहारणि मनोहरदिव्यमूर्ते
श्री स्वामिनि श्रितजनप्रियदानशीले
श्री वेंकटेशदयिते! तव सुप्रभातम्!

माई! सर्वजगों की आप ही माई हैं हे अलमेलुमंगा! मधुकैटभ नामक राक्षसों के शत्रु श्रीनिवास के दिव्य वक्षःस्थल पर विहार करनेवाली हे दयामई! हे जगज्ननी! तुम अत्यंत मनोहर और लावण्य से प्रकाशित होती हुई, अपने आश्रय में आये समस्त लोगों की इच्छाओँ की पूर्ति करना ही प्रधान दायित्व माननेवाली माई भी तुम ही हो! हे वेंकटेशदाइते! (श्री वेंकटेश की प्रिय पत्नी) हे श्रीमहालक्ष्मी! तुम्हारे लिए सदा शुभोदय हो!

((((()))))

व्यूहलक्ष्मी वैभव

ईशानां जगतोऽस्य वेंकटपतेर्विष्णोः परां प्रेयसीम्
तद्वक्षःस्थलनित्यवासरसिकां तत्क्षांतिसंवर्धिनीम्
पद्मालंकृतपाणिवल्लवयुगां पद्मासनस्थां श्रियम्
वात्सल्यादिगुणोज्ज्वलां भगवतीं वंदे जगन्मातरम्।

भूलोक वैकुंठ समझे जानेवाले तिरुमल क्षेत्र में बस कर अपने भक्तों को दर्शन देनेवाले श्री वेंकटेश्वर - - - उस तिरुमलेश की पट देवेरी अलमेलुमंगा साक्षात् श्रीमहालक्ष्मी और श्रीस्वामी की अत्यंत प्रिय प्रेयसी हैं। वे समस्त लोकों की स्वामिनी हैं। वे सदा पद्मासना हो, सुकुमार एवं सुंदर अपने हाथों में पद्मों को धारण करके दर्शन देती हैं। पद्म पर विराजमान होने के कारण उस जगन्माई को ''अलर मेलु मंगा'' कहकर, ''अलमेलु मंगम्मा'' कहकर भक्त जन भक्ति से पुकारते हैं। माई प्रेम, दया, करुणा, सहानुभूति आदि असमान श्रेष्ठ गुणों से प्रकाशित होनेवाली दयार्द्र हृदयवाली हैं! वेंकटेश्वर के हृदय पद्म में सदा बसकर जगन्माई निरंतर अखिल जगों पर शासन करती रहती हैं। ऐसी जगन्माता अलमेलु मंगम्मा को हाथ जोडकर हार्दिक रूप से प्रणाम करेंगे।

श्रीमत्सौभाग्यजननीं
स्तौमि लक्ष्मीं सनातनीम्
सर्वकामफलावाप्ति,
साधनैकसुखावहाम्।

समस्त कामनाओं की सुनायास पूर्ति कर सकने का एक ही उपाय के रूप में प्रकाशित और, शाश्वत सत्य सुख प्रदान यनी, सनातनी,

सौभाग्य संपदाओं को प्रदान करनेवाली श्रीमहालक्ष्मी प्रेम स्वरूपिणी हैं। दयार्द्र हृदयवाली माता तिरुमलेश के वक्षस्थल पर ''व्यूह लक्ष्मी'' के रूप में, तिरुचानूर श्रीक्षेत्र में अर्चामूर्ति के रूप में, अलमेलु मंगा के रूप में, पद्मावती के रूप में भक्तों के द्वारा अर्चित हो रही हैं।

मातर्नमामि कमले! कमलायताक्षि!
श्रीविष्णुहृत्कमलवासिनि! विश्वमातः!

श्री वेंकटाचलपति के हृदय कमल में लक्ष्मी देवी के बसने के कारण ही वेंकटाचल क्षेत्र में उस स्वामी का नाम 'श्रीनिवास' नाम पडा है। 'श्री' का अर्थ दयार्द्र हृदयवाली और प्रेम स्वरुपिणी साक्षात श्रीमहालक्ष्मी ही हैं। ''हृदय सरसिजे भूत कारुण्य लक्ष्मी'' के रूप में सभी जीवों पर माई करुणा बरसाती रहती हैं। स्वामी के द्वारा भी यही कराती रहती हैं। इसीलिए व्यूहलक्ष्मी कारुण्यलक्ष्मी कहलाती हैं।

तिरुमल में श्रीहरि के हृदय पर सामने की तरफ उभर कर आसीन हैं अलमेलु मंगम्मा! माई स्वामी की गोद में वैसे ही नहीं बैठी हैं। वे स्वामी से पहले भक्तों की विनतियाँ सुनती हैं। संतान की प्रार्थनाओं, इच्छाओं को बडे संयम से सुनती हैं। कई कष्ट झेलकर आनेवाले भक्तों को देखकर आनंद का अनुभव करती हैं। तुरंत उन के कष्टों, वेदनाओं और दुखों को दूर करती हैं। दूर करना ही नहीं स्वामी को भी उन की समस्त इच्छाओं को सुनाती हैं। मात्र सिर्फ सुनाने से नहीं रुकती हैं। भक्तों की इच्छाओं को अवश्य पूरा करने के लिए स्वामी पर दबाव डालती हैं। इससे उनकी बात को अस्वीकार करने में असमर्थ होने से, उन की बातों

को स्वीकार कर श्रीनिवास भक्तों की सारी इच्छाओं की पूर्ति करते हैं। पहाड जैसे वर देते हैं। पापों को दूर कर देते हैं। दुःखों एवं कष्टों से मुक्त कर देते हैं। समस्त संपदाओं से सब पर अनुग्रह करते हैं।

इस रूप में तिरुमल श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर विराजमान श्री महालक्ष्मी को 'व्यूह लक्ष्मी' कहते हैं। 'व्यूह' का मतलब रहस्य है। रहस्य एवं निगूढ रूप में श्रीनिवास के हृदय पर विराजमान होकर सभी भक्तों को स्वामी के अनुग्रह के लिए योग्य बनाती रहती हैं। स्वामी में दया गुण को बढाती रहती हैं।

निरंतर बिना रुके भक्तों पर, अनंत एवं अपार दया बरसाना ही नहीं बल्कि वेंकटेश्वर के द्वारा बरसवाने के कई उदाहरण मिलते हैं! अब तिरुमल श्रीनिवास की हृदय वासिनी व्यूह लक्ष्मी की अपार दया की एक दिव्य गाथा को, हम सब एक बार स्मरण कर लेंगे! असीम करुणामृत को दोनों हाथों से पीयेंगे! प्यास को बुझालेंगे! मन भर आस्वादन करेंगे।

((((()))))

व्यूहलक्ष्मी (भूतकारुण्यलक्ष्मी) का दिव्यानुग्रह

भरत खंड में अनेक राज्य, अनेक रियासतें और अनेक प्रान्त हैं। उन में प्रसिद्ध प्रांत मध्य प्रदेश है। इस राज्य में कई वर्ष पूर्व घटित एक घटना है यह!

उस राज्य में एक ब्राह्मण रहा करता था। वह बहुत ही निष्ठावान था। नित्य भगवान की चिंता में रहता था। भगवान एक हैं या अनेक! अगर एक ही है तो इतने रूप क्यों हैं! इतने भगवान क्यों हैं! एक ही नाम से सभी को पुकार सकते हैं न! शायद भक्तों की रुचि के अनुसार भगवान ने इतने रूप धारण किये होंगे! इसलिए ''एकम् सत विप्रा बहुधा वदंति'' कहा गया है। इस तरह निरंतर भगवान को लेकर, उनके अस्तित्व को लेकर अपने आप में वह ब्राह्मण सोचा करता था। उन की लीलाओं को स्मरण करता था। तद्वारा उस भगवान की अनुभूतियों में डूबा रहता था। आनंद का अनुभव करता था।

इस तरह अपने लोक में, अपने आप में, आनंद का अनुभव करते हुए, रमनेवाले उस ब्राह्मण को ''आत्माराम'' नाम पड गया। नाम पडा ही नहीं लोग उसे उसी नाम से पुकारने भी लगे। ब्राह्मण भी उस नाम से पुकारनेवालों को जवाब देता था। उस का असली नाम किसी को पता नहीं था। उस राज्य में उस का नाम ''आत्माराम'' ही रूढ हो गया। हम भी उसे उसी नाम से पुकारेंगे! उसी नाम से उस की श्रुतिमधुर गाथा को सुनेंगे।

आत्माराम सदाचारी संपन्न श्रेष्ठ ब्राह्मण है। इसलिए उस राज्य में सभी को उस पर अत्यंत गौरव था, श्रद्धा-भक्ति थी। उसका घर सदा

अतिथियों से, अभाग्य लोगों से भरपूर रहा करता था। उस का आँगन सदा मित्रों से, बंधु-बांधवों से अत्यंत कोलाहल मय रहता था। हर दिन अपने घर पर आनेवाले अतिथियों को समय और असमय न सोचकर वह अन्नदान करता था। निरंतर भूखे लोगों को भोजन के साथ साथ आध्यात्मिक प्रबोध भी करता था। 'सदाचारियों का आदर कीजिए। उन के पालन से आप का भी जीवन सुधर जाएगा। आप का जीवन सुखमय होगा।' ऐसे प्रबोध वह देता था। यह सब तो ठीक है। लेकिन वह ब्राह्मण बिना किसी रोक के निरंतर अत्यंत उदारता से अन्नदान और दान धर्म करता था। फल स्वरूप पूर्वजों के द्वारा छोडी गयी सिरि-संपदाएँ सभी कपूर की तरह जलकर समाप्त हो गयीं।

कुछ ही दिनों में ब्राह्मण की सारी संपदाएँ घटकर वह अत्यंत गरीब बन गया। गरीबी के साथ साथ वह अनेक कष्टों का शिकार भी हो गया। इसलिए वह अपने मकान और गाँव को छोडकर घूमने लगा।

घूमते-घामते कुछ दिनों के बाद वह वेंकटाचल क्षेत्र के समीप पहुँच गया। उसी समय कुछ यात्री भी उस के साथ जुड गए। उन सब से मिलकर सप्तगिरियों के तल में बसे कपिल तीर्थ क्षेत्र के दर्शन किए। वहाँ तीर्थ-दर्शन विधियों को पूरा कर श्रीकामाक्षी समेत श्रीकपिलेश्वर स्वामी की सेवा की। तदुपरांत वेंकटाचल पहाड पर चढते समय उस मार्ग में आत्माराम को एक आसक्तिपूर्ण पहाडी गुफा दिखाई दी। घूम घूम कर थके उस ब्राह्मण ने उस गुफा के सामने थोडी देर बैठकर आराम करना चाहा। इतने में गुफा के अंदर से 'ओम - - ओम' ओमकार नाद सुनाई पडा। उस नाद को सुनते ही वह ब्राह्मण गुफा के अंदर चला गया।

आत्माराम कुछ कदम गुफा के अंदर चला गया। वहाँ उस गुफा में एक शिला पर एक योगी बैठकर तप करने का दृश्य दिखाई दिया। बस! उस ब्राह्मण ने भक्ति प्रपत्ति से उस योगी को साष्टांग प्रणाम किया। सनतकुमार नामक उस मुनि ने नेत्र खोलकर आत्माराम को देखा। उस ब्राह्मण ने उस मुनि को अपनी पूरी कहानी सुनायी। अपने जीवन के अष्टकष्टों के बारे में, अपनी बाधाओं के बारे में, अपनी घरवाली को छोडकर आवारा की तरह घूमने की बात के बारे में आर्ति बन कर पूरा सुनाकर रो पडा।

तुरंत सनतकुमार ने अपनी दिव्य शक्ति से उस की दीन स्थिति का अनुशीलन किया। उसे तसल्ली देते हुए कहा -

''हे भूसुर! पूर्व जन्मों में तुम ने अनेक पाप किए हैं। उन पापों के परिणाम स्वरूप ही अब तुम कष्टों को झेल रहे हो। किंतु इस वेंकटाचल पर्वत मूल में स्थित कपिल तीर्थ में स्नान करने के कारण तुम्हारे सभी पाप नष्ट हो गए। लेकिन आगे सर्व-संपदाओं से सुखी रहने के लिए, श्रीमहालक्ष्मी का परिपूर्ण अनुग्रह तुम को चाहिए। प्रस्तुत काल में श्रीमहालक्ष्मी देवी इस वेंकटाद्री क्षेत्र में श्रीवेंकटेश्वर के नाम से पुकारे जानेवाले श्रीमहाविष्णु के वक्षःस्थल पर ''व्यूहलक्ष्मी'' बन कर गोपनीय रूप में हैं। उस जगन्माता अलमेलुमंगा के अनुग्रह को अगर तुम प्राप्त कर सकते हो तो, सकल संपदाओं को तुम प्राप्त कर सकते हो। इस के लिए तुम को दिव्य व्यूह लक्ष्मी महामंत्र का उपदेश दूँगा। तुम वेंकटाचल क्षेत्र में स्थित 'स्वामी पुष्करिणी' में प्रति दिन तीन संध्याओं में स्नान मेरे द्वारा उपदेशित महालक्ष्मी मंत्र से श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर विराजमान व्यूह

लक्ष्मी श्रीमहालक्ष्मी की आराधना करो। अर्चना करो। अगर तुम नियम-निष्ठा से माई की कठोर उपासना करोगे तो उस जगन्माता की अनंत करुणा दृष्टि तुम पर प्रसरित होंगी। तब तुम्हारी सारी कामनाओं की पूर्ति होगी। सावधानी से सुनो, कहते हुए श्री वेंकटेश्वर स्वामी के हृदय पद्म में बसी व्यूहलक्ष्मी के मंत्र का उपदेश किया -

दयालोलतरंगाक्षी पूर्णचंद्रनिभानना
जननी सर्वलोकानां महालक्ष्मीर्हरिप्रिया!
सर्वपाप हरासैव प्रारब्धस्यापि कर्मणः!
संहृतौतु क्षमासैव सर्वसंपत्प्रदायिनी!
तस्या व्यूह प्रभेदास्तु लक्ष्मीः सर्वपाप प्रणाशिनी
तत्र या व्यूह लक्ष्मीःसामुग्धा कारुण्य विग्रह!
अनायासेन सा लक्ष्मीः सर्वपापप्रणाशिनी
सर्वैश्वर्यप्रदा नित्यं तस्या मंत्र मिमं शृणु!
वेदादिमायै मात्रे च लक्ष्म्येनति वदं वदेत्
परमेति पदं चोक्तात्व लक्ष्मा इति पदक्ष्म्ये ततः
विष्णु वक्षः स्थितायै स्यात माया श्री तारिका ततः
वह्नि जायान्त मंत्रोयं अभीष्टार्थ सुरद्रुमः
द्विभुजा व्यूहलक्ष्मीस्स्याद्बद्धपद्मासनप्रिया
श्रीनिवासांगमध्यस्था सुतरां केशवप्रिया!
तामेव शरणं गच्छ सर्वभावेन सत्वरम्
इति मंत्रमुपादिश्य ददृशे न कुत्रचित्!

पूर्णिमा के दिन संपूर्ण कलाओं के साथ प्रकाशित पूर्ण चंद्र के समान सुंदर मुखराविंद से शोभित श्री महालक्ष्मी देवी सर्वलोक जननी! आप

श्रीमन्नारायण की अत्यंत प्रिय प्रेयसी के रूप में रहना ही नहीं है, आश्रित भक्तों पर दया से भरी करुणा रस को प्रवाहित करती विशाल नेत्रों से विराजमान रहती हैं।

जगन्माता अत्यधिक असह्य, प्रारब्ध कर्मों को, दोषों को क्षमा करके दूर करना ही नहीं, सर्व संपदाओं को प्रदान करने में अत्यंत सामर्थ्य रखनेवाली माँ हैं!

जगज्ञननी लक्ष्मी, कीर्ति और जया नामक त्रिविध व्यूह भेदों से प्रकाशित रहती हैं। उस में भी श्रीवेंकटाचल में श्रीवेंकटेश्वर के वक्षःस्थल पर विराजमान व्यूह मूर्ति का नाम लक्ष्मी है। वे श्रीनिवास के हृदय पद्म में मुग्ध मनोहर रूप से बसना ही नहीं अत्यंत दयार्द्र स्वरूपिणी के रूप में दर्शन देती रहती हैं।

श्रीनिवास के वक्षःस्थल रूपी विशाल भवन की पटरानी व्यूह लक्ष्मी अनायास ही समस्त पापों को दूर करने के साथ साथ सर्व संपदाओं की धात्री भी हैं। श्रीवेंकटेश्वर के हृदयाकाश में चमकते नक्षत्र की तरह प्रकाशित लोकमाता व्यूह लक्ष्मी को लेकर बनाये गये महामंत्र को तुझे बीजाक्षर सहित उपदेश दे रहा हूँ। सावधानी से सुनकर पालन करो, कहते हुए बताया।

'वेद', 'माता', 'लक्ष्मी', 'परम लक्ष्मी', 'विष्णुवक्षःस्थितायै', 'माया', 'तारिका', 'वह्निजायै' आदि सब पदों - - - को जोडते हुए इस मंत्र का उच्चारण करना चाहिए। इस रूप में मनन करने से वह मंत्र कल्पवृक्ष की तरह सारी इच्छाओं की पूर्ति करेगा।

श्रीलक्ष्मी चरण तेज से प्रकाशित होनेवाले श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर पद्मासनस्था हो दो भुजाओं के साथ बसी व्यूह लक्ष्मी साक्षात श्रीविष्णु की अत्यंत प्रिय प्रेयसी है।

हे! आत्माराम! तुम वेंकटाचल की स्वामीपुष्करिणी में नियम निष्ठा के साथ प्रति दिन तीनों संध्याओं में संकल्पपूर्वक स्नान करने के बाद मन, वाक तथा कर्म से हर पल श्रीनिवास की वक्षःस्थल लक्ष्मी की आराधना करो। उस लोक माता की शरणागति को प्राप्त करना ही तुम्हारे लिए परमगति है! तुम्हारे सामने और कोई उपाय नहीं है।'' इतना कह कर सनत कुमार योगी ने अत्यंत गोपनीय व्यूह लक्ष्मी के महामंत्र के बीजाक्षरों का उपदेश दिया। सकल संपदा प्राप्ति के लिए भरपूर आशीर्वाद भी।

अत्यंत महिमावान श्रीमहालक्ष्मी मंत्रराज के उपदेश प्रसंग को आश्चर्य एवं आनंद के साथ स्मरण करते हुए आत्माराम विनम्रता के साथ साथ वेंकटाचल पहुँचा। मार्ग के पुण्य तीर्थों में डुबकी लगाते हुए ही शेषाचल पहुँच गया। पहले पहल सुवर्णमय देदीप्यमान ''आनंद निलय विमान का' नेत्र पर्व दर्शन किया। पता नहीं किन्हीं दिव्य लोकों में विचरण करने की अनुभूतियों को प्राप्त किया। हाथ जोड कर प्रणाम किया। आनंद निलय के विमान शिखर की महापरिक्रमा की। उस के पास ही स्थित 'स्वामी की पुष्करिणी' के दर्शन किए।

स्वामिपुष्करिणीस्नानं सद्गुरोः पादसेवनम्
एकादशीव्रतं चापि त्रयमत्यंतदुर्लभम्
दुर्लभं मानुषं जन्म दुर्लभं तत्र जीवनम्
स्वामिपुष्करिणीस्नानं त्रयमत्यंतदुर्लभम्।

सप्तगिरियों में स्थित स्वामी की पुष्करिणी में स्नान करने का भाग्य प्राप्त होना, सद्गुरुओं की पाद सेवा करने का महत्तर अवसर मिलना, एकादशी व्रत करने का भाग्य प्राप्त होना, ये तीनों आसानी से संभव होनेवाले नहीं हैं। उसी तरह मनुष्य जन्म पाना, मानवता के साथ जीना, उस मनुष्य को स्वामी की पुष्करिणी में स्नान करने का सौभाग्य मिलना, ये तीनों भी अति दुर्लभ हैं, यह बुजुर्ग लोग कहते हैं।

इस वेंकटाद्रि पर स्थित पवित्र सरोवर में स्नान करने का महाभाग्य मुझे प्राप्त हुआ है! ऐसी भावना के साथ आत्माराम ने अनेक रूपों में स्वामीपुष्करिणी की महिमा का कीर्तन किया और भक्ति के साथ सर झुकाकर नमस्कार किया। तदुपरांत संकल्पपूर्वक उन पवित्र जलों में स्नान किया। श्रीनिवास के दर्शन से पहले श्रीश्वेतवराहस्वामी के दर्शन की परंपरा का पालन करते हुए श्री भूदेवी समेत श्रीआदिवराहस्वामी के दर्शन किए। फिर आत्माराम ने आनंद निलय स्वामी श्रीवेंकटेश्वर के दर्शन करके कीर्तन किया।

''श्रीवैकुंठ को छोडकर भूलोक वैकुंठ मानेजानेवाले इस वेंकटाचल क्षेत्र में भक्तों के लिए कामधेनु बनकर समस्त इच्छाओं की पूर्ति करनेवाले, भक्तों के लिए चिंतामणी तथा कल्पवृक्ष बनकर दर्शन देनेवाले साक्षात प्रत्यक्ष देव श्रीवेंकटेश्वर के दर्शन भाग्य प्राप्त करना मेरा परम सौभाग्य है। ओह! क्या सौंदर्य! दिव्य देहधारी, सफेद कमलों जैसे नेत्र, मंद मुस्कान से प्रकाशित परंधाम श्रीवेंकटेश्वर!

घुँघुरू, नूपुर से विराजमान पाद पद्म! चमकीली कांति से प्रकाशवान नंदक तलवार! रेशमी धोती पर अत्यंत सुंदर लग रहा है। लो कमरबंध!

कमर धागा! नाभी में कमल, वरद हस्त, कटि हस्त! शंख चक्रवाले हस्त! वक्षःस्थल पर कौस्तुभ मणि! चमकते सुंदर रत्नहार! गले में कंटी, हार, श्रेष्ठ भुजकीर्तियाँ! सुंदर लगनेवाला मोतियों का त्रिपुंड्र! मकर कुंडल! सिर पर सजी वज्रों का किरीट! ओह इस की मूर्ति के सौंदर्य का चित्रण नहीं कर सकते! कितना दिव्य सौंदर्य! दिव्य स्वरूप! अवर्णित अद्भुत सौंदर्य, दिव्य सौंदर्य!

भूलोकवासी अत्यंत सौभाग्यवान हैं। ऐसे सौंदर्यमूर्ति के दर्शन करने का सौभाग्य उन्हें प्राप्त हुआ है। साक्षात श्रीमन्नारायण भूलोक में पधारकर भक्तों के पापों एवं दोषों को दूर करते हुए, सब की इच्छाओं की पूर्ति करते हुए ''कलौ वेंकट नायकः'' रूप में प्रचलित होकर दर्शन देनेवाले स्वामी श्रीवेंकटेश्वर ही हैं!

वेंकटाचलपति के रूप में, सप्तगिरीश के रूप में, सात पहाडों के देव के रूप में, तिरुमलेश के रूप में, श्रीनिवास के रूप में, भक्तों द्वारा आर्ति से आर्द्र हो आनंद के साथ पुकारे जानेवाले श्रीवेंकटेश्वर का अनेक रूपों में कीर्तन करते हुए आत्माराम ने स्वामी के दिव्य मंगल रूप को नेत्रपर्व रूप में दर्शन किया और मन भर कीर्तन किया। तदुपरांत उस स्वामी के वक्षःस्थल पर व्यूह लक्ष्मी श्रीमहालक्ष्मी माई को विशेष रूप से नमस्कार समर्पित कर कीर्तन किया।

''हे माई! लोक जननी! हे महालक्ष्मी! अपने पति श्रीवेंकटेश्वर की अतुलनीय शक्ति के लिए, प्रभुता केलिए कारणभूत होकर तुम प्रकाशित हो रही हो! भक्तों के असह्य दारिद्रय को दूर करने के लिए श्रीहरि के वक्षःस्थल पर प्रकाशित होनवाली पृच्छल तारा भी तुम हो! भक्तों की आपदाएँ सागर समान हैं। संख्या में अनेक हैं। बहुत गहरी भी हैं।

समस्याएँ रूपी सागर को पार करने के लिए दृढ पुल तुम ही हो हे जगन्माई! करूणा से मुझ पर भी दया दिखाओ माई!

हे हरि कुटुंबिनी! अखिल भुवनों में सब से श्रेष्ठ वैभववाली तुम ही हो! तुम्हारे सम कोई नहीं है! समस्त देवतागण से पूजित होनेवाले पाद पद्मवाली तुम ही हो! करूणा से भरी तुम्हारी दिव्य दृष्टि समस्त दुसह्य दारिद्र्य व रोग-पीडाओं को दूर करनेवाली हो। तुम्हारी दया प्राप्त लोग बडी बडी सभाओं में भी अत्यंत आसानी से प्रशंसा प्राप्त करते हैं। साथ साथ धन, कनक, वस्तु-वाहनादि समृद्धि प्राप्त करके उन्नत पदों पर भी आसीन हो जाते हैं। माई इस में कोई संदेह व आश्चर्य की बात नहीं है।

लक्ष्मीप्रदानसमये नवविद्रुमाभाम्
विद्याप्रदानसमये शरदिंदुशुभ्राम्
विद्वेषिवर्गविजये च तमालनीलाम्
देवीं त्रिलोकजननीं शरणं प्रपद्ये।

माता! श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के वक्षस्थल पर विराजित हे महालक्ष्मी! त्रिलोक जननी! सर्वसंपदाओं का अनुग्रह करते समय तुम नवोन्मेष नवीन दिव्य मूँगे के समान प्रकाशित होती रहती हो। विद्या प्रदान करते समय शरत ऋतु की पौर्णिमी के चंद्रबिंब सम स्वच्छ, संपूर्ण और भरापूरा, सारी कलाओँ से विराजित रहती हो। शत्रुवर्गों को पराजित करते समय चमकती काली माता के रूप में अत्यंत रौद्र भासित होती रहती हो माई! हे जगन्माता! तुझ से मैं शरण माँग रहा हूँ।

माता! हे अलमेलु मंगम्मा! तुम श्रीवेंकटेश्वर की पटराणी हो! हमारे मंगल-कुशल पूछने की शक्ति सिर्फ तुम्हारे पास ही है माई !

तुम कमलज ब्रह्मदेव की साक्षात माँ हो! अतिलोकसुंदर और सुकुमार मन्मथ की माँ भी तुम ही हो! समस्त देवतागण तुम्हारी संतान ही है। अपने प्रिय पति श्रीनिवास स्वामी को हमारी विनतियाँ सुनाकर हमारी सदा रक्षा करनेवाली माँ तुम ही हो! माई! भरपूर दया गुण सिर्फ तुम ही में है माई!

हे महालक्ष्मी! माँगी गयी सारी इच्छाओं की पूर्ति कर सकनेवाली कामधेनु और कल्पवृक्ष दोनों तुम्हारे साथ क्षीर सागर से पैदा हुए हैं। वे दोनों तात्कालिक एवं अशाश्वत संपदाएँ प्रदान करनेवाले हैं। लेकिन हे सिरियों की माई तुम्हारे पति श्रीनिवास की आज्ञा से अखंड, शाश्वत और सत्य संपत्तियों को हम पर बरसानेवाली माई तुम ही हो! इस में क्या संदेह है माई! शीतल चंद्रमा भी आप का ही सहोदर ही है न! इसलिए तुम्हारे पास भी उसी प्रकार की शीतलता होने में क्या आश्चर्य है!

हे जगन्माता! एक ओर तुम क्षीर सागर की पुत्री हो! दूसरी ओर क्षीर सागर पर शेषशायी श्रीवेंकटेश की पटराणी हो! उस स्वामी के भक्तों को इह और पर दोनों का अनुग्रह प्रदान कर सकनेवाली माई हो! ऐसी दया का सागर जैसी तुम से संबंध हमारे लिए अत्यधिक प्रयोजनकारी ही हैं न।''

आत्माराम ने अनेक रूपों में श्रीवेंकटेश्वर के वक्षःस्थल पर विराजित श्रीमहालक्ष्मी की स्तुति की। अपने गुरु सनत कुमार योगी द्वारा उपदेशित महामंत्र से अत्यंत नियम-निष्ठा एवं भक्ति तत्परता के साथ उपासना की।

वेंकटाचल क्षेत्र परम पवित्र क्षेत्र है। अत्यंत पुण्यप्रद भी है। दिव्य साधना का क्षेत्र ही नहीं बल्कि सिद्धि अनुग्रह करनेवाला पुण्य क्षेत्र भी

है। ऐसे क्षेत्र में सद्गुरु सनतकुमार योगी के द्वारा उपदेशित महामंत्र के साथ आत्माराम ने उपासना की। पुण्य क्षेत्र, सद्गुरु, दिव्य मंत्र-इन तीनों के जुडने के कारण आत्माराम बहुत कम समय में एक दिव्य आध्यात्मिक स्थिति को प्राप्त कर गया।

तीनों संध्याओं में स्वामी की पुष्करिणी में स्नान करके सप्तगिरीश तथा उन के हृदय स्थित व्यूह लक्ष्मी की भक्ति प्रपत्ति के साथ उपासना की। उसकी यही दुनिया थी। दूसरी कोई दुनिया नहीं!

आत्माराम दूसरों की सोंठ के लिए जानेवाला नहीं था। दूसरों पर न कोई बहाना बनाता था। दूसरे लोग क्या सोचेंगे इसकी परवाह भी नहीं करता था! वास्तव में वह दूसरों की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखता था। समाज की दृष्टि में वह एक पागल है। सिर्फ एक पागल है। हमेशा स्नान स्नान कहते पानी में भीगता रहता है। हमेशा कुछ न कुछ भडभडाता रहता है। सच है! ऐसा पागलपन सबको नहीं होता है। जिसे ऐसा पागलपन होता है वह सचमुच ही भाग्यवान है। आत्माराम को देखकर उसे पागल समझनेवाला ही सचमुच पागल है।

लगभग छे महीने तक आत्माराम ने आनंद निलय के स्वामी श्रीनिवास की दिव्य मंगल मूर्ति का दर्शन करते हुए उन के वक्षःस्थल पर विराजित माई की कठोर उपासना की।

एक दिन श्री वेंकटेश्वर ने अपनी वक्षःस्थल महालक्ष्मी के साथ प्रत्यक्ष होकर आत्माराम को दर्शन दिए।

शंखचक्रादि पंचायुधों से, हारकेयूरादि किरीट कुंडलों से, वक्षस्थल महालक्ष्मी के साथ प्रत्यक्ष श्रीनिवास स्वामी के आत्माराम ने आनंद से

नेत्रपर्व दर्शन किए। संतोष के साथ सप्तगिरीश की अनेक रूपों में स्तुति की।

तब उस ब्राह्मण की प्रार्थनाओँ से संतुष्ट श्रीवेंकटेश्वर ने कहा-

"हे ब्राह्मण श्रेष्ठ! स्वामी की पुष्करिणी में स्नान करने से तुम्हारे सभी पाप नष्ट हो गए हैं। तुम्हारी कठोर उपासना से लक्ष्मीदेवी संतुष्ट हो गयी हैं। लक्ष्मीदेवी की अपार करुणा तुम पर प्रसारित हुई है। तुम अब सकल संपदाओं से संपन्न होकर सुख-संतोष के साथ, दान-धर्मो का आचरण करो। तुम्हारी संपदाएँ किसी भी रूप में कम नहीं होंगी। तुम्हारा मंगल हो। जाओ!" आशीर्वाद देकर स्वामी अदृश्य हो गए।

उस रूप में दर्शन देकर सारी इच्छाओं की पूर्ति करनेवाले श्री वेंकटेश्वर के जगन्मोहन दिव्य मंगल स्वरूप को, जगदेक माई, श्री निवास की पटराणी अलमेलु मंगा के दिव्य, सुंदर, सुकुमार दिव्य रूप को स्मरण करते हुए, स्वामी के द्वारा अनुग्रहीत हो अपने गाँव लौटे। महालक्ष्मी देवी के अनुग्रह के लिए योग्य बनानेवाले अपने गुरु सनतकुमार योगी का स्मरण किया। सकल सुख-सुविधाओं को प्राप्त किया। आत्माराम ने पहले की तरह नित्य अन्नदान, दान-धर्म करते हुए आखिर में जन्म राहित्य मुक्ति को प्राप्त किया।

श्रीनिवासके वक्षःस्थल पर विराजित श्रीमहालक्ष्मी 'व्यूहलक्ष्मी' की अनुग्रह परंपराएँ ही आत्माराम की अक्षय संपदाओं का मूल कारण हैं। इस तरह व्यूह लक्ष्मी ने, अपने नाथ के श्रीनिवास तथा श्रीनाथ नाम को सार्थक बनाया। इस के अतिरिक्त निरंतर स्वामी के दर्शन करनेवाले

भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति करने में और उन के दुःखों को दूर करने में कारणभूत हो रही हैं।

द्विभुजा व्यूहलक्ष्मीः स्यात् बद्धपद्मासनप्रिया
श्रीनिवासांगमध्यस्था सुतरां केशवप्रिया
तामेव शरणं गच्छ सर्वभावेन सत्वरम्।

उस माई को 'व्यूहलक्ष्मी' कहते हैं। वे श्रीनिवास के हृदय पद्म में 'श्रीवत्स' नामक तिल चिह्न के रूप में विराजित हैं। वह तिल चिह्न साक्षात श्रीनिवास की दया का चिह्न है। इसलिए उन्हें 'लक्ष्मी' कहते हैं। 'लक्ष्म' का अर्थ चिह्न है। किस का चिह्न? श्रीनिवास के अपार, अनंत, आनंदमय 'दया' का चिह्न है। करुणा का चिह्न है। इसलिए 'लक्ष्मी' के रूप में ठहरा है। दया स्वरूपिणी उस माई को 'लक्ष्मी' कहकर समस्त देवतागण पुकारता है। जगन्माता दया, करुणा, क्षमा आदि सहज दिव्य गुणों से भासित होती हुई, सब के द्वारा आराधना प्राप्त कर रही हैं।

((((())))))

तिरुमला में श्रीनिवास की वक्षःस्थल वासिनी 'व्यूहलक्ष्मी' को लेकर इधर घटे वृत्तांत के बारे में आगे जानकारी प्राप्त करेंगे।

अनंताल्वान की पुत्री वक्षःस्थल महालक्ष्मी

तिरुमल क्षेत्र में बस कर श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के पुष्प कैंकर्य में रत एक महाभक्त रहा करता था। उस का नाम अनंताल्वान है। यह भगवद्रामानुज (सन १०१७ - ११३७ ई.) का शिष्य है।

गुरु की आज्ञा से तिरुमल पहुँचकर अनंताल्वान ने स्वामी के पुष्प कैंकर्य के लिए हर पल श्रम किया। स्वामी के कैंकर्य के लिए पर्याप्त फूल प्राप्त नहीं होने के कारण, स्वयं एक फूलों के बगीचे का निर्माण करना चाहा। उस के लिए पहले एक सरोवर का निर्माण कराया। स्वयं अपनी पत्नी के साथ मिलकर सरोवर बनाने का निर्णय लिया। भगवान की सेवा के लिए निर्मित होनेवाले इस सरोवार के निर्माण में अन्यों के सहाय-सहकार स्वीकार नहीं करते हुए अनंतल्वान ने अपनी पत्नी के साथ दिन रात काम किया। बहतु कष्टदायक मिट्टी का काम करनेवाले पति-पत्नी को श्रीवेंकटेश्वर थोडी सहायता पताहुँचाने के उद्देश्य से बारह साल के बच्चे के रूप में आये। स्वयं सहायता करने की बात कही। अनंताल्वान ने उसे अस्वीकारा। बिना निमंत्रण के किसी कार्यक्रम में न जाने की बात कही।

तत्काल लौटनेवाला बालक श्रीनिवास, फिर से आकर अनंताल्वान को बिना सूचना दिए उन की पत्नी को मिट्टी ढोनेवाले काम में सहायता करने लगा। मना करने पर भी फिर से आकर सहायता करनेवाले बालक को देखकर अनंताल्वान को बडा गुस्सा आया। अपने हाथ की कुल्हाडी से उसे दे मारा। कुल्हाडी बालक के चिबुक पर लगकर घाव हो गया। फिर भी बालक पर अनंताल्वान का गुस्सा कम नहीं हुआ। भागनेवाले

के पीछे वह दौडता गया। इस बीच वह बालक मंदिर में घसुकर घायब हो गया। उस के बाद स्वामी के दर्शन करने गए अनंताल्वान को श्रीनिवास के चिबुक पर खून बहते घाव दिखाई दिया। उस घाव पर क्पूर लगानेवाले अर्चकों की बातें कि 'किसी आतताई ने इस स्वामी को घायल किया' बस, अनंताल्वान को श्रीनिवास के चेहरे में अपने को मिट्टी के काम में सहायता करनेवाले बालक का चेहरा दिखाई दिया। अनंताल्वान अचंभे में पडकर रो पडा। 'आगे इस प्रकार की गलती नहीं करूँगा'- उस ने नाक पकड पर शपथ ली। ऐसी अद्भुत घटनाएँ और प्रसंग अनंताल्वान के जीवन में अनेक हुए। इन घटनाओं से श्रीनिवास के साथ उस की समीपता बढी।

उस दिन से अनंताल्वान के कारण चिबुक पर हुए घाव को गर्व के साथ कपूर के साथ सजाकर स्वयं खुश होते हुए परम पुरुष श्रीनिवास अपने भक्तों को खुश कर रहे हैं। घाव के लिए जिम्मेदार कुल्हाडी को मंदिर में उचित स्थान पर रख दिया गया। स्वामी के मंदिर के महाद्वार के 'पडिकावली' दरवाजे के पास अंदर ऊपर उत्तर दिशा में अब भी है। दीवार पर कुल्हाडी लटकायी गयी है। उस की पहचान के लिए ''अनंताल्वान की कुल्हाडी'' नाम से एक सूची पट्टी भी उस कुल्हाडी के नीचे है। भक्त जन मंदिर में प्रवेश करते समय या बाहर आते समय महाद्वार की उत्तर दिशा में दीवार पर लटकायी गयी कुल्हाडी का दर्शन कर सकते हैं।

अनंताल्वान के जीवन में घटित एक और मुख्य प्रसंग को भी सभी भक्तों को जानना चाहिए। साक्षात श्रीस्वामी के वक्षस्थल पर की व्यूह लक्ष्मी को अनंताल्वान के द्वारा एक पेड को बांध कर रखने से संबन्धित दिव्य इतिवृत्त को, दिव्य गाथा को, सभी को जान लेना चाहिए।

सरोवर का निर्माण कर अनंताल्वान ने उस की चारों तरफ एक अद्भुत फूलों का उपवन विकसित किया। उस उपवन में रंगबिरंगे फूलों, मनोहर सुगंध बिखेरनेवाले फूलों को रोपा। पाल-पोस कर बडा किया। तुलसी के पौधों को भी रोपा। एक दो नहीं बडी संख्या में फूलों के पौधों को अनंताल्वान ने रोपा, सिंचा और बडा किया। उन में पीले, सफेद गेंडे, चमेली,जुही, केवडिया, कनेर, बगरे,कमल, गुलाब, माची पत्र, मरवम, दवनम, बिल्व, कनकांबर आदि अनेक पुष्प जातियाँ, सुंदर पत्तों की अनेक जातियाँ उस उपवन में हैं। उस उपवन से पुष्पित-पल्लवित पुष्पों को स्वामी के कैंकर्य के लिए उपयोग करते थे। अनंताल्वान सिर्फ उपवन को बनाना ही नहीं स्वयं फूलों को बटोर कर सुंदर मालाएँ बनाकर भक्ति से स्वामी को रोज समर्पित करते थे।

हर दिन प्रातःकाल और संध्या काल दोनों सत्रों में श्रीस्वामी के लिए की जानेवाली 'तोमाल सेवा' के समय अनंताल्वान के द्वारा समर्पित फूल मालाओं से अर्चक स्वामी का श्रृंगार करते थे। अपने कद की उन फूल मालाओं को अपने शरीर पर धारण करवाकर स्वामी बडे संतोष के साथ दर्शन देते थे। अपने को समर्पित फूल मालाएँ ही इतने सुंदर हैं तो इन का मूलाधार उपवन और कितना सुंदर होगा। इस तरह स्वामी भी सोचने लगे। भक्तवत्सल बालाजी, श्रीवक्षस्थल महालक्ष्मीसमेत श्रीनिवास ने बडी दीक्षा के साथ रोजाना मालाओं के कैंकर्य से अपना श्रृंगार करवा कर आनंद प्रदान करनेवाले अनंताल्वान की एक और परीक्षा लेनी

चाही। बस! एक दिन एकांत सेवा के अनंतर स्वामी के मंदिर के सोने के द्वार बंद करके अर्चक घर चले गये। बस, उस रात को आनंद निलय स्वामी अपने वक्षःस्थल की अलमेलुमंगा के साथ अनंताल्वान के उपवन को देखने गए। उपवन को देखकर बहुत खुश हुए। वे दोनों दिव्य दंपति पूरे उपवन में घूमे। स्वेच्छा से और आनंद से विहार किया। विहार करते करते क्रीडाएँ भी कीं। प्रत्येक फूल को सूंघा। उन की गंध से आनंदित हुए। कुछ फूलों को श्रीनिवास ने तोडकर माई के जूडे में लगाया। कुछ को सूंघ कर फेंक दिया। कुछ को तोड कर कानों में लगा लिया। कुछ को अपने केशों में भी लगा लिया।

दूसरी ओर माता ने भी कम शरारत नहीं की। देखिए वह फूल! कितना सुंदर है! किस रूप में महक रहा है! कहती हुई फूलों को तुरंत तोडकर स्वामी को दिखाती! फिर उन से छीनकर जूडे में लगा लेती। कुछ और को स्वयं तोडकर गंध सूंघकर स्वामी की ओर फेंकती। ''यहाँ इस ओर देखिए स्वामी! यह पौधा कैसे पला है। कितना सुंदर लग रहा है। इस के फूलों को तुम लगाओगे तो बहुत सुंदर होगा स्वामी!'' कहती हुई अलमेलुमंगा फूलों को तोडकर श्रीनिवास के सर पर लगाती है। स्वामी! इन फूलों को लगा कर और भी सुंदर लग रहे हैं। ''एक बार आप अपनी ओर देख लीजिए। यह फूल कितना सुंदर है स्वामी! आप देखिए! यह सिर्फ सुंदर ही नहीं इस की गंध देखिए कितना मधुर है! देखिए स्वामी! देखिए!'' कहती हुई स्वामी की नाक के पास फूल रखती है। इस प्रकार स्वामी और माई दोनों पूरे उपवन भर घूमते फूल और पत्ते तोडते, एक दूसरे पर फेंकते विहार करने लगे। थोडी ही देर में पूरा उपवन नष्टप्राय जैसा हो गया। जहाँ देखो वहाँ तोडे गए फूल, तोडे गए पत्ते,

पूरा उपवन भ्रष्ट हो गया। सुप्रभात के समय तक स्वामी और माई दोनों मंदिर लौट आए।

प्रातःकाल उपवन फूल बटोरने आए अनंताल्वान को उपवन के दृश्य ने व्याकुलता में डाल दिया। पूरा उपवन नष्ट हो चुका। उसे चक्कर आया। उस का मन टूट गया। पूरे उपवन को घूम घूम कर देखा। तितर बितर पौधे, तोड कर मसले गए फूल, टूटी टहनियाँ इस दृश्य को देखकर थोडी देर के लिए अनंताल्वान को चिढ हुआ। आँखों में चक्कर आने लगा। कोई बाधा उसे सता रही थी। कुछ समय तक वह सहज नहीं हो पाया। अनंताल्वान अपने उपवन को नष्ट करनेवालों को मन भर कोसा। गालियाँ सुनायीं। ''किस अप्राच्य ने मेरे उपवन को नष्ट किया? उन गधों को मेरा ही उपवन मिला है क्या! देखो कैसे ध्वंस किया? अगर वे मेरी पकड में आयेंगे तो मरने तक उन्हें पीटूँगा। वे मुष्कर हैं। आगे इस उपवन को इस रूप में नहीं छोडना चाहिए। सावधानी से इस की रखवाली करनी चाहिए।''- सोचते हुए अनंताल्वान उस दिन से उपवन की रात और दिन रक्षा करने लगा। इसके लिए उसने अपने निवास को भी उपवन में बसा लिया। उस दिन से हर रात को आँखों में सुरमा लगाकर रात भर जागकर उपवन की रखवाली की। लेकिन कोई प्रयोजन नहीं हुआ। हर दिन चोर अनंताल्वान की आंखें बचाकर फूलों को तोडने लगे। पेड-पौधों को नष्ट करते ही रहे।

इस तरह आठ दिन बीत गए। चोरों का पता नहीं चला। थककर निराश हुए अनंताल्वान ने ''स्वामी! वेंकटेश्वर! मैं फूलों के चोर को

पकड नहीं सका। चोरों से अपने उपवान को आप ही बचा लो स्वामी! मैं अब अशक्त हूँ! मुझ पर दया करके माई! अलमेलुमंगम्मा! कम से कम तुम अपने स्वामी को बताकर इस उपवन को बचाओ माई!''- उसने मन से माई की शरण माँगते हुए प्रार्थना की।

श्रीवेंकटेश्वर तो भक्तप्रिय है न!अपने भक्तों को बाधा होगी तो वे सहन कर पायेंगे क्या! कभी भी नहीं! इसलिए अनंताल्वान की प्रार्थना सुनकर पहाड जैसे स्वामी पिघल कर पानी पानी हो गए।

श्रीनिवास और उन के हृदय पर विराजित वक्षःस्थल महालक्ष्मी दोनों ने साथ साथ निर्णय कर लिया। अगले दिन की रात को हम ही लोग चोर बनकर उपवन को नष्ट पहुँचा रहे हैं, इस सच्चाई को अनंताल्वान को बताने का संकल्प किया।

नौंवाँ दिन, उस रात को भी अनंताल्वान बहुत संयम, सहन के साथ, चोरों पर आक्रोश से एक कोने में पेड की आड में खडा होकर पहरा देने लगा। ठीक आधी रात के समय, सुदृढ सीधे उगे तुलसी के पौधे की आड से किसी के छिपने का दृश्य देखा। तुरंत वह सावधान हो गया। गुल्मों की आड में कोई हिल रहा है। अस्पष्ट रूप से दिखाई पड रहा है। बस, उन पौधों की ओर छिपते छिपते लपके। समीप पहुँचनेवाले अनंताल्वान को वहाँ एक स्त्री और पुरुष दोनों दिखाई दिए। एक के हाथ को दूसरा पकड कर विलास में है। सुडौल शैली में आते हुए फूल तोडने के लिए तैयार हो गए। अब अपने आवेश को रोकने में असमर्थ अनंताल्वन ने 'हे! कौन हैं वहाँ!' कहते हुए भागकर उन दोनों के बीच में कूद कर अपने खांक में उन के हाथों को खींच कर रख लिया। उन

दोनों ने अपने हाथों को अनंताल्वान से छुडाने की कोशिश की। दोनों ने संघर्ष किया। अंधेरे में वे दो और अनंताल्वान सिर्फ एक है। अकेले! क्या कर पायेगा! बेचारे, फिर भी अपने प्रयत्न को नहीं छोडा। लेकिन इस आपा-दापी और खींचतानी में पुरुष अपने को छुडाकर भाग गया। अंधे से काना भला की तरह पकडी हुई स्त्री को और मजबूती से पकडकर एक चंपक वृक्ष से अनंताल्वान ने बांध दिया। फिर पूछा कि तुम कौन हो? लेकिन ठीक जवाब न देकर स्वयं डरती हुई अनंताल्वान से कहा -

''बापू! तुम्हारी पुत्री जैसी हूँ। मझे छोड दो! मैं अपना रास्ता नापूँगी। इस उपवन में बुला लाकर बरबाद किया मेरे पति ने। वह एक चोर है। किसी की पकड में नहीं आता है। कृपा करके मुझे छोड दो। आगे मैं कभी भी तुम्हारे उपवान में आऊँगी ही नहीं। उपवन को बरबाद भी नहीं करेंगे। बापू! दया करके मुझे छोड दो।''- यह माता की पुत्र से प्रार्थना थी।

लेकिन अनंताल्वान ने उस की प्रार्थना को अनसुना कर दिया। उसे बिना खोले उपवन से बाहर आ गया। बाहर ढूँढनेवाले उस पुरुष के पीछे पडा। वह पुरुष भी अनंताल्वान को देखकर दौडने लगा। मंदिर की परिक्रमा के मार्ग में अपपरिक्रमा की दिशा में दैडने लगा। फिर भी अनंताल्वान ने उसे नहीं छोडा। उस का पीछा करने लगा। वह चोर मंदिर की अपपरिक्रमा दिशा में भागते हुए आखिर अनंताल्वान के उपवान के पास अदृश्य हो गया। अनंताल्वान चोर की खोज करते करते थककर, सोचा कि ''उस की पत्नी मेरे ही पास है न! उसे उपवन में बांध दिया है न! उस के लिए आये बिना रह पायेगा क्या!'', सोचते हुए वह उपवन

के पास लौट आया। उस चोर की पत्नी को जिस पेड से बंधा था उसी के पास वह सो गया। शीघ्र ही अनंताल्वान को नींद आ गयी।

प्रातःकाल हो गया। मंदिर के अर्चकों ने स्वामी के सोने के द्वार खोलकर सुप्रभात गाया। उन लोगों ने स्वामी श्रीनिवास के दिव्य मंगल रूप को ऊपर से नीचे तक, निरीक्षण करते हुए श्रीस्वामी के वक्षःस्थल पर की सोने की प्रतिमा रूप में रहनेवाली वक्षःस्थल महालक्ष्मी को न पाकर तनावग्रस्त हो गए। विकल मन से तनावग्रस्त अर्चकों को देखते हुए श्रीवेंकटेश्वर स्वामी ने कहा -

''हे अर्चक श्रेष्ठ! मेरे वक्षःस्थल पर की अलमेलुमंगा को लेकर आप चिंता मत कीजिए। वह अब एक मानव स्त्री के रूप में अनंताल्वान के उपवन में चंपक पेड से बांध दी गयी है। आप मंगल वाद्यों के साथ अनंताल्वान के उपवन पर जाकर, उसे ससम्मान फूलों की टोकरी में बिठाकर, दुल्हिन के रूप में बुलाकर लाने के लिए, अनंताल्वान को मेरी आज्ञा बताइए। व्यूह लक्ष्मी के साक्षात पिता के रूप में स्वयं लाकर मुझे वह सौंपेगा।'' भगवान ने आदेश दिया। तुरंत स्वामी के अर्चक छत्र, चामर, मंगल वाद्यों के साथ उपवन पर जाकर श्रीस्वामी की आज्ञा अनंताल्वान को बतायी - ''हे अनंताल्वान! तुम बहुत बडे भाग्यवान हो। साक्षात श्रीनिवास की यह आज्ञा है!'' कह कर अर्चकों ने माई को तथा अनंताल्वान को साष्टांग नमन किया।

तुरंत अनंताल्वान ने पेड से बांधी माई को नमस्कार कर - ''माई! जगन्माता! मैं ने अक्षम्य अपराध किया।'' कहते हुए उन्हें एक फूलों की टोकरी में रखकर, शोभा यात्रा में मंदिर जाकर स्वामी को समर्पित किया।

फूलों की टोकरी में दुल्हिन के रूप में बैठी अलमेलुमंगम्मा मंदिर के अंदर जाने के बाद फूलों की टोकरी से अदृश्य होकर श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर विराजित हो गयीं। तुरंत श्रीनिवास ने ''ससुर जी! अनंतार्या! तुम्हारी पुत्री व्यूहलक्ष्मी श्रीमहालक्ष्मी को मुझे समर्पित करनेवाले कन्यदाता तुम हो। तुम मुझे कन्यादान कर ससुरजी बन गये हो। यह गाथा आचंद्रतारर्क रहेगी।'' कहते हुए बडा वरदान दिया।

फूलों के उपवन में माई को फूलों के पेड से बांधने की दिव्य गाथा के प्रमाण के रूप में आज भी तिरुमल में श्रीस्वामी के ब्रह्मोत्सव के बाद, ध्वजावरोहण के अगले दिन अपपरिक्रमा दिशा में शोभा यात्रा अनंताल्वान के उपवन के लिए निकलती है। इस प्रकार श्रीस्वामी उस दिन की दिव्य घटना का स्मरण दिलाते हैं।

श्रीनिवास के वक्षःस्थल महालक्ष्मी को स्वयं चंपक पेड से बांधकर, उस दिव्य दंपति से संपूर्ण अनुग्रह प्राप्त करनेवाले भाग्यवान धन्यजीवी अनंताल्वान ही है। ये साक्षात भगवद्रामानुज के शिष्य है। गुरुजी की आज्ञा से पुष्पप्रिय श्रीनिवास के पुष्प कैंकर्य में आजन्मांत भाग लेनेवाले चिरस्मरणीय भक्त शिरोमणी है अनंताल्वान। आज भी इन के वंशज श्रीस्वामी के पुष्प कैंकर्य में भाग लेते हुए अपने जीवन को धन्य बना रहे हैं।

तिरुमल क्षेत्र में अनंताल्वान के द्वारा लगाये उपवन का, श्रीलक्ष्मी श्रीनिवास के विहार स्थल मानेजानेवाले उपवन का श्रीस्वामी के मंदिर की नैरुति दिशा में भक्त आज भी दर्शन कर सकते हैं। उसी उपवन में आज अनंताल्वार के समाधिस्त बृंदावन का भी भक्त दर्शन कर सकते हैं।

गुरुजी भगवद्रामानुज जी से शिष्य अनंतार्य ३६ साल छोटा है। सन १०५३ में जन्म लेनेवाले अनंताल्वान लगभग ८४ वर्ष जीकर, जीवन भर तिरुमलेश के पुष्प कैंकर्य में भाग लेनेवाला महामनीषी है। एक आडि मास (कर्काटक महीना) पूर्व फाल्गुनी (पुब्ब) नक्षत्र में ''तिरुवाडि पूरम'' के दिन अनंताल्वान ने परमपद प्राप्त किया। उस के परमपद हुए दिन को यानी तिरुवाडि पूरम दिन को श्रीनिवास अपनी उभय देवेरियों के साथ अनंतात्वान उपवन में आकर, उस की समाधि को फूलों की माला और शठारी से सत्कार करते हैं। यह उत्सव आज भी मनाया जाता है। भगवान भी अपने भक्त की सेवा का स्मरण करते समर्पित होते हैं, इस का जीवंत उदाहरण यह गाथा है।

((((()))))

ताळ्ळपाक वंशजों पर अनुग्रह बरसानेवाली माता अलमेलुमंगा

साक्षात श्रीवेंकटेश्वर स्वामी जी के पवित्र आयुध नंदक (तलवार) के अंश से अवतरित महनीय भक्त कवि है ताळ्ळपाक अन्नमय्या। माना जाता है कि अन्नमय्या को वेंकटेश्वर स्वामी दर्शन देते थे। आनंद निलय के स्वामी और अन्नमय्या के बीच में सिर्फ बातें ही नहीं बल्कि रस भरे संवाद भी होते थे। असल में अन्नमय्या के द्वारा माँगे गए सभी वरों को स्वामी देते थे! इसलिए उनके वंशजों को तीन पीढियों तक के सभी से स्वामी प्रत्यक्ष दर्शन देकर बातें करते थे। तदुपरांत सात पीढियों तक के सभी को मोक्ष प्रदान किया है। उस के बाद उनके वंशज सभी को शाश्वत रूप से श्रीनिवास के मंदिर में सेवा का भाग्य प्रदान करवाराया है ताळ्ळपाक अन्नमाचार्य ने।

'अप्पनि वर प्रसादि अन्नमय्या' के रूप में, 'वरलब्धुडन्नमाचार्युड' के रूप में प्रशंसित ताळ्ळपाक अन्नमार्य के चरित का और उन के वंशजों के वृत्तांतों का निशित अनुशीलन करने से, कदम कदम पर, अद्भुत घटनाएँ दिखाई देती हैं। कण कण में आश्चर्यकारी एवं आसक्ति पूर्ण प्रसंग दर्शन देते हैं।

उधर आनंद निलय के स्वामी के अनुग्रह के साथ साथ, उस स्वामी की पटराणी अलमेलुमंगा की अपार एवं अनंत दया को भी ताळ्ळपाक वंशजों ने प्राप्त किया। ऐसे स्पष्ट आधार प्राप्त होते हैं। इसलिए ताळ्ळपाक कविगण सभी ने आनंदनिलय के स्वामी के साथ अलमेलु मंगम्मा को भी अपनी पदकविताओं में, रचनाओं में कीर्तन किया है। स्तुति कर अपने को धन्य बनाया है। तद्वारा तेलुगु प्रजा को भी धन्य बनाया। धन्य बना भी रहे हैं।

ताल्लपाक अन्नमाचार्य से लेकर उन के सभी वंशजों के चरित दैवी घटनाओं से भरे हुए हैं। फिर भी अत्यंत प्रमुख दो प्रसंगों में तो यह अत्यंत स्पष्ट रूप से झलकता है। उन दोनों प्रसंगों में साक्षात अलमेलु मंगम्मा ने दर्शन देकर संपूर्ण रूप से अनुग्रह किया।

उन में यह पहला है।

अन्नमय्या के बचपन में, लगभग आठ साल की उम्र में, पहलीबार तिरुमल पहाड पर चढते समय 'मोकाल्ल मिट्ट' (शेषाचल पहाडोंके रास्ते में एक स्थान का नाम, जहाँ पर घुटनों को पकडकर यात्री ऊँची सीढियाँ चढते हैं) के पास थककर बेहोश होते हैं। उस समय साक्षात श्रीनिवास के वक्षःस्थल वासिनी अलमेलुमंगा ने पहाड से उतराकर अन्नमय्या की थकान को दूर कर आशीर्वाद दिया है।

दूसरा प्रसंग,अन्नमय्या के पोते के संदर्भ में घटित यथार्थ है।

अन्नमय्या का पोता चिन तिरुवेंगलनाथ, (इनका चिन्नन्न दूसरा नाम है) से संबन्धित है। ये कई काव्यों के महाकवि और पंडित भी हैं। चिन्नन्न पद्माशाली कारीगरों के कुलगुरु भी हैं। तिरुचानूर की अर्चामूर्ति के रूप में आरधित अलमेलुमंगा ने एक प्रसंग में चिन्नन्न की आज्ञा के अनुसार प्रत्यक्ष होकर दर्शन के साथ गवाही दी है।

इस तरह ताल्लपाक वंशजों के जीवन काल में, प्रथमतः अन्नमय्या का बचपन में, तिरुमल पर्वत के शिखरों के बीच व्यूहलक्ष्मी का अनुग्रह पाना और, तिरुचानूर के मंदिर में अन्नमय्या का पोता चिन्नन्न के विषय में अर्चामूर्ति अलमेलु मंगम्म प्रत्यक्ष हो गवाही देना मात्र दो उदाहरण हैं।

((((()))))

अलमेलुमंगा का अनुग्रह

वह एक छोटा गाँव है। उस गाँव की चारों तरफ हरेभरे धान के खेत हैं। उन खेतों में एक तरफ गीत गुनगुनाते दूसरी तरफ धान के खेतों में मेंथ निकालते कार्य में रत लोग। उस गाँव से थोडी ही दूरी पर एक ताड का वन और एक नारियल वन है। ऊँचे उन ताड के पेडों एवं नारियल के पेडों को प्रतिबिंबित करते आइने के समान चमकनेवाला बडा तालाब है।

वह तालाब सिर्फ खेतों को ही पानी नहीं देता बल्कि अनेक अन्य उपयोग भी हैं। ब्राह्मण स्त्रियों के लिए स्नान कर कपडों को धोने, बच्चों को तैरने के लिए, किसानों को अपने ढोरों को साफ करने के लिए, धोबी लोगों को कपडे साफ करने के लिए, मछवारों को मछलियाँ पकडने के लिए - - - इस तरह कई रूपों में उपयोग में आ रहा है उस गाँव का तालाब।

उस गाँव में शायद सत्तर, अस्सी कुटीर होंगे। ताडी के पत्तों से ढकी झोंपडियाँ ऋष्याश्रम लगती हैं। पूरा गाँव मुनि वाटिका सा प्रशांत दर्शन देता है। इसलिए उस गाँव को लोग 'ताल्लपाक' सार्थक नाम से पुकारते हैं।

उस गाँव की रक्षा करनेवाले भवनों के रूप में एक ओर आखिर में एक मंदिर और दूसरी ओर अंत में एक मंदिर हैं। इन में पहला जनमेजय महाराज के द्वारा प्रतिष्ठित चेन्नकेशव स्वामी मंदिर है। दूसरा प्रमथ गणों के साथ उतरे कैलास सा लगनेवाला श्रीसिद्धेश्वर मंदिर है। ये

दोनों मंदिर अति प्राचीन है। फिर भी वहाँ काफी महिमा और प्रशांतता दिखाई देती है। उन में चेन्नकेशव स्वामी के मंदिर की दीवारों और गोपुर को समीप से देखने पर वह मंदिर और प्राचीन लगता है। उस प्राचीन मंदिर के अंदर दो कदम शिला पीठ पर भगवान चेन्नकेशव स्वामी की मूर्ति है। वह भगवान जब भी देखो, जिस समय भी देखो चमकते, नित्यनूतन, सुंदर और नये लगते हैं। सिर्फ दिखाई देना ही नहीं अपने पास आनेवाले भक्तों को अपने गोल गोल नेत्रों से अच्छी तरह देखते रहते हैं। सब से बात करने की मुद्रा में मंद मुस्कुराते रहते हैं। बगल में तेल के दीप के प्रकाश में चेन्नकेशव की काली मूर्ति नयी नयी कांतियाँ विकीर्ण करती रहती है। भक्तों को अद्भुत लोकों में ले जाती हैं। अव्यक्त दिव्यानुभूतियों सें भक्तों को सुमधुर लोकों में ले जाती हैं।

एक दिन ठीक दोपहर का समय। उस प्रशांत समय पर चेन्नकेशव स्वामी के मंदिर के आंगन में दूसरा कोई हलचल नहीं था। इतने में आठ साल का एक छोटा बच्चा उस मंदिर के द्वार खोल कर अंदर आया। वह बच्चा काला होने पर भी सुंदर ही लग रहा था। ललाट पर खडी रेखाओं में तिरुनाम धारण किया हुआ है। सर के बीचों बीच बांधी गयी छोटी सी चोटी! कमर से घुटनों तक रेशमी लाल कौपीन! लाल धोती पर कमर में बांधा अंग वस्त्र! बाए कंधे के ऊपर से दाए हाथ के नीचे की ओर वक्ष पर लटकनेवाली जनेऊ। बाएँ हाथ में सावधानी से छाती पर दबाकर रखा तांबे का थाल। उस थाल में फलों के साथ साथ पकवान भी थे। अब दाएँ हाथ में पानी से भरा तांबे का लोटा था। इस रूप में बच्चा मंदिर के अंदर आया था।

वह बालक गुनगुनाते गा रहा था

चिन्न चेंबु तो नील्लु सीकाय युदकंबु
अल्लंबु बेल्लंबु अरटि पंडु
तेनेतो मागिन तिय्य मामिडिपंडु
बंगारु पिडिकिल्लु पनसतोनलु
सोगसिन यौगुलु सोज्ञेलु कज्ञलु
चक्केर मंडगलुक्केराल्लु
अर्सेलु सिम्मिलु दोसेलु कल्लोसुलु
पालकुलेलकुल - - - पालपोंगु।

उस बालक द्वारा गुनगुनानेवाला राग अत्यंत श्रुति श्राव्य था। मंद स्वर में गाने पर भी, वह पुराना गीत मंदिर के आंगन में प्रतिध्वनित हो रहा था। सुनने के लिए अतिमधुर लग रहा था। इससे उस बालक की कंठश्राव्यता और बढ रही थी।

गाना पूरा करने के बाद वह बालक मंदिर के चेन्नकेशव स्वामी से कुछ बात करता बडबडाने लगा था।

''हे भाई! लाडले चेन्नकेशव! आज मेरे पिताजी गाँव गए हुए हैं। मेरे पिताजी के गाँव जाने पर आप को कौन खाना खिलायेगा। अगर तुझे कोई नहीं खिलायेगा तो तुझे भूख लगेगी न! इसलिए मेरी माँ ने मुझे भेजा है। मैं आ गया हूँ। लो मैं नैवेद्य लाया हूँ। माँ के कहने के अनुसर बुद्धिमान हो सुनो। रोजाना की तरह आज भी अच्छे ढंग से स्नान करके खाना खालो। उठो! पहले स्नान करो!'' कहते हुए पीठ पर स्थित चेन्नकेशव स्वामी को पानी से अभिषेक करने अपने छोटे छोटे हाथों को

बढाया। लेकिन छोटे कद के उस बालक के लिए वह मूर्ति ऊँचे स्थान पर रहने के कारण ऊपर तक नहीं पहूँच पाया।

''हे चेन्नकेशव! मैं तो छोटा बालक हूँ न! तुम तो इतने ऊँचे स्थान पर हो! मैं पहुँच नहीं पा रहा हूँ! कैसे मैं तुम्हें नहलाऊँगा। क्या मैं एक उपाय बताऊँ! तुम थोडा सर झुककर खडे हो जाओ। तब मैं तुझे शीकाकाय से रगड रगड कर स्नान कराऊँगा। ठीक है न! थोडा झुक जाओ अब!'' उस लाडले बालक की बातों से उस चेन्नकेशव ने मुस्कुराया। उस बालक के कहने के अनुसार थोडा झुक कर सर दिया। बस! वह छोटा बालक स्वामी को अच्छे ढंग से स्नान करवाकर, त्रिपुंड लगाया। अनंतर माँ के द्वारा भेजे गए सभी फल और पकवान एक एक करके चेन्नकेशव को खिलाने लगा।

''स्वामी! चेन्न केशव! ये मीठी रोटियाँ हैं! - - - यह पुलिहोरा धीरे धीरे खाओ! खाओ स्वामी! धीरे धीरे खाओ स्वामी! ये अप्पं हैं, यह पायस है धीरे धीरे खाओं स्वामी!'' कहते हुए माँ के द्वारा भेजे गए सभी पकवानों को चेन्नकेशव स्वामी को खिलाया उस बालक ने। सारे पकवानों को चेन्नकेशव ने बडे चाव से खाकर स्वाहा किया। खाली थाल से घर लौटनेवाले बेटे को देखकर लक्कमांबा को गुस्सा आया।

''क्यों रे अन्नमय्या! मंदिर से खाली थाल के साथ घर लौटने का क्रम यह तीसरा है। तुम्हारे पिताजी गाँव में नहीं है। तुम्हारे भाई लोगों को एक क्षण की भी फुरसत नहीं है। खेत के कामों में वे व्यस्त हैं। तुझे मंदिर भेजने से तुम इस प्रकार व्यवहार कर रहे हो! भगवान के लिए भेजा गया पूरे नैवेद्य तुम अकेले खाकर खाली थाल ला रहे हो। ऊपर

से झूठ बोल रहे हो! तुम्हारा व्यवहार बहुत विचित्र लग रहा है। तुम ने एक एक को स्वामी के आगे बढाया। बेचारे चेन्नकेशव ने एक एक करके सर हिलाते निगला! तुम को झूठ बोलते शर्म नहीं आती। हे री अन्नमय्या! तुम्हारी बात बहुत विचित्र लग रही है। झूठ बोलने पर ऐसा बोलना चाहिए मानो वह सच है।'' कहती माँ लक्कमांबा ने अन्नमय्या को डाँटा।

इतने में दूसरे गाँव गए अन्नमय्या के पिताजी घर लौट आये। पूरे कांड को सुना। छोटा बच्चा है। बचपने में ऐसा किया होगा। सच बताओ रे अन्नमय्या! पूरा प्रसाद तुम ने ही खाया है न!

''नहीं पिताजी! सच, मैं ने नहीं खाया। चेन्नकेशव स्वामी ने ही पूरा खाया।'' बस! यह सुनकर नारायण सूरी को गुस्सा आया। तिरुमलप्पा के वर प्रसाद से तुम पैदा हो गए हो! परब्रह्म स्वरूप समझे जानेवाले अन्न का नाम तुझे रखा है। ऐसे तम झूठ बोल रहे हो कि चेन्न केशव स्वामी ने सब कुछ खा लिया! आगे इस जन्म में कभी भी झूठ नहीं बोलूँगा, ऐसा तुम वचन दो!'' कहते हुए नारायण सूरी ने अपने हाथ की लाठी से अन्नमय्या पर चार मार लगायी।

''नहीं पिताजी! मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ!'' कहते हुए अन्नमय्या अपने दोनों हाथों को सरपर रखकर प्रमाण किया।

''पिताजी! सब छोटे चेन्नकेशव ने ही खाया। यह सच है पिताजी। मैं सच ही बोल रहा हूँ। लेकिन कोई मेरी बात पर विश्वास नहीं कर रहा है। तुम्हारे विश्वास नहीं करने पर क्या सच झूठ हो जाएगा! आप मुझे कितने भी पीटिए। डाँटिए। सच ही उस स्वामी ने सब कुछ खाया है।''

''कोई काम धंधा नहीं है। ऊपर से इस रूप में झूठ बोलकर मनाने की कोशिश करता है। दिन दहाडे झूठ बोलना। गुनगुनाते पागल जेसे गीत गाते पुराने मंदिरों का चक्कर काटना, बैरागियों की तरह समय काटना'' छोटी भाभी ने भी ताना मारा।

''उन पशुओं की ओर देखो। घास खाती हैं। गाढा दूध देती हैं। दिन भर देह चुराये बगैर काम करते हैं। तुम हो न। हमारी जान खा रहे हो। कोई काम धंधा नहीं करते हो। शनि के रूप में बेकार का खाना खा रहे हो। उस पुराने दंडे को पकडकर फिजूल गीत गाते आवारा घूमते हो।'' कह कर एक और भाई ने निंदा की।

''ठीक है! कम से कम आगे ठीक से जीओ! इन पशुओं को सुबह से घास नहीं मिली है। खेत में जाकर मेड के ऊपर की घास को काट कर लाओ रे! बेकार के गीत गाते गुनगुनाओं मत! समझे! यह लो दरांती पकडो! शीघ्र ही घास काट कर लाओ! समझ गए!'' कहते हुए एक और भाभी ने आदेश दिया।

सब की बातें अन्नमय्या को शूलों के रूप में लगीं। रोते हुए बताने पर भी किसी ने उस की बातों पर विश्वास नहीं किया। अपने दुख को सहते हुए निराशा से अन्नमय्या हाथ में दरांती लेकर खेत की तरफ निकला।

''स्वामी! हे सात पहाडों के देव! मैं क्या करूँ! चेन्नकेशव स्वामी ने प्रसाद खाया है, जितनी बार बताने पर भी कोई भी विश्वास नहीं कर रहा है। फिर मेरा गुनगनाना! अनजान में ही मेरे मुहँ से निकलनेवाले रागों को सुनकर मुझे भी आश्चर्य हो रहा है। मुझे आनंद भी हो रहा है। अनायास ही मैं उछलकूद कर रहा हूँ! लेकिन पराये लोग ''अन्नमय्या! तुम्हारे गीत परम गीत हैं। तुम्हारे मुँह से निकलनेवाला हर वाक्य एक अमृत काव्य है।'' कहते हैं और मेरी तरफ आनंद से देखते हुए मेरी प्रशंसा कर रहे हैं। लेकिन मेरे अपने लोग मेरी निंदा कर रहे हैं। गालियाँ देना ही नहीं कभी कभी पीट भी रहे हैं।'' - अन्नमय्या ने सात पहाड देव वेंकटेश्वर से निवेदन किया। अपनी अनजान बाधा में बडबडाते खेत पहुँच गया।

असावधान होकर घास काटने लगा। माँ, पिता, भाई, भाभी की बातें याद आयीं। मन में पीडा होने लगी। उस पीडा में भी लाडले चेन्नकेशव अपनी बात मान कर सब कुछ खा जाने के दृश्य याद आने पर एक प्रकार की संतुष्टि उसे हुई। अन्नमय्या को अच्छा लगने लगा। इन विचारों के बीच, असावधानी से झुककर घास काटनेवाला अन्नमय्या कुछ देर बाद उठ खडा हो गया।

काटी गयी घास की ओर देखा। लगा कि वह पर्याप्त नहीं। ''इतना कम लाये हो! घरवाले गुस्सा भी कर सकते हैं। इसलिए थोडी घास और काटूँगा।'' सोचते हुए फिर से अन्यमनस्क होकर अन्नमय्या ने घास काटना शुरु किया।

घास काटते काटते अन्नमय्या ने अपने बाए हाथ की उँगली को काट लिया। उँगली के कटने पर अन्नमय्या रो पडा। कटनेवाली उँगली से खून का बहना शुरु हो गया। दाएँ हाथ की दरांती पता नहीं कब गिर गयी। ''आह! माई खून, खून। माई उँगली कट गयी।'' चीखते हुए अन्नमय्या रो पडा। इस के जिम्मेदार अपने रिश्तेदारों की अन्नमय्या ने गुस्से में निंदा की। ये सब मेरे रिश्तेदार हैं क्या! मैं उन का कैसे रिश्तेदार

हूँ? कब से इन के साथ मेरी रिश्तेदारी शुरु हुई है? अच्छे रिश्तेदार क्या इस प्रकार के कष्ट देते हैं क्या? सत्य और नित्य रिश्तेदार सिर्फ वे सप्तगिरीश श्रीनिवास ही हैं। इस प्रकार चिंता करते समय आशु के रूप में अन्नमय्या के मुँह से एक गीत निकला -

तग बंधुला तनकु, दल्लुलुनु दंड्डुलुनु
वगल बेट्टुचु तिरुगुवारे काक
मिगुल वीरल पोंदु मेलनुचु हरि नात्म
दगिलिंचलेक चिंतापरुडनैति।

अंतहितुला तनकु अन्नलुनु दम्मुलुनु
वंतुवासिकि। बेनगुवारे काक
अंतरात्मुडु वेंकटाद्रीशु गोलुव किटु
संतकूटमुल यलजडिकि लोनैति।

गीत गाते हुए खेत में खडे होकर, दूर से दिखाई पडनेवाले अपने गाँव ताल्लपाक की ओर निर्लिप्तता से, बाधा से देखते हुए ''स्वामी! वेंकटरमणा! क्या ये मेरे रिश्तेदार हैं! इन के साथ मेरा संबंध मिथ्या है! असल में आत्मबंधु स्वामी तुम ही हो! तुम्हारी पूजा करना भूल जाने के कारण ही मुझे यह हलचल और अशांति मिली। हे पहाडों के स्वामी! मेरी आर्ति को दूर करो। मेरे परिताप को दूर करो! तुम्हारे समीप आने के लिए मार्ग दिखाओ स्वामी!'' अन्नमय्या ने आवेश में झूमते हुए स्वामी की बडी आवाज में प्रार्थना की।

वेंकटेश्वर अत्यंत करुणवान हैं। भक्त प्रिय भी हैं। भक्तों को बाधा होने पर क्या वे सहन कर पायेंगे। थोडा भी सहन नहीं कर पायेंगे। उस

में भी आर्ति से पुकारने से क्या एक क्षण के लिए रुक सकते हैं? अन्नमय्या की आर्ति को सुनकर आनंदनिलय के स्वामी ने, अन्नमय्या को शाश्वत आनंद प्राप्त कराने के लिए सप्तगिरियों के मार्ग में चलाने का संकल्प किया। बस!

इतने में दूर पर कोलहल के साथ भजन करते हुए, भजन के अनुकूल उछलते, बडी आवाज में गोविंद नाम का स्मरण करते हुए आनेवाला भक्तवृंद अन्नमय्या को दिखाई पडा।

गोविंदा! एडुकोंडलवाडा!
वेंकटरमणा! गोविंदा!
अपद्बांधवा गोविंदा!
अडगडुगु दंडालवाडा गोविंदा!

इस भजन मंडली मंडली की तरफ अन्नमय्या ने आसक्ति से देखा। इतने में वह भक्त वृंद अन्नमय्या के समीप आ ही गया। सनक, सनंदन, सनतकुमार, सनत्सुजातादि महामुनिगण वेश बदल कर विचित्र वेशों में वेंकटेश के नाम का स्मरण करते हुए आ रहे हैं, ऐसा अन्नमय्या को लगा। वे भक्त सब एक जैसे नहीं हैं। कुछ लोग ताल बजा रहे हैं। कुछ मृदंग बजा रहे थे, कुछ और जलनेवाली ज्योति के गरुड गंभाल को पकड कर भक्ति से गोविंद नाम गा रहे हैं। कुछ लोग ऊपर से नीचे तक पीले वस्त्र पहने हुए हैं। उन में कुछ साधु लोग तो काषाय वस्त्र धारण किए हुए हैं। कुछ और पैरों में घुंघुरु बाँधकर लयबद्ध नृत्य कर रहे हैं। सब के ललाटों पर सफेद तिरुनाम, त्रिपुंड्र, विराजमान है। कुछ और लोग अपने हाथों से करतल ध्वनि करते हुए गीत गा रहे हैं। कुछ और

लोग बडी आवाज में गीत गाते हुए नाच रहे हैं। उन में कुछ ही लोग अपने सर पर गठरियाँ ढोते उन के साथ चल रहे हैं। सब अलग अलग रहने के बावजूद सब परवश हो, गीत गाते, नाचते गोविंद नाम का उद्घोष करते हुए उत्साह के साथ आगे बढ रहे थे।

अपने हाथ की चोट को अनायास ही भूल गये। अन्नमय्या के उन भक्तों को देखते समय, उन सब ने भी बालक अन्नमय्या की तरफ देखकर मंद मुस्कान की। उन की दृष्टि में अन्नमय्या को एक अव्यक्त करुणा और प्रेम दिखाई दिया। उन की मंद मुस्कान में अनंत आध्यात्मिक भाव दिखाई दिये।

अन्नमय्या ने भक्ति और विनय के साथ उन सब को साष्टांग नमस्कार किया और कहा ''स्वामीजी! आप सब कौन हैं? कहाँ जा रहे हैं?''

''हे वत्स! हे बालक! हम सब भजन करते हुए सात पहाडों के देव की सन्निधि में दर्शन के लिए जा रहे हैं। सप्तिगिरियों के मार्ग में चलनेवाले का जीवन धन्य होता है! सिर्फ इस एक जीवन का ही नहीं, पूर्व जन्मों का भी उद्धार होगा! इसलिए देव संकल्प से हम सब सत्य, शाश्वत, आनंदमय रास्ते में कदम कदम पर स्वामी का स्मरण करते हुए उन के दर्शन के लिए जा रहे हैं। यह तो ठीक है! तुम कौन हो पुत्र? तुम्हारे हाथ पर खून बहनेवाला यह घाव क्या है? कैसे लगा है? मत रो। पास आओ।'' कहते हुए भक्त वृंद के एक दादा ने अन्नमय्या के हाथ को अपने हाथ में लेकर 'तुम्हारी चोट भर जाएगी' कहते हुए प्रेम से स्पर्श किया।

''स्वामी! मुझे अन्नमय्या कहते हैं। सात पहाडों के देव को लेकर गीत अनायास ही मेरे मुह से निकलते हैं। आशु के रूप में गाते खेलते मुझे देखकर मेरे कुछ रिश्तेदार मेरी निंदा कर रहे हैं। भाईयों ने गुस्सा किया। भाभियों ने डाँटा। पागल की तरह, याततताई के रूप में, आवारा घूम रहा हूँ, समझ कर देखिए इस दरांती को हाथ में दे कर घास काटने के लिए भेजा है। असावधान होकर घास काटते समय मेरी उंगली कट गयी। इसलिए खून बह रहा है स्वामी!'' कहते हुए अन्नमय्या अपने हाथ को देखकर आश्चर्य में पड गया।

अन्नमय्या के हाथ से बहनेवाला खून रुक गया था। साथ ही उसी क्षण में अत्यंत विचित्र ढंग से चोट भी अदृश्य हो गयी। अन्नमय्या अपने हाथ को घुमा फिराकर देखते हुए आनंदित हुए। आप सामान्य नहीं हैं। साक्षात महनीय ऋषिगण हैं, कहते हुए अन्नमय्या ने फिर से एक बार उन्हें प्रणाम किये।

''तुम्हारा नाम अन्नमय्या है न! बहुत अच्छा नाम है। 'अन्नम् परब्रह्मम' है और तुम साक्षात परब्रह्म स्वरूप हो! तुम आनंद निलय स्वामी के वर प्रसाद से पैदा हुए। कारण जन्म हो। तुम्हारा सही स्थान यह गाँव नहीं है। यह प्रदेश बिलकुल नहीं है। वेंकटाचल क्षेत्र ही तुम्हारा असली लक्ष्य है। हम सब वहीं जा रहे हैं। तुम भी हमारा अनुसरण करते हुए हमारे साथ शेषाद्रीश के दिव्य पाद पद्म सन्निधि में पहुँचो। तुम्हारे विचार के अनुसार तुम्हारे रिश्तेदार तुम्हारे हित को नहीं चाहनेवाले हैं। वे सिर्फ स्वार्थ से भरे देह संबंध ही हैं। तुम्हारे लिए आप्त, आत्मीय, अपन्नबंधु और मित्र सब सिर्फ आनंदनिलय स्वामी हैं। यही अच्छा

अवसर भी है! अब देर न करके हमारे साथ चलकर सात पहाडों के वेंकटाचल क्षेत्र पहुँच जाओ।'' कहते हुए फिर से भजन में लीन हो वे आगे बढे।

''ठीक है!'' के संकेत में सर हिलाते एक बडी निसांस छोडकर अन्नमय्या ने भी गोविंदा! गोविंदा! गोविंदा! नाम स्मरण के साथ उन का अनुसरण किया। भजन वृंद के सदस्य सभी गीत गाते तिरुमल पहाड की तरफ बढे -

वेडुकुंदामा वेंकटगिरि वैंकटेश्वरुनि ।।पल्लवि।।

आमटि मोक्कुलवाडे आदि देवुडे वाडु
तोमनि पल्यालवाडे दुरित धूरुडे ।।वेडु।।

वड्डि कासुलवाडे वनजनाभुडे, पुट्टु
गोड्डुरांड्रकु बिड्डुल निच्चे गोविंदुडे ।।वेडु।।

एलमिगोरिन वरालिच्चे देवुडे वाडु
अलमेल्मंगा श्री वेंकटाद्रिनाधुडे ।।वेडु।।

बालक अन्नमय्या भी उन के साथ चलते सब के साथ गाते आखिर तिरुपति पहुँच गया। उस वृंद के सब से वयोवृद्ध 'नामाल दादा' ने (तिरुनाम धारणकरनेवाला दादा) अन्नमय्या के कंधे पर हाथ रख कर प्रेम से संवारते हुए कहा -

''पुत्र! अन्नमय्या! इस गाँव का नाम श्रीपदपुरि है। वह देखो! इस गाँव का बडा गोपुर दिखाई पड रहा है! देख रहे हो न! वही श्री

गोविंदराज स्वामी जी का मंदिर है। उस भगवान के नाम से इस गाँव को 'गोविंदराज पट्णम' कहते हैं। भक्त यह कहते हैं कि गोविंदराज स्वामी वेंकटेश्वर स्वामीजी के बडे भाई हैं। देव देव श्रीनिवास के चरणों के पास रहने के कारण इसे 'श्रीपदपुरि' कहते हैं।

यह देखो! यह गंगम्मा का मंदिर है। इस गाँव की सीमा पर रहकर गाँव की रक्षा करनेवाली माता गंगम्मा माई! इस माई की पूजा करने के बाद ही गाँव में प्रवेश करना चाहिए! जानते हो! अन्नमय्या! गंगम्मा माई को अच्छी तरह नमस्कार करो! भक्तों पर कृपा बरसानेवाली माई गंगम्मा की दया से हमारी यात्रा बिना किसी संकट के आगे बढेगी। सुन रहे हो न अन्नमय्या!'' उस वृंद के दादा के आदेश पर वृंद के सभी भक्तों ने गंगम्मा की पूजा की। दूर से गोविंदराज स्वामी मंदिर के गोपुर को हाथ जोड नमन किया।

''यह देखो! सभी इस दिशा की ओर देखिए। ऊँची पत्थर की चट्टानें दिखाई पड रही हैं न! देखिए कोई बडा साँप अपने सहस्रों फणों से वक्र कुंडल डालकर मानो सो गया है, ऐसे हैं ये पत्थर के पहाड़। वे ही हैं सात पहाड! उन पहाडों पर लोगों को जो जितने चाहे उतने वर प्रदान करनेवाले स्वामी वेंकटेश्वर विराजमान हैं। उस पहाडों के देव के दर्शन के लिए लाखों भक्त लगातार आते रहते हैं। अब हम सब भी उस पहाड पर चढ कर आपदाओं को दूर करनेवाले स्वामी श्रीवेंकटेश्वर के दर्शन कर लेंगे। सब जल्दी जल्दी से चलिए।'' कहते हुए उस वृद्ध ने सब को प्रेरित किया। वे सब 'अलिपिरि' तक पहुँच गए।

बालक अन्नमय्या भी। उन के साथ अलिपिरि पहुँच गया। चारों तरफ बडे बडे वृक्ष, बगीचे, तालाब सब देख कर अन्नमय्या खुश हुए। अपने आप को भूल कर सोचा -

''वाह! यह गाँव कितना सुंदर है! पुष्कर, बगीचे, मंदिर, गोपुर, पहाड, घाटियाँ, झरने - - - कितने रमणीय हैं। सच कितना सौभाग्य है। इन सब से मिलना कितना बडा भाग्य है। इन से मिलकर तिरुमल पहाड पर जाना, क्या यह सच ही है! मेरी माँ लक्कमांबा भी इन तिरुमल पहाडों के बारे में अच्छी अच्छी कहानियाँ सुनायी करती थीं। मेरी माँ के कहने के अनुरूप ही ये पहाड ठीक अपने सहस्रों फणों को वर्तुल करके सोये शेष जैसे हैं। आदिशेष पहाड के रूप में अवतरित हो कर सात पहाडों के देव वेंकटरमण स्वामी को ढो रहे हैं। यही मेरी माँ ने बताया था। माँ के द्वारा बतायी इस पहाड की कहानी को ही गीत बनाकर गाने की इच्छा हो रही है।'' अन्नमय्या ने अपने हाथ के तुंबुर (एक विशेष बजा) को बजाते, नाचते गुन गुनाया -

''अदिवो अदिवो हरिवासमु
पदिवेल शेषुल पडगलमयमु''

गाते-नाचते परवशता में झूमनेवाले अन्नमय्या को प्रशंसा की दृष्टि से देखते हुए आनंद का अनुभव करते हुए वृंद के अन्य लोगों ने भी उस के स्वर में स्वर मिलाया।

वृंद के साथ अन्नमय्या पहाड पर चढते हुए पहले अलिपिरि में विराजित श्रीवेंकटेश्वर स्वामी जी के शिला-पादों का दर्शन कर - -

ब्रह्म कडिगिन पादमु
ब्रह्ममु ताने नी पादमु

गाते हुए प्रणाम किया। उस के बगल में ही स्थित श्रीलक्ष्मीनरसिंह की सेवा कर आगे बढा। तदूपरांत तलयेरु गुंडु, चिन एक्कुडु(छोटा चढाव), पेद एक्कुडु (बडा चढाव), हवाई गोपुर, मुग्गु बावि, दोव नरसिंह, कपूर कालुव (ये सभी पैदल रास्ते के प्रदेशों के नाम हैं) पहाडों, घाटियों में अजूब और विशेताओं को देखते हुए परवशता में गीत गाते अपने आप को भूल गया अन्नमय्या।

साथ में रहनेवाले वृंद के लोग अन्नमय्या की ओर ध्यान न देकर आगे बढ गए। काफी दिन चढ़ गया। सूर्य भगवान सर पर चढ आये। प्रचंड धूप जला रही है। पैर भी जलने लगे हैं। अन्नमय्या अकेला पीछे रह गया। लगता है काफी थक भी गया है। चारों तरफ उसने देखा। एक भी दिखाई नहीं पडा। अकेले ही कदम कदम आगे बढाते पैरों को खींचते चलते अन्नमय्या ने 'अव्वचारी कोन' (अव्वचारी घाटी) पार किया। सामने ऊँचा पहाड दिखाई दिया। 'वाह! कितना बडा पहाड है। सीढियाँ भी बडी और ऊँची हैं। 'मोकाल्ल मेट्ट' (घुटनों वाला पहाड, वेंकटाचल पहुँचने के पहलेवाला पहाड) शायद यही है।'' सोचकर अन्नमय्या थोडी देर उस पहाड के कोने में बैठ गया। ''भूख लग रही है। प्यास भी लग रही है। इस पहाड की कितनी सीढियाँ हैं, कितने समय में पहाड पर पहुँच जाऊँगा, समझ में नहीं आ रहा है। फिर भी चढना है! इस पहाड पर आना यही पहली बार है। जल्दी जल्दी सीढियाँ चढूँगा।'' सोचते हुए अन्नमय्या उठ खडा हो गया।

गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!! कहते हुए चलना शरु किया। दो तीन सीढियाँ चढ गया। ओह कोई मुझे नीचे ढकेल रहा है। 'मैं नीचे गिरता जा रहा हूँ। कोई मुझे बचा ले! बचा ले!' चिल्लाते-चिल्लाते अन्नमय्या बेहोश होकर पहली सीढी पर आ गिरा।

इतने में एक मधुर पुकार उसे सुनाई पडी -

'हे वत्स! अन्नमय्या! उठो वत्स! उठकर बैठ जाओ!'' दो बार वह मुधर पुकार सुनाई पडी। पुकार सुनकर जागकर अन्नमय्या ने ''मैं कहाँ हूँ। मझे कोई नाम से पुकार रहा है।'' कहते हुए चारों ओर देखा।

''अरे कोई दिखाई नहीं पड रहा है! पुकार तो मेरी माँ की पुकार जैसी है। शायद यह मेरा भ्रम है! भूख प्यास से अपने गाँव से दूर रहनेवाले मुझे होनेवाला भ्रम शायद!'' अन्नमय्या अपने आप सोय रहा था। फिर मधुरवाणी सुनाई पडी -

''अन्नमय्या! उठों! इस तरफ देखो'' वह पुकार मधुरातिमधुर है। आत्मीय, आर्द्रता से भरी है। बिना किसी भेदभाव से, तन की नहीं मन की पुकार है।

''उस पुकार से पुलकावली हो रही है। मेरी माँ लक्कमांबा की पुकार जैसी लग रही है।'' कहते हुए अन्नमय्या उठा। चारों तरफ निशित दृष्टि से देखा। कुछ भी नजर नहीं आया। चारों तरफ पेड, बांबियाँ, पत्थर, चट्टानें बडी ढेर सी लग रही थीं। पुकारनेवाला केई दिखाई नहीं दे रहा हैं। लेकिन पुकार तो सुनायी पड रही है। विचित्र है ना।'' इस प्रकार सोचनेवाले अन्नमय्या को फिर से एक बार वह पुकार सुनायी पडी।

''माई! तुम कौन हो! कहाँ रहती हो माई! ठीक मेरी माँ जैसी ही पुकार रही हो। तुम्हारी पुकार सुनायी पड रही है। लेकिन तुम दिखाई नहीं दे रही हो। कृपया मुझे बचा लीजिए माई!'' कहता अन्नमय्या रोने लगा।

''अन्नमय्या! मैं तुम्हारी माँ लक्कमांबा हूँ। सब के लिए मैं जगन्माता हूँ। मैं अलमेलुमंगा हूँ। श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के वक्षस्थल पर रहती हूँ। मैं ''व्यूहलक्ष्मी'' हूँ। आनंद निलय से उस स्वामी के वक्षःस्थल से उतर कर यहाँ तुम्हारे लिए आयी हूँ। इस तरफ देखो- - ओह! तुम ने कहा था कि मैं दिखाई नहीं पड रही हूँ। मैं क्यों नहीं तुझे दिखाई दे रही हूँ। इस पहाड पर पहाडों के देव श्रीवेंकटेश्वर है न! इसलिए यह पहाड अतिपवित्र है। इस पूरे क्षेत्र में सालग्राम हैं। असल में यह पूरा पहाड एक बहुत बडा सालग्राम है। सब जगह सालग्रममय है। इस पहाड पर बसे श्री वेंकटेश्वर भी सालग्राम स्वरूप ही हैं। इस लिए इतने पवित्र पहाड पर पैरों में चप्पल पहन कर नहीं चढना चाहिए। ऐसा करना महापाप है! इसलिए तुम्हारे पैरों के चप्पलों को छोड दो। सब तुम्हारी समझ में आ जायेगा। इस बारे में बोध भी हो जाएगा। तुम्हें सब कुछ दिखाई पडेगा। मेरे दर्शन भी हो जाएँगे।'' कहती हुई अलमेलुमंगा ने अन्नमय्या का कुशलक्षेम पूछा।

तुरंत अन्नमय्या ने अपने पैरों के चप्पल निकाल कर नीचे फेंक दिया। बस! आश्चर्य! उस क्षण में वह पर्वत बडी बडी कांतियों से प्रकाशित दिखाई दिया। सामने माई अलमेलुमंगा अपने दोनों हाथ फैलाकर ''आओ! पास आओ!'' मुस्कुराती बुला रही है।

'चंद्रमा की तरह गोल गोल चेहरा। चेहरे पर लहराते घुँघुराले बाल। विशाल आँखे। सिर्फ आँखें ही नहीं। ओह! वे माई! कितना सुंदर हैं!

कितने कितने आभरण, गहने पहनी हुई हैं! गोल चेहरे पर गोल गोल आंखों के साथ ललाट पर कुंकुम की गोल बडी बिंदी! लाल सूर्य बिंब सम लग रही थी। गाल को छूते लटकनेवाला बेसर, कर्णाभरण! कमर पर कमर बंध, भुज रत्न, वज्र जडे बाहुबन्ध, गले में कंठ हार, पता नहीं कितनी मणियाँ हैं, सभी आभरण चमक रहे थे। हाथों में भरे हरे हरे कंगन। पैरों में घुंघुरु। सिंधूर रंग की साडी में वे माई सचमुच आदिलक्ष्मी ही हैं। आदिलक्ष्मी साक्षात आदिलक्ष्मी ही है।' अन्नमय्या अपलक अलमेलु मंगा को देखते हुए आनंद का अनुभव करने लगा। अपलक होकर अलमेलु मंगा के कहे अनुसार दिखनेवाले पहाड को और उस की चारों तरफ के वातारण को देखा। सच है ये चट्टानें पत्थर नहीं हैं। विष्णु सालग्रामों की ढेर हैं! इस तरफ नरसिंहों के सालग्रामों की ढेर! अरे! सालग्रामों से भरे इस पहाड पर चप्पलों से चलना महापाप है। चमडी के चप्पलों से पहाड पर चलना और भी बडा पाप है। हाय री! अनजान में मैं ने यह पाप किया। अनजान में करने पर भी पाप पाप ही होता है, कहते हैं न लोग! माई अलमेलु मंगा! मुझ पर दया कर मेरी रक्षा करो माई!'' कहते हुए माई के चरणों पर सर रखकर प्रणाम किया अन्नमय्या ने।

''अन्नमय्या! उठो! देखो इधर इस पत्थर पर ठीक से बैठो! शायद बहुत थक गए हो। शायद तुम को बडी भूख भी होगी! पता नहीं कब खाया है! देखो यह सब तुम्हारे लिए ही लाई हूँ। खाओ!'' कहती घी टपकनेवाले गरम गरम प्रसादवाले दोनों को अन्नमय्या के सामने रखा।

''यह तो पुलिहोरा है। इस को चित्रान्न (कट्टा चावल) कहते हैं। धीरे धीरे खाओ। यह मीठा चावल (चक्केर पोंगली) है। यह मीठा चावल तुम्हारे स्वामी श्री वेंकटेश्वर को बहुत प्रिय है! उस स्वामी के खाने के बाद बचा तुम्हारे लिए लायी हूँ। जल्दी मत कर। धीरे धीरे खा लो।

यह काली मिर्च की खिचडी (मिरयाल पोंगली) अधिक घी डालकर बनायी गयी है। बहुत स्वादिष्ट होगा। इसे भी श्रीनिवास चाव से खाते हैं। थोडा और खाओ!

यह गाढा दही चावल है। मलाई जम गयी है। इसी को दद्धोजनम् कहते हैं। दही-मलाईवाला यह दही चावल पेट भर खाओ। थोडा और खिलाऊँ!'' कहती हुई माता अलमेलुमंगा बालक अन्नमय्या को लाड प्यार से आनंद निलय स्वामी श्री वेंकटेश्वर के प्रसाद खिलाने लगी। यह दृश्य ही ऐसा था जैसे यशोदा माँ अपने लाडले श्रीकृष्ण को माखन खिला रही हो। इस रूप में अलमेलुमंगा मंदिर से लाये प्रसाद को अन्नमय्या को खिलाती स्वयं ने भी थोडा खाया। प्रसाद अन्नमय्या की हथेली में रख रख कर माता ने खिलाया।

अपनी माँ लक्कमांबा से भी अधिक प्यार बरसाती अलमेलुमंगा ने अन्नमय्या को घाल घाल कर खिलाया। अन्नमय्या ने स्वादिष्ट प्रसाद पेट भर खा लिया।

शौरियु दानु निच्चलु पोत्तुगलसि
यारगिंचिन प्रसादान्नमुल देच्चि

परि परि रुचुल नेर्पेड सेद देर
पेरिमतो भुजिइंप बेट्टि यूरार्चि।

यही तिरुमलेश का पहाड है। देवदेव श्रीनिवास तक पहुँचने के लिए माई अलमेलु मंगा ने रास्ता दिखाया। अन्नमय्या ने उस समय पूछा -

''माई! तुम ने अपने को अलमेलु मंगा बताया न माई! श्री वेंकटेश्वर की पटराणी भी बतायी। ठीक है। लेकिन तुम कहाँ रहती हो! कहाँ से यह प्रसाद लाकर मुझे खिलाया है! थोडा विवरण के साथ बताओ माई''- अन्नमय्या ने प्रार्थना की।

''पुत्र! अन्नमय्या! मैं इस वेंकटाचल में भक्तों के लिए वर प्रसादिनी बनकर, मनौतियों की पूर्ति करनेवाले स्वामी श्रीवेंकटेश्वर की पटराणी हूँ। मुझे अलमेलुमंगा कहते हैं। मैं स्वामी के वक्षःस्थल पर विराजमान रहती हूँ। मुझे ''व्यूहलक्ष्मी'' भी कहते हैं। मेरे स्वामी के वक्षःस्थल पर रहने के कारण वे 'श्रीनिवास' नाम से भी पुकारे जाते हैं। भक्तों के लिए, लोक कल्याण के लिए संकल्प करके श्रीमहा वैकुंठ से उतर कर, भूलोक वैकुंठ इस वेंकटाचल में बसे प्रत्यक्ष देव ही श्रीवेंकटेश्वर हैं। भक्तों के लिए वे कल्पवृक्ष हैं, चिंतामणी, कामधेनु हैं। जगत्काल्याण के लिए, लोक कल्याण के लिए कंकण बद्ध हो सतत प्रयत्न करते हैं। यह भी सच है कि हम दोनों अभिन्न हैं, दोनों एक ही हैं। भक्तों की सुरक्षा के लिए हम दोनों रात-दिन प्रयत्न करते रहते हैं।

अब तुम कौन हो तुम जानते हो! अन्नमय्या सावधानी से सुनो।

श्रीवेंकटेश्वर के पंचायुध हैं। वे हैं, सुदर्शन चक्र, पांचजन्य शंख, कौमोदकी खड्ग, शार्ङ्ग नामक धनुष, नंदक नामक खड्ग, ये ही स्वामी के पंचायुध हैं।

इन में नंदकायुध खड्ग अंश से पैदा होनेवाले कारणजन्म तुम हो अन्नमय्या! लोक कल्याण के लिए विस्तृत हमारी विश्व प्रणाली में तुम भी हिस्सेदार हो। तुम अन्नमय्या के रूप में अवतरित हुए हो। 'अन्नं परमब्रह्म स्वरूप है' की तरह तुम साक्षात परम ब्रह्म स्वरूपी हो अन्नमय्या! अनंतकाल के भ्रमण में तिरुवेंकट प्रभु के दुष्ट मर्दन, शिष्टसंरक्षण, लीलाओं, महिमाओं, श्रृंगार प्रसंगों को प्रत्यक्ष रूप से दर्शन करनेवाले नंदक खड्ग तुम हो। इस अवतार में निषित रूप से श्रीनिवास की लीलाओं एवं श्रृंगार कीर्तनों को अपनी मधुर कविताओं से प्रचार करने का आदेश तुम्हें मैं दे रही हूँ। वही तुम्हारा लक्ष्य है। तुम्हारा उद्धेश्य भी वही होना चाहिए। 'भगवान को पंसद हो और लोक को पसंद हो' त्रिकरण शुद्धि के साथ श्रीवेंकटेश्वर पर पदकविताओं को गाते प्रचार करने की आवश्यकता है। इस कलियुग में सब भक्त, मुख्य रूप से तेलुगु प्रजा सब को तुम्हारे द्वारा इस पहाड के देव के अनुग्रह से पहाड जैसा आनंद प्राप्त करना चाहिए। वही तुम्हारा आंदोलन और आर्ति बननी चाहिए। तुम आज ही प्रारंभ करो। तुम्हारी हर बात परम वेद सम, जो गाया वही परम गीत के रूप में अमर हो जाय, ऐसा मैं तुम्हें वरदान देती हूँ। कहती हुई अन्नमय्या के सिर पर हाथ धर कर अलमेलु मंगा ने आशिर्वाद दिया।

बस! अन्नमय्या तब से अक्षर ब्रह्म के रूप में प्रकाशित हआ। उसके कंठ से ओमकार प्रतिध्वनित हुआ। बस! नादब्रह्म तथा ओमकार स्वरूप बन कर प्रकाशित हुए। प्रप्रथम तिरुमलेश की राणी अलमेलुमंगा पर अन्नमय्या ने गान किया -

योग्यतलेनि कष्टुड नयोग्युड नन्निट जूड गर्भनि -
र्भाग्युड नी कृपामतिकि ब्राप्तुड नो यलमेलुमंग ना
भाग्यमु नी गृपाकरुण ब्राप्यमु कावु मटंचु सारे नी
भाग्यवती शिरोमणिनि ब्रस्तुति सेसेद वेंकटेश्वरा!

अतडे नीवु, नीनवनग नातडु, नी पलुके तलंपगा
नातनि पल्कु, नी हृदय मातडे पो यलमेलुमंग नी
चेतिदे सर्वजंतुवुल जीवन मंतयु नंचु नम्मुनि
व्रातमु सन्नुतिंचु ननिवारण नी सति वेंकटेश्वरा!

मंगल मम्मकुन् सकलमंगल मंबुजनेत्रकुन् जया
मंगल मिंदिरासतिकि मंगल मी यलमेलुमंगकुन्
मंगलमंदु ने मरियु मंगलमंदुनु देवलोक दि
व्यांगनलेल्ल नी सतिकि नारतु लित्तुरु वेंकटेश्वरा!

'माई को ताल्लपाक अन्नमय्या ने पद्य शतक सुनाया'। अलमेलु मंगा पर सौ पद्यों के शतक को अत्यंत भक्ति और प्रपत्ति के साथ आशु रूप में गाया अन्नमय्या ने।

''भला! अन्नमय्या! भला! तुम्हें श्रीवेंकटेश्वर अनुग्रह प्राप्तिरस्तु! ऐसे ही आजन्मांत श्रीनिवस की सेवा में अपने को धन्य बनाओ! अपने लोगों को ही नहीं पूरे देशवासियों को भी प्रबोध करके धन्य बनो।'' कहती हुई अलमेलु मंगा ने अपने दोनों हाथों से उठाकर अन्नमय्या को आशिर्वाद दिया और कहा -

''अन्नमय्या! उधर देखो अनोखी कांतियों से शोभित वह श्री वेंकटेश्वर का पहाड है। वही वेंकटाचल है! इस क्षेत्र में विराजित तिरुमलेश की सतत सेवा करके अपने को धन्य बनाओ। तुम्हारे द्वारा अन्यों को भी धन्य बनाओ। तुम्हारी जय हो! शुभ हो!'' फिर माता अलमेलु मंगा अदृश्य हो गयीं।

माताओं की माता अलमेलुमंगम्मा ने इशारा करके रास्ता दिखाया। अन्नमय्या माई के बताये मार्ग पर चलते सात पहाडों को पार करते हुए दर्शन किए। तत्काल अन्नमय्या के मुँह से एक गीत उभरा - 'उधर देखो हजारों कांतियों से चमकनेवाला तिरुमलेश का पहाड। सामने प्रत्यक्षहोनेवाला श्रीवैकुंठ!' वही श्रीवेंकट पहाड!'

कट्टेदुर वैकुंठमु काणाचयिन कोंड
तेट्टेलाय महिमले तिरुमलकोंड!

वेदमुले शिललै वेलसिनदि कोंड
येदेस पुण्यरासुले येरुलैनदि कोंड
गादिलि ब्रह्मादि लोकमुल कोनल कोंड
श्रीदेवु डुंडेटि शेषाद्रि ई कोंड.

सर्वदेवतलु मृगजातुलै चरिंचे कोंड
निर्वहिंचि जलधुले निट्टचरुलैन कोंड
वुर्वि दपसुले तरुवुलै निलिचिन कोंड
पूर्वपुटंजनाद्रि ई पोडवाटि कोंड

वरमुलु कोटारुगा वक्कणिंचि पेंचे कोंड
परगु लक्ष्मीकांतु सोबनपु कोंड
कुरिसि संपदलेल्ल गुहल निंडिन कोंड
विरिवैन दिदिवो श्री वेंकटपुकोंड!

गीत गाते हुए अन्नमय्या तिरुमल क्षेत्र पर पहुँच गया।

''मोकाल्लमिट्ट'' तक आकर अन्नमय्या बेहोश हुआ तो तब अन्नमय्या के पास श्रीवेंकटेश्वर के वक्षस्थल वासिनी श्रीमहालक्ष्मी 'व्यूहलक्ष्मी' ने दिव्य मंगल रूप धारण कर पहाड से उतर कर अन्नमय्या के पास आ गयी। अन्नमय्या की थकान को दूर कर उसे श्रीस्वामी का प्रसाद खिलाया। अन्नमय्या को अपने बारे में बताकर उसे अपने लक्ष्य के बारे में प्रबोध किया। अन्नमय्या के कवितावेश को उत्प्रेरित कर अन्नमय्या को जगाया अलमेलु मंगा ने। तिरुमलेश की ओर उसे उन्मुख किया। अन्नमय्या के जीवन की यह एक अद्भुत घटना थी। सिर्फ एक अन्नमय्या के जीवन में ही नहीं बल्कि अखिलांध्र जनों के लिए इसने महायोग प्रदान किया। पता नहीं इस महाभाग्य को प्राप्त करने के लिए आंध्रवासियों ने कौन सा पुण्य किया। यह सिर्फ परब्रह्म वेंकटेश्वर स्वामी ही जानते होंगे। उस आनंद निलय स्वामी की पटराणी अलमेलुमंगा को ही शायद मालूम है!

गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!!

((((((()))))))

गवाही देनेवाली अलमेलुमंगा

यह आनंद निलय स्वामी की पटराणी की एक और दिव्य गाथा है! यह आनंदमय अलमेलुमंगम्मा की गाथा है! सुंदर कथा है! समय काटने के लिए कही गयी कथा कदापि नहीं है! यथार्थ कथा है!

आज से पाँच सौ वर्षों के पहले घटित अत्यंत दिव्य कथा है! तिरुचानूर में घटित वास्तविक कथा है! शहद सम मिठास सिक्त बातों से भरी माई पद्मावती देवी की अतिमनोहर दिव्य कथा है! अविस्मरणीय दिव्य गाथा है! मधुरातिमधुर एक घटना पर आधारित सुमधुर कथा है! आगे इस घटना के बारें में जानकारी प्राप्त करेंगे! जानने के पहले आश्रित जन रक्षक और मनौतियों की पूर्ति करनेवाले स्वामी की दिव्य मंगल मूर्ति को स्मरण करने के साथ साथ, उस स्वामी के वक्षःस्थल पर विराजित दया स्वरूपिणी जगन्माता श्रीअलमेलुमंगा का स्मरण मन भर करेंगे।

श्री लक्ष्मी वेंकटरमण गोविंदा! गोविंदा!!गोविंदा!!!

(((())))

पद्मशाली (जुलाहे) जाति के लोग और जांड्र जाति के लोग

अनादि काल से आंध्र प्रान्त अनेक संस्कृतियों, जातियों, प्रजातियों और पेशेवारों का स्वर्गधाम रहा है। उन जातियों के लोगों या उन के द्वारा किए जानेवाले पेशों के लिए सामाजिक जीवन व्यवस्था में अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान था। समाज में प्रत्येक का अपना अपना स्थान रहा। प्रत्येक का अपना पेशा भी था। वे एक दूसरे को गौरव भी देते थे। ऐसे लोगों में विविध प्रकार के वस्त्र बुननेवाले लोगों को पद्मशाली (जुलाहे) कह कर मुकारते हैं। वस्त्र बुनने के काम को उन्होंने अपने जातिगत पेशे के रूप में बना लिया था। वह उनका जीवनाधार था। बुनकर वर्ग की दो जातियाँ मुख्य रूप से आंध्र में रही हैं। पहली जाति के लोग ''पद्मशाली'' दूसरी जाति के लोग ''जांड्र जाति'' के माने जाते थे।

पहले ये दोनों एक ही जाति के लोग थे। इन का मुख्य पेशा वस्त्र बुनना था। इसलिए इन्हें बुनकर (चेनेतकार) कहते थे। लेकिन काल क्रम में एक ही जाति के इन लोगों में से अपनी अपनी आदतों के अनुसार कुछ ने वैष्णव धर्म को अपनाया तथा कुछ ने शैव धर्म को। बाद में उनके धर्म के अनुसार ये ही दो जातियों में बँट गए। वैष्णव धर्मावलंबियों को 'पद्म शाली' और शैव धर्मावलंबियों के 'जांड्र जाति' के लोग कहना शुरु हो गया। आगे वही निश्चित रह गया। इन दोनों जातियों की मूल जाति एक ही मानी जा सकती है। उन का पेशा भी पहले से ही एक ही रहा है। बाद में इन दोनों जातियों के बीच में राग-द्वेष भी शुरु हो गए। खास कर द्वेष अधिक बढ गया। वैष्णव धर्म को माननेवाले ''पद्मशाली'' लोगों को 'दाएँ जाति के लोग' और 'जांड्र' (देवांग) जाति के लोगों को 'बाएँ

जाति के लोग' कहना आरंभ हो गया। इस से स्पष्ट होता है कि इस जाति में स्पष्ट विभाजन हुआ है। इस से बढ कर 'पद्मशाली' जाति के लोगों के 'भावना ऋषि' और 'जांड्र' जाति के लोगों के 'पंचऋषि' मूल पुरुष माने गये। इस से ये दोनों जातियाँ मूल से विभक्त हो गयीं। किंतु इन दोनों जातियों की पुरा-कथा इस रूप में पाप्त होती है।

ब्रह्म के मानस पुत्रों में भृगु महर्षि एक हैं। ये भृगु महर्षि नव ब्रह्माओं में भी एक के रूप में प्रचलित हैं। भृगु महर्षि ने दक्ष प्रजापति की पुत्री 'ख्याति' के साथ विवाह किया। भृगु महर्षि के 'धाता', 'विधाता' नामक दो पुत्र हैं और 'लक्ष्मीदेवी' नाम की एक पुत्री भी। उन में बडे पुत्र धाता को मृकंड नामक एक योगी पैदा हुए। उस मृकंड के पुत्र ही मार्कंडेय महर्षि हैं। मार्कंडेय परम निष्ठावान ब्रह्मचारी हैं। मार्कंडेय एक बार होम करते समय होम कुंड से पंचमहाऋषि और भावना महर्षि नाम से दो महनीय पुत्र आविर्भूत हुए। पंचमहाऋषि के अंश से बाद में 'देशम लोग' यानी 'जांड्र' जाति के लोग उद्भूत हुए।

दूसरे पुत्र भावना ऋषि ने सूर्य भगवान की पुत्री भद्रावती के साथ विवाह किया। उन दंपतयों को सौ पुत्र पैदा हुए। इन सौ लोगों ने देवता और राक्षसों के लिए नहीं बल्कि मानवों को भी देह-रक्षा के लिए आवश्यक वस्त्रों को तैयार करना शुरु किया। ये सौ लोग बाद में वस्त्र तैयार करनेवालों के रूप में प्रचलित हुए। ये श्रीहरि के ससुराल के लोग माने जाते हैं। लक्ष्मी देवी के लिए पीहर के लोग हैं।

यह उन की गाथा है!

अच्छी बात है। दोनों की एक ही जाति है। एक ही वंश है। एक ही पेशा भी है। एक दूसरे के बीच आदान-प्रदान भी था। दोनों के बीच

रिश्ते भी थे। लेकिन कालक्रम में दोनों के बीच दूरी बढ गयी। दोनों के बीच में होड और मनमुटाव बढ गए। इस के अलावा दोनों के बीच धर्म संबंधी अंतर ने आग में घी का काम किया। दूरी के बढते दोनों जातियाँ बिलकुल अलग हो गयीं।

मुख्य रूप से तिरुपति, तिरुचानूर, योगि मल्लवरम, नारायणवरम आदि प्रान्तों में फैलकर, अपने हथकरघा पेशे को अपनानेवाली इन दो जातियों के बीच में सन १६ वीं (१५४१) सदी में एक नया झगडा शुरु हो गया था।

साक्षात श्रीमहालक्ष्मी स्वरूपा के रूप में अवतरित अलमेलु मंगम्मा को अपने ही घर की लडकी के रूप में दोनों जाति के लोगों ने मानना - सुनाना शुरु किया। इसे लेकर दोनों के बीच में वाद-विवाद भी शुरु हो गए। इस से दोनों के बीच की दूरी कम होने की जगह और बढ गयी। लेकिन दोनों ने इस समस्या को बुजुर्ग लोगों के बीच में चर्चा करके शांति के साथ सुलझाना चाहा। ऐसा एक निर्णय भी ले लिया। उस समय अत्यंत प्रचलित ताल्लपाक चिनतिरुवेंगल नाथ के पास दोनों जाति के नेता लोग गए। तिरुवेंगलनाथ ताल्लपाक अन्नमाचार्य के पोते हैं। ये ताल्लपाक चिन्नन्न के रूप में भी ख्यात हैं।

''स्वामी! गुरुजी! हमारे बीच के झगडे को दूर कीजिए। स्पष्ट कीजिए कि अलमेलु मंगम्मा हम दोनों के किन के घर की ननद है?'' - दोनों जातियों के लोगों ने चिन्नन्न से प्रार्थना कर इस के लिए उन्हें राजी भी किया।

पद्मशाली के लोग और जांड्र जाति के लोग चिन्नन्न को ही अपने बिछौले के रूप में, गुरूजी के रूप में, झगडे का निवारण करनेवाले न्याय-पंच के रूप में मानने के कई मुख्य कारण हैं।

चिन्नन्न द्विपद केरगुनु
पन्नुग बेदतिरुमलय्य पदमुन केरुगुन्
मिन्नंदि मोरसि नरसिं
गन्न कवित्वंबु पद्यगद्यश्रेणिन्

पीढियों से तिरुमल श्रीनिवास के मंदिर के साथ जुड कर, त्रिकरण शुद्धि से, श्रीनिवास के कीर्तन करनेवाले हैं ताल्लपाक अन्नमाचार्य और उन के वंशज। इन में उन के पुत्र और पौत्र भी शामिल हैं। इन में चिन्नन्न आयु की दृष्टि से सबसे छोटी आयु के होने के बावजूद भी प्रसिद्ध हैं। इन्होंने सरल संप्रेषणीय द्विपद छंद में अपनी पद्य रचनाओं को प्रस्तुत किया। द्विपद छंद प्रयोग में अत्यंत निपुण चिन्नन्न ने बुनकरों का गुरु स्थान भी प्राप्त किया। बचपन में माई अलमेलु मंगा के स्तनपान का सौभाग्य प्राप्त है चिन्नन्न को। जगन्माई अलमेलुमंगा ने स्वयं छोटी आयु के चिन्नन्न को गोद में लेकर सांत्वना दी थी। उसे अपना दूध पिलाकर तृप्त किया था। ऐसी एक मान्यता लोक में प्रचलित है।

बस! - - - -

अत्यंत स्वादिष्ट कवित्व रचना शक्ति उन्हें आसानी से प्राप्त है। सुरम्य कविताएँ और काव्य उन के मुँह से निकले। अष्ट महिषि कल्याण, परमयोगी विलास, उषा कल्याण आदि द्विपद काव्यों का प्रणयन चिन्नन्न ने किया। इन के साथ साथ अपने पितामह ताल्लपाक अन्नमाचार्य की जीवनी को भी उन्होंने द्विपद में रचा है। उस द्विपद में ही अपने पिताजी

पेद तिरुमलय्या के चरित को, अपनी स्वीय गाथा को लिखा है, ऐसा शोधार्थियों का विश्वास है। किंतु आज सिर्फ अन्नमय्या का ही चरित ही प्राप्त होता है। बाकी लोगों की जीवनियाँ प्राप्त नहीं होती हैं।

पंडितों के साथ साथ पामर जनों से भी आसानी से गाने योग्य द्विपद छंदों में चिन्नन्न ने अपनी पद्य रचनाओं का प्रणयन किया। चिन्नन्न का नाम सुनते ही असीम भक्ति, प्रपत्ति और गौरव बढ जाते हैं। चिन्नन्न बचपन में अलमेलुमंगा के थन-दूध पीने से लेकर यह भी माना जाता है कि वे अलमेलुमंगा से बात किया करते थे। माई! कहकर पुकारते ही पद्मावती हँसती हुई चिन्नन्न से बात करती थी। गोद में लेकर प्यार करती थी।

माना जाता है कि वे माई श्रुतिमधुर बातें करती हुई उस से गप्पें भी लगाती थीं। कोख से पैदा हुए बच्चों से भी अधिक चिन्नन्न के प्रति वे वात्सल्य दिखाती थी। इसीलिए चिन्नन्न को पेट भर अपने थन-दूध पिलाया। उस समय से लेकर अलमेलु मंगा हर समय चिन्नन्न की अपनी आँख की पलक की तरह रक्षा करती रही। इसलिए जनता में चिन्नन्न को लेकर कुछ विश्वास बन गए। कुछ धारणाएँ बनीं।

ताल्लपाक चिन्नन्न की बात साक्षात तिरुमलेश की बात मानी जाती है। उनका आशीष साक्षात अलमेलुमंगा का आशीष है। चिन्नन्न चलते फिरते भगवान हैं। अवतरित सरस्वती हैं। उन की हर बात वेद वाक ही है। उन का हर गीत रत्नों का गीत है। चिन्नन्न की मंद मुस्कान सब के हृदय में फूलों की वर्षा कराती है।

तत्कालीन समाज में चिन्नन्न एक आध्यात्मिक तत्व वेत्ता था। चलने फिरनेवाला वेदांत पीठ था! आचार्य था! एक न्याय निर्णेता था! इस

प्रकार उन्नत शिखरों पर अधिरोहित चिन्नन्न को पद्मशाली जाति के लोग और जांड्र जाति के लोग दोनों ने अपने झगडे को सुलझाने के लिए न्याय निर्णेता के रूप में चुन लिया।

एक दिन दोनों के बुजुर्ग लोग सोने के थालों में चंदन तांबूल आदि के साथ ताल्लपाक चिन्नन्न के पास गए। अपने झगडे के बारे में सविस्तार बताकर सही न्याय करने के लिए कहा। चिन्नन्न ने भी उन की प्रार्थना को स्वीकार करते हुए हामी भरी। फैसला सुनाने के लिए अच्छी जगह के साथ साथ शुभ मुहूर्त का भी निर्णय हुआ।

शुभकृत नाम संवत्सर, कार्तिक मास की पौर्णमी के दिन गुरू वार को मध्याह्न ११ बजे चंद्र होर शुभ समय को दिव्य मुहूर्त के रूप में निर्णय किया गया। वह ठीक सन १५४१ अक्तूबर २३ गुरुवार का दिन था।

इस सुवर्ण संदर्भ के लिए साक्षात अलमेलुमंगा की सन्निधि तिरुचानूर के श्रीपद्मावती माई के मंदिर के मुख मंटप को मंच के रूप में चुना गया।

निर्णित समय के अनुसार तिरुचानूर श्रीपद्मावती माई के मंदिर के मुख मंटप में ताल्लपाक अन्नमाचार्य के पोते ताल्लपाक चिन्नन्न के नेतृत्व में साक्षात अलमेलु मंगम्मा के द्वारा गवाही सुनायी गयी की पद्मशाली जाति के लोग ही अपने पीहर के लोग हैं।

उस दिन घटित इस मधुर प्रसंग के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर, ताल्लपाक के वंशजों पर दिखाई अनुग्रह वर्षा में सब भीगते हुए आनंद रस धारा में डुबकी लगाए।

गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!!

((((((()))))))

अलमेलुमंग पट्टणम्

बहुत छोटा गाँव है। गाँव छोटा होने पर भी सुंदर है। उस छोटे गाँव के बीचों बीच एक विशाल, आईने के रूप में चमकनेवाला बडा सरोवर है। उस में कमल खिले हुए हैं। पूरा सरोवर कमलों से भरा है। गाँव के लोग उस सरोवर को 'कमलों का सरोवर' पुकारते हैं। जन सामान्य से अलग पंडित, विद्वान आदि उसे ''पद्मसरोवर'' कहते हैं। इसी पद्म सरोवर में ही श्रीमहालक्ष्मी 'अलमेलु मंगा' के रूप में आविर्भूत हुई हैं।

सरोवर के कमलों पर 'झुम्' नाद करते हुए काले भ्रमर, पानी में प्रतिबिंबित बडा पीपल का पेड, बरगद के वृक्ष, उन वृक्षों पर कलरव करनेवाले तोते, मैना सरोवर की चारों दिशाओं में सुंदर ढंग से सजायी गई गलियाँ बहुत सुंदर हैं। गलियों में श्रीवैष्णव पंडित और आचार्यों के मकान हैं। उन के पीछे व्यापार करनेवाले बनियों के, कपडे बुननेवाले पद्माशालियों के मकान, जांड्र जाति के लोगों के मकान आदि हैं।

पद्म सरोवर के पूरब तट पर सूर्य भगवान का मंदिर है। इस मंदिर में पश्चिमाभिमुख सूर्य भगवान की मूर्ति है। माना जाता है कि साक्षात श्रीनिवास ने इस सूर्यनारायण मूर्ति की प्रतिष्ठा की है। इसलिए तिरुचानूर क्षेत्र 'भास्कर क्षेत्र' भी है।

यहाँ श्रीवेंकटेश्वर ने श्रीमहालक्ष्मी को लेकर १२ वर्ष तप किया था। साथ ही सरोवर में सहस्र दल सुवर्ण पद्म से श्रीमहालक्ष्मी अवतरित हुई हैं। इसीलिए उन्हें पद्मावती और उस सरोवर को पद्मसरोवर कहकर पुकारते हैं।

सूर्य भगवान मंदिर से थोडी दूरी पर, पद्मसरोवर के आग्नेय कोने में एक विशाल प्राँगण में पूर्वाभिमुख एक भव्य मंदिर है। वही श्री वेंकटेश्वर स्वामी की देवेरी पटरानी श्रीपद्मावती माई का मंदिर है। इस मंदिर में पूर्वाभिमुख होकर श्रीअलमेलुमंगम्मा पद्मासीन मुद्रा में विराजित हो अर्चामूर्ति के रूप में दर्शन दती हैं। भक्तों की पूजाएँ व सेवाएँ प्राप्त कर रही हैं। माई भक्तों की समस्त इच्छाओं की पूर्ति करनेवाली कल्पवल्ली हैं। माई के मंदिर के आँगन में दक्षिण दिशा में बलराम-श्री कृष्ण का मंदिर भी है।

भक्तों के प्रति आश्रितवल्ली, वात्सल्य मूर्ति अलमेलु मंगा का मंदिर निरंतर भक्तों से भरा रहता है। तिरुमलेश के दर्शन के लिए आनेवाले सभी भक्त पहले अलमेलुमंगा माई के दर्शन कर लेते हैं। कुछ लोग तिरुचानूर में ही आवास बनाकर नित्य माई की उपासना और सेवाएँ प्रदान करते रहते है। ऐसे भक्तों से नित्य भरकर मंदिर अत्यंत कोलहल के साथ रहता है।

सुवर्णमुखी नदी के तट पर बसा इस दिव्य क्षेत्र का नाम तिरुचानूर है। इस गाँव को अलमेलु मंगम्मा के नाम से ''अलमेलुमंगपट्टण'' कहकर भी अत्यंत भक्ति से पुकारते हैं। माना जाता है कि पूर्व काल में यहाँ शुक महर्षि आश्रम बनाकर रहा करते थे। इसलिए यह श्रीशुकपुरम भी है। कालक्रम में तिरुच्चुकनूर बनकर आखिर 'तिरुचानूर' बन गया। यह एक मान्यता है। इसी को आगे चलकर जन ''चिरुतानूर'' नाम से भी पुकारते हैं। भक्तों की पुकारों से यह गाँव हमेशा प्रतिध्वनित होता रहता है।

''माई! जगदेक माई! अलमेलुमंग ताई! श्रीनिवास की प्रिय सती पद्मावाती! त्रिमूर्तियों से निरंतर कीर्तित यहाँ अर्चा मूर्ति के रूप में हम सब की पूजाएँ प्राप्त करनेवाली माई हे पद्मावती! इस से बढकर तिरुमल क्षेत्र भक्त वत्सल श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के वक्षस्थल पर बसी व्यूह लक्ष्मी प्रणाम! श्रीनिवास की दया को सभी भक्तों पर प्रसारित करानेवाली माई आप ही हैं! इस के लिए सभी भक्तों की ओर से स्तुति प्राप्त करनेवाली माई भी आप ही हैं! यहाँ और वहाँ भक्तों के द्वारा आप को सुनायी गयी प्रार्थनाएँ, इच्छाओं के बारे में स्वामी को सुनाइए माई ! सिर्फ सुनाने तक ही सीमित न होकर माई, स्वामी पर दबाव डालकर, अवश्य हमारी मनौतियों, माँगों को पूरा कराइए माई!''- निरंतर भक्तगण तिरुचानूर पद्मावती माई से प्रार्थना करते हैं।

योग्य भक्तों की मनौतियों एवं प्रार्थनाओं के अनुकूल दयास्वरूपिणी माई अलमेलुमंगा अत्यंत वात्सल्य के साथ स्वयं सुनती है। फिर तिरुमल में श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर व्यूह लक्ष्मी अलमेलुमंगा आनंद निलय के स्वामी श्रीनिवास को सुनाती हैं। भक्तों की मनौतियों के बारे में सुनाने से ही अपने को नहीं रोकती हैं। उन की मनौतियों को पूरा करने तक स्वामी पर दबाव डालती है। तद्वारा स्वामी की दया भक्तों पर प्रसारित होती है। स्वामी के द्वारा उनकी इच्छाओं की पूर्ति करवाती हैं।

संतान की माँग करने की ही देरी तुरंत माई उन्हें संतान प्रदान करती हैं। गरीबी से तडपनेवालों को सिर्फ एक बार माई की शरण में जाना ही बाकी है! माई उन पर कनक वर्षा बरसाती हैं। कहना क्या है, अगर

संपदाएँ चाहिए, सौभाग्य चाहिए, शिक्षा चाहिए, सद्बुद्धि चाहिए, संतान चाहिए तो सिर्फ माई से ही विनति करनी चाहिए। माई अवश्य अनुग्रह करती हैं!

दयार्द्र हृदयवाली श्रीमहालक्ष्मी स्वरूपिणी पद्मावती भक्तों के गुण-दोषों को गिनती में नहीं लेती हैं। हिसाब नहीं करती हैं। इस के बारे में वे सोचती ही नहीं हैं। अपनी शरण में आनेवाला कोई भी हो, उस पर वे दया बरसाती हैं। प्रेम दिखाती हैं। करूणा रस बरसाती हैं। इसलिए अलमेलु मंगा ''वात्सल्यादि गुणोज्ज्वलां'' हैं। दया स्वरूपिणी श्रीमहालक्ष्मी श्रीमहाविष्णु पर रूठकर वैकुंठ को छोडने की बात भूल ही गयी हैं। भूलना ही नहीं श्रीवेंकटेश्वर के तप से पिघल कर पानी हो गयीं।

जगत्कल्याण के लिए स्वामी की इच्छा के अनुसार ''पद्मावती के रूप में आविर्भूत होकर पुनः स्वामी में लीन हो गयीं। तीनों लोकों के कल्याण के लिए तिरुचानूर में अर्चामूर्ति के रूप में पद्मावती पूजाएँ प्राप्त कर रही हैं। तिरुमल में श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर व्यूहलक्ष्मी के रूप वास कर रही हैं।

लगता है कि उस दिन तिरुचानूर में कोई विशेष दिन था। भक्त वात्सल्य से विराजित अलमेलु मंगा के मंदिर में अत्यधिक कोलहल था। जुलूस का वातावरण था। परंधाम की पत्नी श्रीपद्मावती का शांति निलय नित्य कल्याण शोभा से प्रकाशित था। यह संतोष, यह कोलाहल सिर्फ मंदिर के अंदर ही नहीं है। मंदिर के बाहर, पद्मसरोवर की चारों तरफ, पूरे तिरुचानूर में व्याप्त था।

वह कांति क्या है? और क्यों है! इस गाँव में सब जगह व्याप्त प्रकाश की कांति कहाँ से प्रसारित हो रही है! मालूम नहीं हो रहा है। असल में इस रहस्य के बारे में कुछ भी पता नहीं है।

लेकिन लेकिन -

उस गाँव में व्याप्त आनंदमय वातावरण के लिए, स्पष्ट रूप से दिखाई पडनेवाले उत्साह के लिए कारण के रूप में सिर्फ एक ही बात सर्वत्र सुनाई पड रही है। वही सब की बात भी है।

वह है ''माई गवाही देगी।''

सब के मुह से सुनाई पडनेवाली आश्चर्य की बात है।

सब के सामने अलमेलु मंगम्मा स्वयं गवाही देगी! सभी बहुत आसक्ति से बोल रहे हैं।

माई क्या कहेगी, किसी को भी मालूम नहीं है। न जानने से क्या नुकसान! वे जो भी कहेंगी सुन लेंगे। कुछ भी बता दें, माई की बात सुनना ही महा भाग्य है। इसलिए माई की बात सुननी चाहिए। सिर्फ हम ही नहीं, बाल-बच्चों को भी सुनना है। अपने अपने मित्रों को भी सुनना चाहिए। सभी को माई की बातें सुनकर धन्य हो जाना चाहिए। यही सब की बात है!

इसलिए सब जगह भाग दौड है। हर तरफ जन जन में कोलाहल है!

उस दिन अलमेलुमंगा के मंदिर में कोलाहल ही कोलाहल। जहाँ देखों वहाँ भक्तों की भीड है। मंदिर भर जन ही जन है। मंदिर के अंदर

जगह के न होने पर भी, जगह के पर्याप्त न होने पर भी और भी लोगों द्वारा मंदिर के अंदर आने की कोशिशें!

उस दिन अलमेलु मंग पट्टण में जन समूह तितर-बितर चींटियों सम रहा। तेज हवा से बिखरी मधु की चेत्ते जैसा है। मक्खियों से घिरे गुड के टुकडे के समान है। जहाँ देखो वहाँ जन है, हर दिशा में जन ही जन है। और भी आ रहे हैं। पता नहीं कहाँ कहाँ से आ रहे हैं। यह बहुत अनोखा चित्र है! सब में आतुरता है और आनंद भी!

ऊर्ध्व पुंड्रवाले वैष्णवाचार्य, जीयर स्वामी, परम नैष्ठिक वेद पंडित, ब्रह्मचारी, योगी, गृहस्थ, साधु, सन्यासी, सुहागिनें, कन्याएँ, बच्चे, वृद्ध, युवक, युवतियाँ, मंदिर के अधिकारीगण, अर्चक स्वामी, परिचारक - - - और कई! - - -

उन में - - -

चतुर्वेदों का पुरश्चरण किये ब्राह्मणोत्तम, विशिष्टाद्वैत सिद्धांतों को आमूल जाननेवाले श्री वैष्णवाचार्य, - - करोडपति, व्यापार के प्रमुख, निपुण पद्मशाली जाति के लोग, जांड्र जाति के लोग और भी अनेक तिरुचानूर पहुँच रहे हैं।

सब के मुँह में एक ही बात और एक ही वाणी!

ताल्लपाक चिन्नन्न माई के मुह से गवाही दिलायेंगे! अलमेलुमंगा स्वयं बोलेगी! गवाही देगी! पता नहीं क्या आनंद है! पता नहीं क्या आश्चर्य है!

'ठीक है, अच्छा है - - - '

पता नहीं कैसे गवाही देगी। सब को सुनाई देनेवाली गवाही देगी? गवाही देती दिखाई पडेगी? क्या अदृश्य रूप में सिर्फ गवाही देगी! पता नहीं! - पता नहीं! किसे मालूम है!

कुछ भी हो! दर्शन देगी तो नेत्रपर्व दर्शन कर सकते हैं! अवश्य दर्शन कर लेना चाहिए। अगर दर्शन नहीं देंगी तो क्या! कम से कम माई की वाणी तो सुन सकते हैं। ऐसा सोचते भक्त जन आसक्ति और आनंद से तिरुचानूर पधार रहे हैं।

उस दिन गर्भ आलय में विराजमान अलमेलु मंगम्मा मूल मूर्ति के दिव्य मंगल रूप का विशेष रूप से श्रृंगार किया गया। वज्रकिरीट पहनकर पद्मावती माई दया स्वरूपिणी के रूप में दर्शन दे रही हैं। इस के अतिरिक्त नवरत्न जटित वरद हस्तों से, मंद मुस्कान से आदि सुहागिन अलमेलुमंगा दर्शकों एवं भक्तों को आश्चर्य में डाल रही थीं और आनंद भी दे रही थीं।

माई का एक एक आभरण भक्तों के आनंद का प्रतीक हैं! माई के दिये मोतियों का हार उस जगन्माता के वरप्रसाद के उदाहरण हैं! सोने का हर कण भक्तों को मार्ग दिखानेवाला दीप स्तंभ है।

मातस्समस्तजगतां मधुकैटभारेः
वक्षोविहारिणि मनोहरदिव्यमूर्ते
श्रीस्वामिनि श्रितजनप्रियदानशीले
श्री वेंकटेशदयिते! तव सुप्रभातम्

माई! सर्वलोकों की जननी हे अलमेलु मंगा! मधुकैटभ नामक राक्षसों के शत्रु श्रीमहाविष्णु के वक्षःस्थल पर आप शोभायमान रहती हैं

न! हे जननी! अतिमनोहर सुंदर रूप से प्रकाशित आप अपने आश्रय में आये भक्तों की इच्छाओं की पूर्ति करना ही एक मात्र लक्ष्य रखती हैं न! हे श्रीवेंकटेश्वर की प्रिय पत्नी! हे श्रीमहालक्ष्मी! आप का शुभ हो!

माई! अलमेुल मंगम्मा! आप के दर्शन भाग्य से हमारे जीवन संपूर्ण रूप से धन्य हो जाय, ऐसा वरदान दीजिए माई! इह और पर हमें प्राप्त हो, ऐसा वरदान दीजिए!

माई के मंदिर के सामनेवाले मंदिर का मुख मंटप भी आज सजाया गया है। मख मंटप के बीचों बीच। चार स्तंभों के बीच शिलापीठ पर सोने की पालकी में पद्मावती माई की उत्सव मूर्ति नेत्रपर्व के रूप में विराजमान हैं। सुंदर ढंग से सजायी गयी माई की उत्सव मूर्ति दर्शकों को आकर्षित कर रही है। कनकांबर रंग की रेशमी साडी में, सुगंध बिखेरनेवाली विविध रंगों की फूल मालाएँ, चमकीले मोतियों के हारों से और भी अधिक अद्भुत रूप में अलमेलु मंगा माई दर्शन दे रही हैं।

माई की उत्सवमूर्ति के बगल में अर्चक स्वामीगण ऊर्ध्वपुंड्र धारण करके मंत्रों का पठन कर रहे हैं।

एक और दिक्षा में वेद मंत्रों को श्रुतिमधुर रूप में पाठ करनेवाले वेद पंडित हैं। बहुत दूर मंगल वाद्यों को सुमधुर रूप में बजानेवाले हैं।

उस मुख मंटप में ही उत्तराभिमुख हो रत्न जडे कालीन पर एक महानुभाव बैठे हैं। हाथों में रत्न कंकण, कानों में मकर कुंडल, सर पर रेशमी वस्त्र की पगिडी, ललाट पर ऊर्ध्व पुंड्र, हाथ में लाठी और काले शरीर के साथ हैं। शरीर काला होते हुए भी कांति से भरा चेहरा है। वे

लंबे कद के नहीं है। वैसे नाटे भी नहीं है। एक अच्छे कद के दर्प के साथ संभ्रांत लग रहे हैं। बहुत गंभीर बैठे हैं। प्रशांत भी लग रहे हैं।

वे ही ताल्लपाक चिन तिरुवेंगलनाथ हैं! उन्हीं का एक और नाम चिन्नन्न है। वे ताल्लपाक अन्नमाचार्य के पोते हैं। आज वे श्रीअलमेलुमंगा से गवाही दिलाएंगे। माना जा रहा है कि माई गवाही देंगी। असल में चिन्नन्न ने अपने बचपन में ही माई अलमेलुमंगा के थनदूध प्राप्त किया है। अलमेलुमंगा ने उन्हें अपनी गोद में बिठाकर स्वयं अपना थन-दूध पिलाया, ऐसा माना जाता है। पता नहीं ये कितने भाग्वयवान हैं।

इसलिए कहते हैं कि इन का कहना ही पर्याप्त है! कहते हैं कि साक्षात माई ने कहा है! लोग कहते हैं कि इन का आशीस देना ही पर्याप्त है। वे अलमेलु मंगा के ही आशीस हैं।

इस तरह सोचते सभी अपने आप उस ओर माई को तथा इस ओर चिन्नन्न को भक्ति से नमन करते हुए आगे बढ रहे हैं। कुछ विनय के साथ साष्टांग प्रणाम कर रहे हैं। कुछ दोनों हाथ जोडकर नमस्कार करते हुए जा रहे हैं।

भक्त ताल्लपाक चिन्नन्न के बारे में क्या कहना!

सब की ओर देख रहे हैं। देखते हुए अपने को नमस्कार करनेवालों को आशीर्वाद दे रहे हैं। आशीर्वाद देते हुए कुछ बोल भी रहे हैं।

देखनेवालों को ऐसा दिखाई देने पर भी चिन्नन्न किसी बात को लेकर गंभीर सोच रहे हैं। आँखें खोल कर बाहर देखते रहते हुए भी, उन

का मन तो अंतरंग दुनिया में कहीं विहार कर रहा है। वे आध्यात्मिक लोकों में उड रहे हैं, ऐसा लग रहा है।

ताल्लपाक चिन्नन्न के सामने दो कतारों में पद्मशाली वंश के लोग और जांड्र जाति के लोग आसीन होकर अलमेलु मंगा के द्वारा दी जानेवाली गवाही को सुनाने की शुभ घडियों को गिन रहे हैं। अपलक उस घडी का इंतजार करते बैठे हैं।

ठीक दोपहर के ११ भजे का समय! कार्तिक पौर्णमी गुरुवार चंद्र होर का प्रारंभ होनेवाला शुभ समय।

इतने में पद्मावती माई के गर्भ आलय से टन! टन! घंटे की आवाज! दोपहर की आराधना के समय का सूचक घंटारव।

बस! सब जगह सन्नाटा!

अर्चक स्वामी ने गर्भ मंदिर में पद्मावती माई की मूल मूर्ति को तथा मुख मंटप की उत्सव मूर्ति को अर्चना, निवेदन आदि संपन्न कर कपूर निराजन दिया, सभी भक्तों को उसे दिया।

भक्त जन सभी ने गोविंद नाम स्मरण के साथ तीर्थ प्रसाद स्वीकार किया।

श्रीलक्ष्मीवेंकटरमण गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!!

इतने में - - - !

चिन्नन्न के सामने रहनेवाले पद्मशाली तथा जांड्रजाति के प्रतिनिधि लोगों ने उठकर साष्टांग दंडवत करके चिन्नन्न से कहा -

''स्वामी! हे महनीय! श्रीवेंकटेश्वर के नंदक खड्ग के अंश से अवतरित अन्नमाचार्य जी के पोते हैं आप। अन्नमय्या की तरह बचपन में ही अलमेलु मंगा के अनुग्रह को आप ने प्राप्त किया। साक्षात अलमेलु मंगा के द्वारा पिलाये दूध को पीनेवाले अत्यंत पुण्यशील और भाग्यवान हैं आप! आप के मन के अनुरूप अलमेलु मंगा और श्रीनिवास व्यवहार करते हैं - ऐसा भक्त लोक में विश्वास भी है। यह विश्वास है कि पद्मावती माई आप की बातों को मानती हैं! आप की बात ही माई की बात है! आप के आशीस ही माई के आशीष हैं!

हम हथकरघे लोग हैं। हम में पद्मशाली और जांड्र नामक दो जातियों के हैं। पूर्व में हमारी जाति में श्रीमहालक्ष्मी अवतरित हुई है, ऐसी पौराणिक प्रसिद्धि है। इसलिए वे हमारी ननद है ऐसा हमारा विश्वास ही नहीं, सत्य भी है। प्रस्तुत नारायणवनम्, तिरुचानूर आदि प्रदेशों में बुनकर पेशे पर जीनेवाले हम में श्रीमहालक्ष्मी स्वरूपिणी पद्मावती माई को पीहर की भेंट के रूप में साडी आदि सागुन देने की परंपरा है। इस परंपरा को अमल करते हुए पहले हमें समर्पित करने का मौका मिलना है, हमें मौका मिलना है, ऐसी होड हम दोनों जातियों में शुरु हो गयी है। इस से दोनों जातियों के बीच में अनबन है। कृपया, यह बताइए कि हम में से कौन श्रीमहालक्ष्मी अंशरूपिणी अलमेलुमंगा के नजदीक रिश्तेदार है। किस की ननद है स्पष्ट बताइए। आप के निर्णय और आप के आदेश के अनुसार जहाँ तहाँ सब क्षेत्रों में, वहाँ के मंदिरों में हमें माई को अपने घर की पुत्री मानते हुए पीहर का सागुन आदि सम्मान करते रहना है।

हे महनीय! आप साक्षात श्रीनिवास से प्राप्त मकर कुंडल धारण करके परम वैष्णवों से सेवाएँ प्राप्त कर रहे हैं। पद्मवाती के अनुग्रह से ही सरस कवित्व को आसानी से करनेवाले हैं। आप परम भक्त और कवि ताल्लपाक अन्नमाचार्य के वंशज हैं। आप हमारे बुनकर पद्मशाली लोगों और जांड्र जाति के लोगों के बीच में होनेवाले इस झगडे को दूर करके, जगन्माता अलमेलु मंगा किस की ननद हैं, किन के सम्मान को पहले वे स्वीकार करती हैं, आप माई से कहलवा सकते हैं, यही हमारी प्रार्थना हैं।'' कहते हुए दोनों जातियों के लोग भक्ति से नमस्कार कर बैठ गए।

सर्वत्र सन्नाटा छा गया।

इतने में ताल्लपाक चिन्नन्न उठ खडे हो गए। अलमेलु मंगम्मा को साष्टांग दंडवत करके मन भर प्रार्थना की। तदुपरांत वहाँ उपस्थित भक्त जनों की ओर मुडकर कहा -

''आज अत्यंत शुभ दिन है। तिरुमल, तिरुचानूर के इतिहास में अस्मरणीय दिव्य सदंर्भ है। इस संदर्भ में हम सब यहाँ माई जी की दिव्य सन्निधि में पहुँच कर माई जी की दिव्य वाणी सुनने जा रहे हैं। हम अत्यंत भाग्यवान हैं? इस का वर्णन कर पाना असंभव है। सब, मौन होकर अपने आप में अलमेलुमंगा की प्रार्थना कीजिए! माई के दिव्य मंगल रूप का स्मरण कीजिए! स्मरण करते हुए ध्यान कीजिए! शुभं भूयात!''

चिन्नन्न ने मौन बैठकर ध्यान किया। तदुपरांत अपने पितामह अन्नमय्या के गाये संकीर्तनों को आलपते हुए अलमेलु मंगा की प्रार्थना की -

अलमेलु मंगा का अभिनव रूप

''अलमेलुमंगा नी वभिनवरूपं
जलजाक्षु कन्नुलकु चवुलिच्चेवम्मा!

गरुडाचलाधीशु घनवक्षमुन नुंडि
परमानंद संभरितवै
नेरतनमुलु चूपि निरंतरमु नाथुनि
हरुषिंचग जेसिति गदम्मा!

शशि किरणमुलकु चलुवल चूपुलु
विशदमुगा मीद वेदचल्लुचु
रसिकत पेंपुन गरणिंचि येप्पुडु नी
वशमु चेसुकोंटि वल्लभु नो यम्मा!

रट्टडि श्री वेंकटरायनिकि नीवु
पट्टपुराणिवै परगुचु
वट्टि माकु लिगिरिंचु वलपु माटल विभु
जट्टिगोनि वुरमुन सतमैतिवम्मा!

माई अलमेलुमंगा! तुम्हारा दिव्य मंगल रूप साक्षात श्रीनिवास के नेत्रों को तेज प्रदान करता है!

गरुडाचल पर स्थित श्रीवेंकटेश्वर स्वामी के वक्षस्थल पर व्यूहलक्ष्मी के रूप में विराजमान आप परमानंद स्वरूपिणी निरंतर स्वामी से प्रशंसित होकर संतोष के साथ भक्तों का संरक्षण कर रही हैं।

चंद्रमा जैसी शीतल दृष्टि स्वामी पर बरसाती हुई, रसिकता बढाती हुई अपने वल्लभ श्रीनिवास को अपने वश में करनेवाली अत्यंत चतुर माई हैं आप!

श्रीवेंकटेश्वर की पटरानी ही नहीं सूखे पेडों को भी पल्लवित कर सकनेवाली अपनी बातों से, श्रीनिवास के वक्षस्थल पर विराजित होकर प्रकाशित होनेवाली माई भी आप ही हैं! हे अलमेलुमंगा! चिन्नन्न ने माई के दिव्य मंगल रूप का कीर्तन किया। तदुपरांत श्रीनिवास का कीर्तन किया -

कोंडपै वेंकटेश! कोरि नी वेक्कितिवनि
कोंडवंटि नी वुरमु कोम्म येक्केनु
अंड अलमेलुमंग आपे नीकु कलुगगा
अंड नी दासुलकु नी वापेयु कलिगितिरि

भक्तों के उद्धार के लिए दोनों हमेशा होड करते रहते हैं, कहते हुए चिन्नन्न ने माई का ध्यान कर, अन्नमाचार्य ने सर्वप्रथम जिस कीर्तन को गाया था, उस कीर्तन को गाया।

अतडे नीवु, नी वनग नातडु
नी पलुके तलंपगा
नातनि पल्कु, नी हृदय
मातडे पो यलमेलुमंग! नी
चेतिदे सर्व जंतुवुल जीवन
मंतयु नंचु सन्मुनि
व्रातमु सन्नुतिंचु ननि -
वारण नी सति वेंकटेश्वरा!

माई अलमेलु मंगा! साक्षात आनंदनिलय श्रीनिवास आप ही हैं। आप ही श्रीनिवास हैं। आप का कहना ही पर्याप्त है! उस स्वामी के कहने के समान है! आप का हृदय ही वे हैं! उन का हृदय ही आप हैं! हे अलमेलुमंगा! सर्व जंतुओं का जीवन आप के संरक्षण में ही चल रहा है माई! परम योगीगण आप का कीर्तन करते रहते हैं। यह सत्य है।

अशेषवाग्जाड्यमलापहंत्री
नवं नवं स्पप्रसुवाक्प्रदायिनी
ममेह जिह्वाग्रहसुरंगनर्तकी
भव प्रसन्ना वदने च मे श्रीः

माई अलमेलुमंगा! वाक् के आलसीपन और मालिन्य को दूर करना ही नहीं, तेजोवंत, विनूतन और सुस्पष्ट बनानेवाली श्रीमहालक्ष्मी आप ही हैं! सदा मुख में जीभ की नोक पर रहती हुई मेरे प्रति प्रसन्न रहिए माई!

यथा हि पुत्रवात्सल्या -
ज्ञननी प्रस्नुतस्तनी
वत्सं त्वरितमागत्य
संप्रीणयति वत्सला

हे माई! जिस रूप में एक माँ अपनी संतान को थन देकर पुत्र वात्सल्य दिखाकर संतुष्ट करती है, वैसे ही तुम मुझे संतुष्ट करो माई! हे अलमेलुमंगा! बचपन में ही तुम्हारे थन पिया भाग्यवान मैं हूँ।

अंब त्वद्वत्स वाक्यानि
सूक्तासूक्तानि यानि च

तानि स्वीकुरु सर्वज्ञे
दयालुत्वेन सादरम्

हे माई! आप सब जाननेवाली सर्वज्ञ हैं! आप का पुत्र समान मेरी बातों की अच्छाई, बुराई को दया और आदर के साथ स्वीकार कर मुझ पर अनुग्रह कीजिए।

हे जगन्माता! अब इस पद्मशाली जाति के लोग और जांड्र जाति के लोग आप की सेवा में अपने जीवन को धन्य बना रहे हैं। अपनी बुनकर वृत्ति के द्वारा समाज सेवा करनेवाले भाग्यवान भी हैं। किंतु उन के प्रदेशों में मुख्य उत्सवों के समय श्रीमहालक्ष्मी के पीहर के लोगों के रूप में अलग अलग साडी, सागुन, हल्दी-कुंकुम, फल-फूल आदि सम्मान प्रदान करने में प्रप्रथम रहने में होड कर रहे हैं। प्रप्रथम तुम्हारे सम्मान करने में झगडा हैं। इस कारण से एक दूसरे से द्वेष करने लगे हैं। पहले हम ही लोगों द्वारा सम्मान प्रदान करना उचित है, यही सब का दावा है। संघर्ष कर रहे हैं।

माई! इन दोनों में तुम्हारे प्रति अनन्य भक्ति और श्रद्धा हैं। इन दोनों ने मुझे बिचौले के रूप में नियुक्त करके अपने झगडे को दूर करने की प्रार्थना की है। इसलिए माई इन के प्रति दया दिखाते हुए इन दोनों में कौन तुम्हारे पीहर के लोग हैं, किन के द्वारा पीहर के सम्मान प्राप्त करना आप चाहती हैं, बताइए माई!''- ताल्लपाक चिन्नन्न ने अनेक रूपों में अलमेलु मंगा की प्रार्थना की। सर्वत्र सन्नाटा छा गया।

थोडी देर बाद उस सन्नाटे को चीरती शांति निलय गर्भालय से एक मनोहर घंटानाद सुनाई पडा। अर्चकों में से किसी ने नहीं बजाया। फिर

भी श्रुति मधुर श्राव्य रूप में मंदिर के अंदर से घंटानाद! मंदिर के चारों तरफ प्रतिध्वनित! सिर्फ मंदिर के अंदर ही नहीं पूरे तिरुचानूर भर प्रतिध्वनित हुआ! घंटानाद के बंद होते ही गर्भालय भर एक दिव्य कांति फैल गयी। इतने में गर्भालय से अलमेलु मंगा ने सब को सुनाई देने वालें सुमधुर कंठ ध्वनि के साथ गवाही दी -

''मेरे पीहर के लोग पद्मशाली जाति के लोग हैं। दिव्य क्षेत्रों में, प्रदेशों में विशेष दिनों, उत्सवों में उसी जाति के लोगें को सब से पहले मेरे लिए सम्मान करना चाहिए। जांड्र जाति के लिए आवश्यक नहीं है। यानी पद्मसाले जाति के लोगों के सम्मान समर्पित करने के बाद कोई भी अपने सम्मान को समर्पित कर सकते हैं।''

बस! सर्वत्र गोविंद घोष की गूंज। आकाश को चूने लगा माई द्वारा दिव्य वाक, ये बातें, सर्वत्र व्याप्त होकर सब की कानों में प्रतिध्वनित हुईं। माई की बातों ने मंत्रों का काम किया। अलमेलुमंगा की बातों को सुननेवाले सभी तन्मय हो उठे। इस कलियुग में भी क्या देवताओं का बोलना संभव है? हम सब द्वारा सुनना कितना बडा महा भाग्य है!

'श्रीलक्ष्मीरमण गोविंदा! गोविंदा!! गोविंदा!!!'

भक्तों के गोविंद नाम स्मरण ने सब जगह फैल कर तिरुचानूर के परिसरों को और वातावरण को पवित्र बनाया।

उस दिन से उन क्षेत्रों में पद्मशाली जाति के लोग ही साडी-सागुन सम्मान पहले समर्पित करते आ रहे हैं। उस के बाद अन्य कोई सम्मान समर्पित कर सकते हैं - यही ऐसा निर्णय चिन्नन्न ने किया।

उस दिन से लेकर आज भी तिरुचानूर में माई की कार्तिक ब्रह्मोत्सवों से पहले पद्मशाली संघ की ओर से श्रीपद्मावती माई को साडी-चोली के वस्त्र समर्पित करते हैं। नारायणवन के ब्रह्मोत्सव के समय में भी मंदिर की मर्यादाओं के अनुसार साडी-चोली सागुन को ध्वजारोहण के समय पद्मशाली जाति के लोग सब से पहले समर्पित कर रहे हैं।

अलमेलु मंगा द्वारा चिन्नन्न द्वारा गवाही दिलाने पर, सभी भक्तों ने चिन्नन्न का जय जय नाद किया। तदुपरांत अलमेलुमंगा के नेत्रपर्व दर्शन कर, तीर्थ प्रसाद स्वीकार कर, भक्तगण चिन्नन्न को भी दंडवत प्रणाम कर लौट गया।

'पादकानुक'

अलमेलु मंगम्मा के द्वारा पद्मशाली जाति के लोग ही अपने पीहर के लोग हैं, की गवाही दिलाने से उन लोगों ने चिन्नन्न को भक्ति तथा कृतज्ञता से दस हजार वरहों को पाद 'कानुक' के रूप में समर्पित करते हुए एक दान शासन को तांबे के फलकों पर लिखवाकर दिया। उस से अलग चिन्नन्न के द्वारा किए जानेवाले धार्मिक कार्यक्रमों के लिए निधि के रूप में हर वर्ष एक एक बुनकर अपने एक एक करघे के लिए एक सोने के सिक्के के हिसाब से चिन्नन्न को चुकायेंगे, ऐसा प्रमाणसहित दान शासन पत्र लिख कर दिया। गया इसी को 'पाद कानुक शासन' कहा जाता है। यह दो तांबे के फलकों पर लिखा प्राप्त होता है।

पहला ११-१/२ इंच लंबा और ८ इंच चौडा, और दूसरा ११-१/२ लंबा, ८-१/१६ चौडा है। ये दोनों १/१६ मोटा है।

पहले पत्र के प्रथम पृष्ठ पर श्रीवेंकटेश्वर का रेखाचित्र है। दूसरे पृष्ठ पर शासन शुरु किया गया है। दूसरे पर प्रथम पृष्ठ में पहले कागज के शासन के बाद का विषय, दूसरे के दूसरे पृष्ठ के आधे भाग तक शासन और अलमेलु मंगा का रेखाचित्र है। उपर्युक्त घटना के चिह्न के रूप में उपर्युक्त दोनों तांबे के पत्र तिरुमल तिरुपति देवस्थान के म्यूजियम में सुरक्षित हैं।

अपने कुल गौरव की रक्षा करके माई के द्वारा गवाही दिलाने के बदले में पद्मशाली जाति के लोगों के द्वारा दी गयी दस हजार वराहों की गुरु दक्षिणा के साथ चिन्नन्न ने अपने भांडागार से और एक हजार वरहों को जोडा हैं। कुल बीस हजार वरहों से चिन्नन्न चंद्रगिरी की पूरब दिशा में स्थित ''आल्लगट्टु'' नामक एक पत्थर की खान को खरीदा। उसे दान के रूप में पद्मशाली जाति को दिया। इस का एक शासन भी लिखवाया।

उस खान के पत्थरों से कोई भी, कहीं भी मंदिर बनवायें उससे जो पुण्य प्राप्त होगा उस में आधा चिन्नन्न को, एक चौथाई भाग मंदिर बानानेवाले दाताओं को, बची एक चौथाई पुण्य सामूहिक रूप से पद्मशाली जाति के लोगों को प्राप्त होगा। ऐसा चिन्नन्न ने पाद - ''कानुक शासन'' में लिखवाया है।

श्रीवेंकटेश्वर की पटराणी अलमेलुमंगा से ताल्लपाक चिन्नन्न को बचपन में थन का दूध पिलाने के कारण श्रेष्ठ कवित्व की निपुणता प्राप्त हुई है। उस से बढकर श्रीवेंकटेश्वर ने भी चिन्नन्न को मकर कुंडल प्रदान किया, है। तिरुचानूर मंदिर के मुख मंटप में अर्चा मूर्ति के रूप में विराज मान अलमेलु मंगम्मा ने चिन्नन्न के बताने पर गवाही दी।

ताल्लपाक कवियों के चरितों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि अन्नमाचार्य को श्रीनिवास के वक्षःस्थल पर स्थित महालक्ष्मी 'व्यूह लक्ष्मी' ने पहाड से उतर कर 'मोकाल्ल पर्वत' के समीप दर्शन देकर थकान को दूर किया। स्वयं अन्नमय्या को स्वामी का प्रसाद खिलाकर और कवित्व की शक्ति को प्रदान किया। ताल्लपाक कवियों को आनुवंशिक रूप से एक ओर श्रीवेंकटेश्वर स्वामी और दूसरी ओर अलमेलु मंगम्मा दोनों ने एक दूसरे से होड कर अनुग्रह किया है।

ताल्लपाक कविगण अपने देवाधिदेव के अनुग्रह को संपूर्ण रूप से प्राप्त कर, उस अनुग्रह को तेलुगु भाषी सभी को दोनों हाथों से बाँटनेवाले महनीय हैं। सचमुच ही तेलुगु भाषी ताल्लापाक वंशजों के बहुत ऋणी हैं, यह कहने में कोई अतिशयोक्ति भी हीं है।

((((()))))

ताल्लपाक चिन्नन्न ताम्रशासन

पहले पत्र का - प्रथम पृष्ठ

ताल्लपाक चिन्नन्न ताम्रशासन

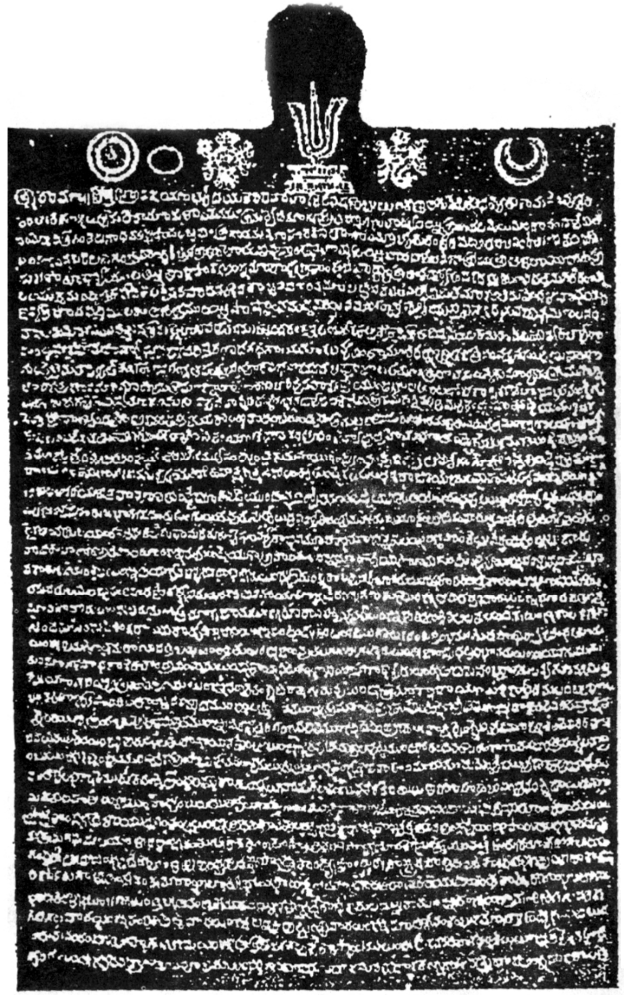

पहले पत्र का - दूसरे पृष्ठ

ताल्लपाक चिन्नन्न ताम्रशासन

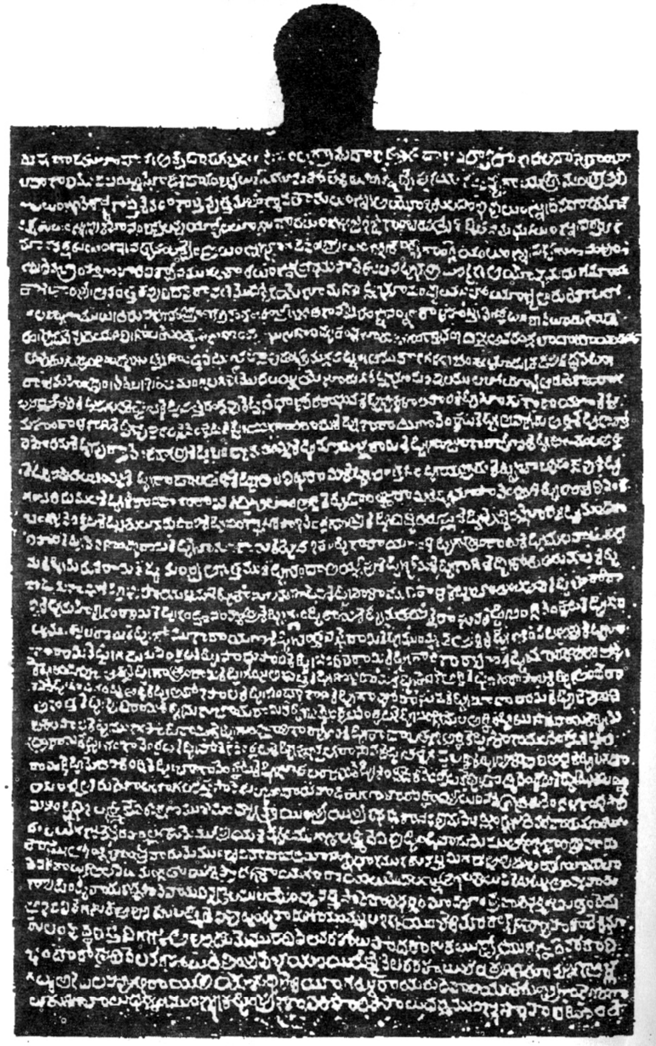

दूसरे पत्र का - प्रथम पृष्ठ

ताल्लपाक चिन्नन्न ताम्रशासन

दूसरे पत्र का - दूसरे पृष्ठ

तरिगोंड वेंगमांबा पर अनुग्रह करनेवाली ''व्यूह लक्ष्मी''

तिरुमल पहाड पर लगभग २५० वर्ष पहले तरिगोंड वेंगम्मा नामक एक भक्तिन रहा करती थी। वे श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की परम भक्तिन थी। निरंतर तुलसी की मालाएँ तथा फूल-मालाएँ स्वामी को समर्पित करती हुई उस स्वामी पर गीत गाती थीं। संकीर्तन भी गाया करती थी। उन का पूरा ध्यान सात पहाडों पर ही रहा। आनंदनिलय स्वामी पर ही रहता था। किसी से भी अनावश्यक बात नहीं करती थीं।

चित्तूर जिले के वायल्पाडु के समीप 'तरिगोंड' गाँव उन का अपना गाँव है। माता पिता कानाला क्रिष्णय्या और मंगम्मा हैं। कहा जाता है कि निस्संतान उन के माता-पिता ने तिरुमल की यात्रा की थी! संतान प्रदाता श्रीवेंकटेश्वर के अनुग्रह से उन दंपति को एक पुत्री पैदा हुई। वे उस का नाम वेंगटम्मा रखा। वेंकटम्मा नाम धीरे धीरे 'वेंगम्मा' हो गया। बचपन से ही वेंगम्मा नित्य भक्ति और भजनों में लीन रहती थीं। घंटों ध्यान में रहा करती थी। सब सोचने लगे कि वेंगम्मा भक्ति में पागल हो गयी है और किसी भक्त ने उस पर जादू किया है। विवाह से शायद वेंगम्मा ठीक हो जाएगी समझकर उन के माता-पिता ने विवाह के प्रयत्न करना शुरु किया। ''मेरा किसी दूसरे से विवाह क्या है? साक्षात श्रीवेंकटेश्वर ही मेरे पति हैं।'' वह कहने लगी। लगभग ऐसे समय ही उस के गांव के समीपवर्ती नारगुंट पालेम गाँव के इंजेटि वेंकटाचलपति के साथ वेंगम्मा का विवाह कराया गया।

विवाह के बाद वेंगम्मा के ससुराल जाने के पहले ही दुर्भाग्य से वेंकटाचलपति स्वर्गस्त हो गया। किंतु वेंगम्मा, सुहागिन की तरह फूल, चूडियाँ आदि पहनने लगी थीं। किसी के पूछने पर वह जवाब देती थी कि मेरा पति श्रीवेंकटेश्वर हैं। ऐसे समय में रूपावतार सुब्रह्मण्यम के पास गुरोपदेश पानेवाली वेंकम्मा को सोने में सुहागा जैसा हो गया। तब से और भी साधना करती हुई निरंतर श्री वेंकटेश्वर के ध्यान में रहा करती थी। पतिहीना वेंगम्मा का फूल-चूडियाँ आदि के साथ रहना, बडी योगिनी की तरह निरंतर ध्यान करती रहना गाँव के लोगों को अच्छा नहीं लगा। उन्होंने वेंकम्मा के परिवारवालों को नाना यातनाएँ दीं। ताने देकर उन को सताया। इन यातनाओं को सहने में असमर्थ वेंकम्मा अपने गाँव को तथा माता-पिता को छोडकर तिरुमल पर पहुँच गयी।

वहाँ नित्य स्वामी के दर्शन और सेवा - पूजा करते हुए समय काटने लगी थी। तिरुमल पहाड पर पहुँचने के कुछ दिनों तक वेंकम्मा ने निराश्रिता, वासहीन होकर अनेक बाधाओं को झेला है। अर्चकों के द्वारा दिए जानेवाले प्रसाद से वह अपना पेट भर लेती थी। मंदिर के मंटपों में और वृक्षों के नीचे समय काटती थी। इतने कष्टों को झेलने के बावजूद भी किसी को वह अपने कष्टों के बारे में नहीं बताती थी। फिर भी अपनी भक्ति में कोई कमी आने नहीं देती थी।

कहा जाता है कि उस की भक्ति की तीव्रता से प्रसन्न श्रीनिवास वेंगम्मा से बात करते थे! वेंगमांबा के द्वारा गाये गीतों को सुनकर श्रीवेंकटेश्वर परवश होते थे। कुछ संदर्भों में वेंगमांबा गीत गाते समय स्वयं श्रीवेंकटेश्वर नाचते हुए परवश होते थे। वेंगमांबा को हमेशा श्री

वेंकटेश्वर पर ही ध्यान था। श्री वेंकटेश्वर स्वामी को भी वेंगमांबा प्रिय थी। उस के संकीर्तन सुनने के लिए नित्य इंतजार करते आतुर रहा करते थे। उस के द्वारा लाये गए फूल या फल अत्यंत प्रीति से स्वीकार करते थे। लेकिन तिरुमल में स्थायी आवास नहीं होने से वेंगम्मा धूप, बारिस और सर्दी आदि प्राकृतिक कष्टों का शिकार होती थी। भक्ति की तन्मयता में उन सभी कष्टों को सहती थी। ऐसी वेंगमांबा के मन में श्री वेंकटेश्वर को लेकर एक इच्छा जागी। एक दिन रात को आनंदनिलय स्वामी के आंगन में खडी होकर वेंगमांबा ने प्रार्थन की -

''स्वामी! सात पहाडों के वेंकटरमण! मेरा आप को छोडकर कोई दूसरा आप्त बंधु नहीं है। तुम को छोडकर और किसी को मैं अपने कष्टों के बारे में बता नहीं सकती हूँ। इसलिए स्वामी! इन पहाडों में मेरे लिए स्थायी आवास नहीं है। मंदिर में, मंटपों में, पेडों के नीचे समय काट रही हूँ। एक ओर सर्दी की पीडा है। दूसरी ओर बारिस है। एक और तरफ कीटकों से यातनाएँ हैं। इतने कष्टों के साथ आप का ध्यान कैसे कर सकती हूँ। कैसे आप का तप कर सकती हूँ। मेरा मन व्याकुल हो रहा है। स्थिरता एवं शांति न होने से एक क्षण भी आप का ध्यान नहीं कर पा रही हूँ। इतनी बाधाओं के होते हुए भी, इतनी समस्याओं के होते हुए भी आप को छोडकर मैं कहीं भी नहीं जाना चाहती और जा भी नहीं सकती हूँ। स्वामी! अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक! इन सात पहाडों पर अधिकार रखनेवाले पहाडों के देव! मुझे शाश्वत रूप से, अपने जीवन भर, इसी पहाड पर आप की सन्निधि में रहने का अनुग्रह करो स्वामी! मुझे एक स्थाई आवास, उस के साथ साथ खाने की सुविधा का प्रबंध

करवाइए स्वामी! इस से बढकर आप से मैं कुछ भी नहीं माँगूगी। आप की सन्निधि में ही अपने जीवन को काटूँगी। हे देव! मेरी इस छोटी सी इच्छा की पूर्ति कीजिए! मनौतियों को पूरा करनेवाले स्वामी!'' कहती हुई अनेक रूपों में वेंगम्मा ने आँसुओं के साथ आर्ति बनकर आर्द्र कंठ से विनति की। याचना करती हुई प्रार्थना की। गहरी नींद में चली गयी।

बस! एक दिव्य स्वप्न। उस सपने में पहाडों के देव श्रीवेंकटेश्वर ने दर्शन दिए। तरिगोंड वेंगमांबा ने हाथ जोडे। आँखें खोलकर श्रीनिवास की दिव्य मंगल विग्रहमूर्ति के चरणों से लेकर सर तक अनेक बार और सर से लेकर चरगों तक अनेक बार निहारा।

नूपुर, घुँघुरों से शोभित सोने के पैर। चमकदार कांति से प्रकाशित होनेवाली सोने की धोती, नीचे की तरफ लटकनेवाला नंदक खड्ग! कटि पर बांधा धागा, दाएँ का वरद हस्त, बाएँ का कटि हस्त, ऊपर शंख-चक्र, विशाल हृदय पर चमकनेवाला मणि-कौस्तुभ! गले में कंठ हार! वक्षःस्थल पर विनूत्न कांति से प्रकाशित होनेवाली वक्षःस्थल महालक्ष्मी! व्यूह लक्ष्मी!, भुज कीर्तियाँ, ललाट पर सफेद कर्पूर तिलक! सर पर नवरत्नों से जटित हीरों का किरीट! मंद मुस्कान से दर्शन देने वाले श्रीवेंकटेश्वर की सम्मोहित करनेवाली दिव्य मूर्ति का तरिगोंड वेंगमांबा ने दर्शन किया। भक्त वत्सल श्रीवेंकटेश्वर ने तरिगोंड वेंगमांबा को आशीर्वाद देकर अनुग्रह करते हुए कहा -

''माई! वेंगम्मा! तुम ने कहा कि तुम इस क्षेत्र में आजीवन रहना चाहती हो। रहने के लिए एक आवास माँगा। थोडे खाने का प्रबंध भी चाहती हो। यह तो ठीक है। बहुत अच्छा है। तुम इस महिमावान

वेंकटाचल क्षेत्र में रहना चाहती हो तो मुझे कोई एतराज नहीं है। तुम अगर इस क्षेत्र में रहोगी तो मुझे आनंद ही होगा। लेकिन एक बात!

मैं अखिलांड कोटि ब्रह्मांड नायक हो सकता हूँ। शायद हूँ। ये सातों पहाड मेरे ही हैं। इस में कोई संदेह नहीं है। लेकिन श्री महाराज्ञी! मेरे हृदय सिंहसानेश्वरी, विश्वमाता श्रीमहालक्ष्मी मेरे वक्षःस्थल में 'व्यूह लक्ष्मी' के रूप में सभी भक्तों को भर पूर दर्शन दे रही है। वह मेरी पटराणी है। उससे भी बढकर इस पूर चराचर विश्व के लिए भी वह जगन्माता है! उस के होने से ही मैं श्रीनिवास बनकर संपूर्ण कलाओं के साथ विराजित हो रहा हूँ। इस कलियुग में श्रीमहालक्ष्मी के संपूर्ण सहयोग से ही भक्त संरक्षण करते हुए ''कलौ वेंकटनायकः'' सार्थक नाम प्राप्त करके ''मनौतियों के वरदान स्वामी'' वाली बडी उपाधि प्राप्त की है। इसलिए हे वेंगम्मा! तुम मेरे वक्षःस्थल पर बसी हुई मेरे हृदय लक्ष्मी 'व्यूहलक्ष्मी' को लेकर दीक्षा से उपसाना करो। तद्वारा उस के संपूर्ण अनुग्रह प्राप्त करो। साथ ही अपनी इच्छा की पूर्ति कर लो।'' श्री वेंकटेश्वर स्वामी अदृश्य हो गए।

सपना टूट गया। तुरंत ही जागनेवाली वेंकम्मा अत्यंत आश्चर्य चकित हो गयी। अपने अद्भुत सपने को लेकर वह सकपका गयी। स्वामी के आदेश के अनुसार श्रीनिवास के वक्षःस्थल की महालक्ष्मी की उपासना की वेंगमांबा ने।

समस्तसंपत्सु विराजमाना!
समस्ततेजस्तय भासमाना!
विष्णुप्रिये त्वं भव दीप्यमाना!
वाग्देवता में नयने प्रसन्ना!!

विष्णु भगवान के लिए अत्यंत प्रिय हे महालक्ष्मी! व्यूहलक्ष्मी! तुम समस्त चराचर संपदाओं में विराजित होती रहती हो न! सभी तेजोमय प्रकाशवान वस्तुओं में तुम विराजित रहती हो न! वाकदेवता के रूप में विराजित होनेवाली हे जगन्माता! मेरे प्रति अत्यंत प्रसन्न होकर मेरे सामने मंगल देवता बनकर प्रत्यक्ष हो जाओ।

सर्वार्थदा सर्वजगत्प्रसूतिः
सर्वेश्वरी सर्वभयापहंत्री!
गर्वोन्नता त्वं सुमुखी भव श्रीः!
हिरण्मयी मे नयने प्रसन्ना!!

देवी! श्री वेंकटेश की पटरानी! तुम समस्त इच्छाओं की पूर्ति करती हो। सर्व चराचर जगत के लिए कारणभूत तुम ही हो! सर्व भयों को दूर करनेवाली सर्वेश्वरी भी तुम ही हो! हिरण्य स्वरूपिणी के रूप में गंभीर, गंभीर दिखाई पडनेवाली हे व्यूह लक्ष्मी! प्रसन्न होकर मेरे सामने प्रत्यक्ष हो जाओ माई!''

तरिगोंड वेंगमांबा ने स्तुति पूर्वक प्रार्थना की।

''हे श्रीमहालक्ष्मी! तुम्हारे एक कटाक्ष के लिए साक्षात पहाडों के देव श्री वेंकटेश्वर भी सदा आतुर रहते हैं। तुम्हारे दर्शन के लिए वे अत्यंत व्याकुल रहते हैं। एक दिन नहीं, दो दिन नहीं, लगभग दस वर्षों तक कोल्हापुर क्षेत्र में तुम्हारे लिए तप किया। तदुपरांत लगभग स्वामी बारह वर्षों तक पद्मसरोवर के समीप तुम्हारे लिए ध्यान किया। आखिर तुम्हारे अनुग्रह को प्राप्त किया। पद्मसरोवर में सहस्रदलों के सुवर्ण कमल में

पद्मावती के रूप में आविर्भूत होकर तुम ने श्रीवेंकटेश्वर के वक्षःस्थल को शोभित किया। तब से तुम्हारी दया से वे स्वामी सर्वसंपदाओं से परिपूर्ण होकर ''श्रीनिवास'' बनकर सर्व लोकों के द्वारा कीर्तन पा रहे हैं। समृद्धि के साथ अपने भक्तों को सर्व संपदाओं को प्रदान कर रहे हैं। साक्षात श्रीस्वामी ही आप के अनुग्रह के लिए आतुर है, ऐसे पर सामान्य मनुष्य हमारा क्या है? इससे बढकर तुम्हारी याचना करने के लिए स्वयं श्रीनिवास ने ही आदेश दिया। इस वेंकटाचल क्षेत्र में तुम ही मुख्य हो। तुम्हारी प्रमुखता का स्वयं श्रीवेंकटेश्वर ही समस्त लोकों में प्रचार कर रहे हैं। तुम साक्षात स्वामी के हृदय पर ही विराजमान हो। साथ ही भक्तजनों के अपराध, गलतियों को पहले तुम पूरी दया के साथ सुनती हो, तदुपरांत स्वामी के द्वारा क्षमा करवानेवाली करुणा स्वरूपिणी और दया स्वरूपिणी तुम ही हो। इस क्षेत्र में तुम्हारी प्राधान्यता अनन्य है। बाहर लोगों के लिए आप दो अलग लगते हैं। दोनों अभिन्न ही नहीं बल्कि एक ही हैं। निरंतर भक्तों के लिए इंतजार करते हुए भक्तों की रक्षा करने में, उन्हें वरदान प्रदान करने में भी दोनों प्रतिबद्ध हैं। इसलिए स्वामी को ''कलौ वेंकटनायकः'' सार्थक उपाधि प्राप्त है। इस पूरे ब्रह्मांड में कोई दूसरा इस कलियुग में मशाल लेकर ढूंढने पर भी नहीं मिलेगा। ऐसे आप की कितनी प्रशंसा किस रूप में करूँ? समझ में नहीं आता है? इसलिए हे माई! व्यूह लक्ष्मी! मेरे प्रति परिपूर्ण दया दिखाती हुई मेरी मनौती को पूरा कीजिए माई! जीवन भर मुझे वेंकटाचल क्षेत्र में स्थिर आवास का अनुग्रह कीजिए माई!'' तरिगोड वेंगमांबा ने श्रीनिवास के आदेश के अनुसार अपनी शैली में एक संकीर्तन का गायन किया। श्रीवेंकटेश्वर के वक्षःस्थल पर बसी अलमेलुमंगा का वह कीर्तन -

अम्मा! ने निंदुंडुदु नटवे?
श्री अल्मेल्मंगा! नन्नादरिंचे वटवे ।। पल्लवि।।

अदि येमो कानि, नी विभुडु निन्नडगि
नन्निंदुंडुमनि चेप्पिनाडू
सदय दृष्टिनि नन्नु चूडू
सद्गति गोरुचु ने निंदुंडे निपुडु ।।अम्मा।।

ए देशमुलु तिरुगलेनू, खंड -
वादुलतो पेक्कु वादिंचलेनू
मेदिनींद्रुल पोगडलेनू, धनमु
मेंडुगा गूर्चि दानमु चेयलेनू ।।अम्मा।।

तनुवू ने नलइंचलेनू, कष्टमुल
कोर्वजाला नेनेमि चोयुदुनू?
जन संघमुन निलुवलेनू, ई
स्थलमुन मी महिमा सलुपु चुंडेदनू ।।अम्मा।।

तरिगोंड नारसिंहुडइना शेषाच -
लेंद्रुनि दापु जेरुदुना?
करुणिंचि सेलविम्मा चाला मी
परम पदंबुल भाविंचुदाना ।।अम्मा।।

(इस संकीर्तन को स्वयं तरिगोंड वेंगमांबा ने आशु रूप में गाया है)

आनंद निलय के देव श्रीवेंकटेश्वर के आदेश के अनुसार अलमेलु मंगा की अनेक रूपों में उपासना करती हुई वेंगमांबा ने प्रार्थना की।

अलमेलु मंगम्मा ने वेंगमांबा पर अनुग्रह वर्षा बरसायी। 'तथास्तु! तथास्तु!!' कहा। दोनों हाथों आशीर्वाद दिया। दर्शन देकर तृप्त किया।

आनंद निलय देव और उन के वक्षःस्थलवासिनी अलमेलुमंगम्मा दोनों अलग अलग नहीं हैं। दोनों एक ही हैं न! इस से बढकर भक्तों की रक्षा करने में, अनुग्रह करने में स्वामी से बढकर माई और माई से बढकर स्वामी होड करते रहते हैं। एक एक बार तो स्वयं माई भक्तों की वकालत कर स्वामी की ओर से स्वीकृति दिलाती थी। तद्वारा उन पर अनुग्रह करती थी। इस तरह स्वयं जगन्माता स्वरूप की रक्षा कर लेती थी। दोनों एक होकर योजना बनाकर भक्तों की मनौतियों को पूर्ण रूप से संपन्न करके आनंद प्रदान करते रहते हैं।

अलमेलुमंगा और श्रीवेंकटेश्वर दोनों ने वेंगम्मा की प्रार्थना सुनी है। उस की इच्छा को पूरा करने का निर्णय किया। तिरुमल क्षेत्र में उस के लिए स्थायी रूप से आवास का प्रबंध करना चाहा। उस भक्तिन को अनिश्चित आश्रय की दुर्गति से दूर करना चाहा। पल पल पेड के नीचे समय काटने की दीन स्थिति से उसे मुक्त करना चाहा। निर्णय के साथ अमल करना भी चाहा।

श्रीवेंकटेश्वर स्वामी और उन के वक्षःस्थलवासिनी व्यूहलक्ष्मी माई दोनों ने अपने अंतरंग भक्त 'आत्माराम दास' को सपने में दर्शन दिए। 'तिरुमल क्षेत्र में घूमनेवाली वेंगमांबा हमारी अंतरंग भक्तिन है। उसे यहीं पर स्थायी आवास के साथ साथ खाने का प्रबंध करो।' ऐसा आदेश देकर अदृश्य हो गए। श्रीस्वामी के साथ शतरंज खेलनेवाले हथीराम बावाजी की शिष्य परंपरा का है यह आत्माराम दास। सन 1745-50 समय

आत्माराम दास हथीराम बावाजी के मठ के अधिपति तथा तिरुमल क्षेत्र के प्रमुख व्यक्ति के रूप में रहा करते थे।

बालाजी के आदेश से आश्चर्य चकित और प्रसन्न होकर आत्माराम दास ने वेंगमांबा के पास जाकर ''माई! भगवान श्रीनिवास के आदेश के अनुसार इस तिरुमल पहाड पर तुम्हें एक स्थायी आवास प्रबंधन करने का निर्णय किया। कृपया मेरे द्वारा प्रबंध की जानेवाली सुविधा स्वीकार कर मुझे आनंद प्रदान कीजिए। तद्वारा भक्तवरद श्रीवेंकटेश्वर स्वामी की सेवा करते हुए भक्तों एवं यात्रियों का उद्धार कीजिए।'' कहते हुए अत्यंत विनय के साथ प्रार्थना की।

उन्होंने तिरुमल में श्रीनिवास के मंदिर के महाप्रदिक्षण मार्ग में, पूरब माडा वीथी और उत्तर माडा वीथी के संगम पर ईशान कोने में एक कुटीर बनाकर दिया। इतना ही नहीं उस दिन से श्रीनिवास के मंदिर की रसोई और प्रसादों की तैयारी की निगरानी करनेवाली वकुल माता के नाम से एक सेर चावल, उस के लिए आवश्यक अन्य रसोई सामान हर दिन वेंगमांबा की कुटीर पर भेजने का भी आत्माराम दास ने प्रबंध किया। श्रीनिवास के मंदिर पर महंतों के शासनकाल १८४३-१९३३ के लगभग सौ वर्ष पूर्व की यह घटना है। उस समय के महंत परमभक्तों के रूप में तिरुमल यात्रीयों की सेवा करते हुए उस क्षेत्र में प्रधानों के रूप में मुख्य भूमिका निभाने के कारण उस समय के श्रीनिवास के मंदिर के अधिकारी भी आत्मराम दास के द्वारा किया गया इस प्रबंधन को स्वीकार कर नित्य वेंगमांबा के पास रसद मंदिर के भांडार से भेजा करते थे।

इस प्रकार तरिगोंड वेंगमांबा ने अपनी प्रार्थना सुनकर अनुग्रह करनेवाले अलमेलु मंगा और श्रीवेंकटेश्वर भगवान की उपासना-पूजा में अपने जीवन को पूर्ण बनाया। आखिर वहीं पर स्वामी की सन्निधि में समाधि प्राप्त की है। हर दिन प्रातःकाल तुलसी मालाओं का समर्पण, दोपहर को कविता गोष्ठि, संध्या को कपूर निराजन, रात को एकांत सेवा के अनंतर तिरुमलेश के साथ सत्संग या ध्यान आदि कार्यक्रमों में भागलेना दिनचर्या थी वेंगमांबा की। इन सब से बढकर श्रीस्वामी ने अपनी परम भक्तिन वेंगमांबा से माँग कर नित्य कैंकर्य ''मुत्याल हारती'' (मोतियों की आरती) नीराजन पाया है।

तुलसी के पत्ते, फूलों के कैंकर्य के लिए वेंगमांबा ने अपने आवास के पास ही एक बगीचे को पाला है। निरंतर उसी बगीचे में ध्यान करती या रचनाएँ करती समय काटती थी। कहा जाता है कि रात की एकांत सेवा के अनंतर श्रीनिवास वेंगमांबा के पास आया करते थे और रात भर उन्हीं से बात करते रहते थे। उन के द्वारा बतायी जानेवाली सारी खबरों को सुनकर रात का समय काटते रहते थे,

वेंगमाबा सिर्फ भक्तिन नहीं थी बल्कि कवइत्री भी थी। तरिगोंड नृसिंह शतक, नारसिंह विलास कथा, राजयोग सारामृत, बालकृष्ण नाटक, श्रीकृष्ण मंजरी, रुक्मिणी नाटक, गोपी नाटक, अष्टांग योग सार, मुक्तिकांता विलास, वेंकटाचल महात्म्यम्, द्विपद भागवतम, वाषिष्ट रामायणम्, रमा परिणयमु, जलक्रीडा विलासमु, विष्णु पारिजातमु, शिव नाटकमु आदि अनेक रचनाएँ उन की कलम से निकली हैं। इन के अतिरिक्त उन्होंने आशु रूप में बडी संख्या में कीर्तन और गीतों को गाया है। वेंगमांबा कोई भी रचना करती है या गीत गाती है तो उस में तिरुमल

वेंकटेश्वर स्वामी और तरिगोंड नारसिंह स्वामी की अभेदकता बतलाती। वे दोनों एक ही हैं, कहती प्रचार भी करती थी।

जीवनपर्यंत योगिनी के रूप में, तपस्विनी के रूप में, परम भक्तिन के रूप में नाम पानेवाली वेंगमांबा ने तिरुमल क्षेत्र में ही सन् १८१७ में श्रावण शुद्ध नवमि के दिन सजीव समाधि पायी। उस दिन से हर दिन रात को एकांत सेवा के अनंतर वेंगमांबा समाधि से मंदिर तक सुरंग मार्ग से जाकर श्रीवेंकटेश्वर भगवान को कपूर आरती समर्पित करती थी, ऐसा प्रचलन है! आज भी तिरुमल क्षेत्र में श्री वराह मंदिर की उत्तर दिशा में समीप ही तरिगोंड वेंगमांबा की समाधि को देख सकते हैं।

उस परम भक्तिन के द्वारा तिरुमलेश की माँग पर संपन्न सेवा ''मुत्याल हारती'' सेवा है। आज भी तिरुमल क्षेत्र की एकांत सेवा में सब से अंतिम सेवा के रूप में अमल की जानेवाली कपूर निराजन सेवा ''मुत्याल हारती'' है।

मुत्याल हारती (मोतियों की हारती)

तिरुमल क्षेत्र में प्रति दिन रात को अंत में श्रीवेंकटेश्वर भगवान की एकांत सेवा होती है। एकांत सेवा का मतलब शयन सेवा है। श्री स्वामी के गर्भालय के सामने शयन मंटप में एकांत सेवा के लिए चांदी के जंजीरों से लटकायी सोने की नवार से बनायी पलंग पर ''मनवालप्पेरुमाल'' (नित्य नूतन वर) नाम से पुकारे जानेवाले भोग श्रीनिवास मूर्ति को सुलाते हैं। उस समय आनंद निलय मंदिर में श्री स्वामी की मूल मूर्ति को सब से अंत में ''मुत्याल हारती'' कपूर निराजन समर्पित किया जाता है।

तदुपरांत इस आरती को कुलशेखरपडि देहलीज के बाहर ले आकर पलंग पर सोये हुए भोग श्रीनिवास मूर्ति को दी जाती है। उस मंगल आरती के प्रकाश में श्रीस्वामी चांदी के जंजीरों से लटकायी सुंदर पलंग पर झूमते समय रायल मंटप के बीचों बीच बैठकर श्रीस्वामी के सामने तुंबुर बजाते एक ताल्लपाक वंशज ''जो अच्युतानंद जो जो मुकुंदा! रावे परमानंद राम गोविंदा!!'' लोरी गीत गाते हैं।

एक तरफ तरिगोंड वेंगमांबा आरती को स्वीकार करते हुए और दूसरी ओर ताल्लपाक अन्नमय्या के लोरी-गीत को सुनते हुए श्रीनिवास के योगनिद्रा के लिए उपक्रम करनेवाले मनोहर दृश्य को, श्री वेंकटेश्वर भगवान की दिव्य कांति को अवश्य दर्शन करना चाहिए। उस का वर्णन करने में किसी भी भाषा के शब्द अपर्याप्त हैं। शब्द भी हैं नहीं।

तिरुमल क्षेत्र में आज भी सब से अंत में आनंद निलय में श्री वेंकटेश्वर स्वामी को, उन के वक्षःस्थल पर स्थित व्यूह लक्ष्मी के रूप में सुंदर ढंग से बसी अलमेलु मंगम्मा को मातृश्री तरिगोंड वेंगमांबा की 'मुत्याल हारती' समर्पित की जाती है। इस कपूर निराजन के द्वारा श्रीनिवास प्रत्येक दिन वेंगमांबा का श्रीवेंकटेश्वर स्वयं स्मरण करते हैं और भक्तों के द्वारा स्मरण कराते हैं। भक्तों को आनंदसागर में डुबोते हैं। परिपूर्ण रूप से अनुग्रह करते हैं।

तरिगोंड वेंगमांबा ने आरती गीत गाती हुई नीराजन देने के संदर्भ को स्मरण कहानेवाला गीत गाया था। उस गीत से हम मंगल नीराजन समर्पित करेंगे।

मुत्याल हारती गीत

श्री पन्नगाद्रि वर शिखराग्र वासुनकु
पापांधकार घन भास्करुनकू
आ परमात्मुनकु नित्यानपाइनियैन
मा पालि अलमेलु मंगम्मकू

जय मंगलमु नित्य जय मंगलम
जय मंगलमु नित्य जय मंगलम ।।जय मंगलम्।।

शरणन्न दासुलकु वरमित्तुननि बिरुदु
धरिइंचि युन्न परदैवमुनकू
मरुवल दी बिरुदु निरतमनि पतिनि
ऐमरनिय्य नलमेलु मंगम्मकू

जय मंगलम् नित्य शुभमंगलम्
जय मंगलम् नित्य शुभमंगलम् ।।जय मंगलम्।।

आनंद निलय मंदनिशंबु वसिइंचि
दीनुलनु रक्षिंचु देवुनकुनू
कानुकल नोनगूर्चि घनमुगा विभुनि स-
न्मानिंचु अलमेलु मंगम्मकू ।।जय मंगलम्।।

परमोसग ना वंतु नरुलकनि वैकुंठ-
मरचेत चूपु जगदात्मुनकुनू
सिरु लोसग तनवंतु सिद्धमनि नायकुनि
उरमुपै कोलुवुन्न शरधि सुतकू ।। जय मंगलम्।।

तेलिवितो मुड्पु लिटु तेम्मु तेम्मनि परुष
नलिकिंचि कै कोनेडि अच्युतुनकू
एलमि पाकंबु जेइंचि अंदरकन्न
मलय केपुडोसगे महामातकू ।।जय मंगलम्।।

मरियु चित्रविचित्र मंटपावलुलकुनु
तिरुवीधुलकु, दिव्य तीर्थमुलकू
परग घन गोपुर प्राकारततुलकुनु,
चिरमुलै तगु कनक शिखरमुलकू ।। जय मंगलम्।।

तरचैन धर्मसत्रमुलकुनु, फल पुष्प
भरित शृंगारवन पंक्तुलकुनू,
मुरुवोप्पु उग्राणमुलकु, बोक्कसमुलकु
सरसंबुलगु पाकशाललकुनू ।। जय मंगलम्।।

अहि वैरि मुख्य वाहनमुलकु, गोडुगुलकु
रहि नोप्प मकरतोरणमुलकुनू
बहुविध ध्वजमुलकु, पटुवाद्यवितततुलकु
विहितसत्कल्याणवेदिकलकू ।। जय मंगलम्।।

धर चक्र मुख्य साधनमुलकु, मणिमया -
भरण दिव्यांबर प्रततुलकुनू,
करचरण मुख्यांग गण सहितमै,शुभा-
करमैन दिव्य मंगलमूर्तिकी ।। जय मंगलम्।।

कलित सुज्ञानादि कल्याण गुणमुलकु
बल मोप्प नमित प्रभावमुनकू,

वलगोनिन सकल परिवार देवतलकुनु,
चेलगि पनुलोनरिंचु सेवकुलकू ।। जय मंगलम्।।

अलरगा ब्रह्मोत्सवादुलै संततमु
वलनोप्प नित्योत्सवंबुलकुनू
पोलुपोंदु विश्वप्रभुत्व मूलंबुनकु
नलुवोंदु वर विमानंबुलकुनू ।। जय मंगलम्।।

अरय तरिगोंड नरहरि यगुचु नंदरिकि
वरमु लोसगे श्रीनिवासुनकुनू
मुरियुचुनु विश्वतोमुखुनिट्लु भरिइंचि
सिरुल वेलयुचुनुंडु शेषाद्रिकी ।। जय मंगलम्।।

जय मंगलं नित्य शुभमंगलं
जय मंगलं नित्य शुभमंगलम् ।। जय मंगलम्।।

((((((()))))))

अलमेलुमंगा का उत्सव वैभव

दिव्य क्षेत्र तिरुचानूर में पवित्र सरोवर के पुण्य जलों से सोने के सहस्रदल पद्म में आविर्भूत अलमेलु मंगम्मा के लिए पद्मावती नाम के साथ साथ ''स्वतंत्र वीर लक्ष्मी'' नाम भी प्रचलित है। जिस रूप में तिरुमल स्वामी को वैखानसागम शास्त्र पद्धति के अनुसार स्वतंत्र रूप से षट्कालार्चन, उत्सव, शोभा यात्राएँ होती हैं, उसी प्रकार तिरुचनानूर में श्रीमहाराज्ञी अलमेलु मंगम्मा को पांचरात्रागम शास्त्र रीति में ''स्वतंत्र वीर लक्ष्माराधना'' नाम से नित्याराधनाएँ, उत्सव, शोभायात्राएँ महा वैभव पूर्ण ढंग से संपन्न होती हैं। श्रीनिवास की पटरानी पद्मावती को तिरुमलेश की तरह स्वतंत्र रूप से की जानेवाली सेवाओं के बारे में संक्षिप्त जानकारी प्राप्त करेंगे।

नित्योत्सव :

प्रत्येक दिन नियमित रूप से होनेवाली सेवाओं को नित्योत्सव कहते हैं। प्रति दिन प्रातःकाल सुप्रभात सेवा से प्रारंभ होकर क्रम से श्री पद्मावती माई की मूल मूर्ति को सहस्रनामार्चन के बाद निवेदन संपन्न होता है। ''पद्मावती परिणयमु'' नाम से नित्य कल्याणोत्सव, प्रति दिन संध्या के समय डोलोत्सव (झूले में बिठाकर झुलाना) होता है। रात को ''एकांत सेवा'' मंदिर में की जाती हैं। सर्वदर्शन के समय में भक्तों को माई की मूलमूर्ति के 'कुंकुमार्चन' दर्शन करवाते हैं।

वारोत्सव (सप्ताह में किए जानेवाले) :

सप्ताह में एक दिन विशेष उत्सव नियमित रूप से मनाया जाता है। इन सेवाओं में भक्त निर्णीत अर्जित शुल्क देकर भाग ले सकते हैं। सोमवार

को अष्टदल पाद पद्मराधना, गुरु वार को तिरुप्पावडा (अन्नकुटोत्सव), शुक्रवार को माई की मूल मूर्ति को अभिषेक किये जाते हैं। प्रति शुक्रवार को कल्याणोत्सव से पहले कल्याण मंटप में ''लक्ष्मी पूजा'' की जाती है। नित्य कल्याण के अनंतर माई के मंदिर की दक्षिण दिशा में स्थित 'शक्रवार बाग' में हल्दी, चंदन आदि द्रव्यों से अभिषेक किया जाता है। इस अभिषेक का सभी भक्त दर्शन कर सकते हैं। वहाँ से 'आस्थान मंटप' में ऊँजलसेवा के बाद प्रति शुक्रवार को शोभायात्रा के रूप में ग्रामोत्सव किया जाता है। प्रत्येक शनिवार प्रातः ६-३० बजे पुष्पांजली सेवा मूल मूर्ति की की जाती है।

नक्षत्रोत्सव :

हर महीने उत्तराषाढ, एकादशी दिनों में माई की उत्सव मूर्ति को एकांत में अभिषेक किया जाता है।

वार्षिकोत्सव :

प्रति वर्ष उगादि के दिन वार्षिक उत्सव प्रारंभ होते हैं। मंदिर के मुखमंटप में 'उगादि आस्थानं' के दिन पंचांग श्रवण किया जाता है।

वैशाख मास की पौर्णमी को तीन दिनों पर्थन्त माई के वसंतोत्सव (नौका विहार उत्सव), पौर्णमी के दिन स्वर्ण रथोत्सव संपन्न किये जाते हैं। जेष्ठमास पौर्णमी से पाँच दिनों पर्थन तेप्पोत्सव (प्लवोत्सव) संपन्न होते हैं। पहलेवाले दिन (एकदाशी के दिन), श्री कृष्ण स्वामी का, दूसरे दिन, (द्वादशी के दिन), श्री सुंदरराजु स्वामी का और अंतिम तीन दिन पद्मावती माई का पद्म पुष्करिणी में तेप्पोत्सव या नौकाविहार होते हैं।

हर वर्ष भाद्रपद पौर्णमी को तीन दिन तर्थन्त पवित्रोत्सव मनाये जाते हैं। इसी तरह कार्तिक शुद्ध पंचमी के दिन तक संपन्न होने के रूप में दस दिनों पर्यन्त ब्रह्मोत्सव वैभव चलते हैं। प्रति दिन प्रातःकाल और संध्या को दोनों सत्रों में वाहन सेवाएँ होती हैं। ब्रह्मोत्सव के आरंभ होने के पहले दिन पद्मावती माई की लक्ष-कुंकुमार्चन सेवा की जाती है।

प्रत्येक वर्ष पुष्य मास में, तमिल तै मास में, प्रति शुक्रवार को विशेष रूप से माई की पूजाएँ होती हैं। सुहागिन स्त्रियों को हल्दी-धागों (तोरालु) को प्रसाद के रूप में बाँटा जाता है।

श्रीनिवास भगवान की पटराणी पद्मावती के बर्ष भर वैभवपूर्ण ढंग से अनेक उत्सवों के होने से मंदिर में निरंतर अत्यंत कोलाहल रहता है।

तिरुमल व्यूहलक्ष्मी :

तिरुमल क्षेत्र में तिरुमलेश के वक्षःस्थल में ''व्यूह लक्ष्मी'' के रूप में विराजित अलमेलु मंगम्मा की भी विशेष पूजाएँ और निवेदन होते हैं।

तिरुमलेश की मूल विराटमूर्ति की जब कोई भी सेवा की जाती है, किसी भी प्रकार के अर्चन, निवेदन होते हैं, उन के तुरंत बाद व्यूह लक्ष्मी को भी किया जाता है। प्रति दिन श्रीनिवास के सहस्रनामार्चन या अष्टोत्तर शतनामार्चन संपन्न होते ही ''व्यूह लक्ष्मी'' को ''चतुर्विंशति नामावली'' (२४ नामों से) अर्चन किया जाता है। स्वामी को जब भी निवेदन किया जाता है माई के लिए भी निवेदन किया जाता है। विशेष रूप से शुक्रवार के दिन स्वामी के अभिषेक होने के तुरंत बाद वक्षस्थल व्यूहलक्ष्मी का हल्दी का अभिषेक नेत्र पर्व रूप में किया जाता है। प्रति वर्ष पंचमी तीर्थ के दिन व्यूहलक्ष्मी को समर्पित हल्दी कुंकुम को

तिरुचानूर की पद्मावती माई के लिए सागुन (सारे) के रूप में भेज दिया जाता है।

नारायण वन :

श्रीनिवास ने पद्मावती के साथ विवाह दिव्य क्षेत्र नारायणवरम या नारायणवनम में किया है। नारायणवरम में बसी पद्मावती आकाशराज की पुत्री है। उन्हें पद्मवल्ली, पद्मिनी, वेदवती-वेदलक्ष्मी नाम भी हैं।

नारायण वरम क्षेत्र में श्रीकल्याण वेंकटेश्वर मंदिर में श्रीपद्मावती माई की अलग सन्निधि है। वे महाराज की पुत्री के रूप में, युवराणी के रूप में, मुग्ध मनोहर कन्या के रूप में अति सुंदर लगती हैं। इस माई का कोई विशेष उत्सव या शोभा यात्राएँ नहीं होती हैं। यहाँ की पद्मावती दहलीज पार नहीं करनेवाली, बाहर के वातावरण से दूर ललित लावण्य कोमल, सुकुमार मूर्ति हैं। अपने पति श्रीनिवास परंधाम के उत्सव वैभव को निहारती हुई आनंद प्राप्त करनेवाली तेलुगु गृहिणी हैं पद्मावती। वैखानस आगमशास्त्र पद्धति से मंदिर में पूजाएँ, उत्सव होते रहते हैं। यहाँ विराजमान पद्मावती माई को तीनों सत्रों में अर्चन, निवेदन और प्रति शुक्रवार को अभिषेक किया जाता है।

कोल्हापुर :

भृगु महर्षि की परीक्षा के कारण क्रोधित हो श्रीमहालक्ष्मी श्रीवैकुंठ को छोडकर भूलोक पधारकर जिस क्षेत्र में बसी हैं उस का नाम ही कोल्हापुर है। यह क्षेत्र महाराष्ट्र राज्य में है। श्रीमहालक्ष्मी के अनुग्रह के लिए इस क्षेत्र में साक्षात तिरुमल के श्रीवेंकटेश्वर ने दस वर्ष तप किया।

दिव्य और भव्य इस क्षेत्र की श्रीमहालक्ष्मी अष्टादश शक्ति पीठों में एक के रूप में प्रचलित है। इस क्षेत्र में विराजमान श्रीमहालक्ष्मी के लिए सर्व स्वतंत्र रूप से उत्सव, शोभा यात्राएँ अत्यंत वैभव ढंग से होते हैं।

प्रति दिन सुप्रभात, अभिषेक, अर्चनाएँ, निवेदन आदि से यह मंदिर कोलाहल से भरा रहता है।

प्रति वर्ष चैत्रमास में पौर्णमी की संध्या के समय कोल्हापुर श्री महालक्ष्मी को वैभवपूर्ण ढंग से रथोत्सव संपन्न किया जाता है। वैशाख मास शुद्ध तृतीय यानी अक्षय तृतीय के दिन मंदिर के आंगन में स्थित गरुड मंटप में श्रीमहालक्ष्मी का डोलोत्सव (ऊंजल सेवा) वैभव पूर्ण ढंग से मनाया जाता है।

आश्वयुज मास में दुर्गा नवरात्रियों के दौरान दस दिनों के उत्सव वैभव पूर्ण ढंग से किए जाते हैं। दुर्गाष्टमि के दिन तिरुमल तिरुपति देवस्थान की ओर कोल्हापुर माई लक्ष्मी के लिए साडी-सागुन, हल्दी-कुंकुम भेंट के रूप में भेज दिया जाता है। इन से माई का श्रृंगार किया जाता है।

प्रति वर्ष जनवरी ३१ को, फरवरी १,२ को तीन दिन और प्रति वर्ष नवंबर ९,१०,११ तारीखों में तीन दिन, दो बार सूर्य किरणोत्सव होता है। सूर्यास्त समय पहले दिन माई के चरणों पर, दूसरे दिन हृदय पर, तीसरे दिन किरीट पर सूर्य किरणें प्रसारित होती हैं।

इस प्रकार श्रीमहालक्ष्मी अलग अलग जगहों पर अलग अलग रूपों में विराजमान होकर अलग अलग नामों से उत्सवों, शोभा यात्राओं

में अंगरंग वैभव पूर्ण रूप से प्रकाशित होती हुई भक्तों को निरंतर आँखों की पलकों की तरह रक्षा करती रहती हैं। वात्साल्यादि गुणों से दिव्य और देदीप्य-मान रूप में विराजित होकर श्री महालक्ष्मी की हम सब स्तुति करें-

न मां त्यजेथाः श्रितकल्पवल्लि
सद्भक्तिचिंतामणि कामधेनो
विश्वस्य मातर्भव सुप्रसन्ना
गृहे कलत्रेषु च पुत्रवर्गे।

सभी लोकों की माँ हे श्रीमहालक्ष्मी! तुम आश्रित लोगों के लिए कल्पवृक्ष हो! भक्ति पैदा करनेवाली श्रेष्ठ चिंतामणी हो! मनौतियों की पूर्ति करनेवाली कामधेनु हो! माई! तुम मेरे गृह में, मेरी पत्नी और बच्चों के विषय में सुप्रसन्न होकर सदा मेरे साथ ही रहने की प्रार्थना करता हूँ। माई! मुझ पर भरपूर अनुग्रह करो!

((((()))))

सूर्यनारायण स्वामी का मंदिर

तिरुचानूर क्षेत्र के प्राचीन मंदिरों में एक श्रीसूर्यनारायण स्वामी का मंदिर है। पद्मसरोवर के पूरब तट पर लगभग बीस कदमों की दूरी पर पश्चिमाभिमुख यह मंदिर है। इस मंदिर में सूर्य भगवान की खडी काली मूर्ति को साक्षात तिरुमल के श्रीवेंकटेश्वर ने प्रतिष्ठित किया है - ऐसी पौराणिक प्रसिद्धि है।

श्रीवेंकटेश्वर श्रीमहालक्ष्मी देवी के अनुग्रह के लिए कोल्हापुर क्षेत्र चले गए। लेकिन वहाँ उनके दर्शन नहीं हुए। इतने में एक अशरीर वाणी सुनायी पडी -

''हे श्रीनिवास! यहाँ तुम्हें श्रीमहालक्ष्मी के दर्शन नहीं होंगे। वेंकटाचल के समीप सुवर्णमुखी नदी तट पर एक पद्मसरोवर की स्थापना करके, वहाँ श्रीमहालक्ष्मी को लेकर तप करो। तुम्हारी इच्छा जरूर पूरी होगी।''

अशरीरवाणी की बातों के अनुसार तुरंत श्रीनिवास यहाँ चले आये। पहले सरोवर का निर्माण किया। उस में देव लोक से मंगाये गये पद्मों को रोपा। उनके सदा विकसित रहने के लिए कमलबांधव सूर्य को प्रतिष्ठित किया। लगभग बारह वर्ष कठोर तप करने पर, श्रीमहालक्ष्मी उसी पद्म सरोवर से सहस्र दल सवर्ण पद्म से ''अलमेलुमंगा'' के रूप में अवतरित हुई।

यह भास्कर क्षेत्र उस समय का है। मुखमंटप, अर्धमंटप और गर्भालय रूप में यह मंदिर तीन भागों में निर्मित है।

पूरब मुखी मखमंटप में पूरब दीवार पर प्रवेश द्वार की दाईं तरफ जमीन से सटा हुआ एक शिला शासन है। उस शासन में नये ढंग से

बनाये गए मंदिर में सूर्य नारायण स्वामी की मूर्ति को प्रतिष्ठित करने से संबन्धित सूचना है। उसी से संबंधित यह शिलालेख में इस प्रकार है -

''स्वस्तिश्री जयाभ्युदय शालिवाहन शकरांभ १७८८ के आज के अक्षय नाम संवत्सर निज जेष्ट नवमि शुक्रवार सन १८६६ अप्रैल २३तारीख को श्रीहरि गुरुभक्ति परायण महाराजश्री हथीरामजी मठ के श्री महंत सेवादास जी के शिष्य धर्मदासजी महंत के द्वारा नये ढंग से निर्मित मंदिर में श्रीसूर्यनारायण स्वामी की मूर्ति को प्रतिष्ठित किया गया है। ''शुभमस्तु''।''

उपर्युक्त शिलालेख में नये ढंग से निर्मित मंदिर का उल्लेख है। उस में प्रतिष्ठित मूर्ति पुरानी है, यानी पहले के मंदिर में स्थित मूर्ति है, या नये ढंग से बनायी गयी है, इस से संबंधित कोई स्पष्टउल्लेख नहीं मिलता है।

कुछ भी हो कालांतर में इस क्षेत्र के प्राचीन श्रीसूर्यनारायण स्वामी के मंदिर में सदा पुनरुद्धार कार्य हाते रहे हैं। इतना समाचार तो मिलता है।

मुख मंटप को पार करके अंदर प्रवेश करने से विशाल एवं लंबा अर्ध मंटप दिखाई पडता है। यह अर्ध मंटप गर्भालय के परिक्रमा-मार्ग के रूप में भी उपयोग किया जा रहा है। भक्त को अर्ध मंटप में खडे होकर भगवान के दर्शन कर लेने चाहिए।

अर्ध मंटप के पूरब कोने के अंत में परिक्रमा मार्ग के साथ निर्मित ८ × ८ माप के गर्भ मंदिर में श्रीसूर्यनारायण स्वामी की खडी मुद्रा में सुंदर शिला मूर्ति प्रतिष्ठित है। द्विभुजी के रूप में विराजमान स्वामी दोनों हाथों में कमलों को धारण किए हुए हैं। मूर्ति किरीट, गले की कंठहार, यज्ञोपवीत, करकंकण से युक्त हैं। पद्म पीठ पर खडी मूर्ति के रूप में

स्वामी प्रतिष्ठित है। स्वामी की कमर से लेकर चरणों तक अंगवस्त्र (धोती) है। चरणों में कडे हैं। गर्भालय के ऊपर एक कलश युक्त गोपुर निर्मित है। यह मंदिर पुर्ननिर्मित होकर नया लगने पर भी मंदिर के अंदर के पत्थर के कंभे, मूल मूर्ति को देखने से लगता है कि यह अत्यंत प्राचीन है।

गर्भालय में मूल मूर्ति के साथ लगभग३,४ कदमों की ऊँचाई वाली श्रीसूर्यनाराण स्वामी की पंचलोह उत्सव मूर्ति और १.५ कदमवाली भोगमूर्ति प्रतिमाएँ मूल मूर्ति की नकल के रूप में हैं।

इस मंदिर में ध्वज स्तंभ और बलिपीठ नहीं हैं।

वैखानस आगम शास्त्र के अनुसार पूजादि कार्यक्रम संपन्नहोनेवाले श्रीसूर्यनारायण स्वामी को प्रति दिन तीनों सत्रों में अर्चनाएँ और निवेदन किए जा रहे हैं।

प्रति रविवार को सुबह ६ बजे श्रीसूर्यनारायण स्वामी की मूल मूर्ति का अभिषेक किया जाता है। इस अभिषेक में क्रम से गाय का दूध, दही, शहद, नारीयल का पानी, चंदन आदि द्रव्यों का उपयोग किया जाता है। अभिषेक के अनंतर मीठे चावल (चक्केर पोंगलि) का नैवेद्य समर्पित किया जाता है। इस अभिषेक में निर्णीत शुल्क भरकर भक्तगण भाग ले सकते हैं।

इतना ही नहीं श्रीसूर्यनारायण स्वामी के अवततरण के नक्षत्र, हस्त नक्षत्र, के दिन हर महीने में एक बार स्वामी की उत्सव मूर्ति के एकांत अभिषेक के बाद पोंगली (मीठा अन्न) नैवेद्य समर्पित किया जाता है। उस दिन शाम को तिरुचानूर नगर की वीथियों में श्रीसूर्यनारायण स्वामी की उत्सव मूर्ति को पालकी पर बिठाकर ग्रामोत्सव मानाया जाता है।

वर्ष में प्रधान पर्व दिनों में यानी मकर संक्रमण दिन, रथसप्तमी के दिनों में श्रीसूर्यनारायण स्वामी की मूल मूर्ति को, उत्सव मूर्ति को भव्य रूप से अभिषेक, अर्चन, निवेदन किया जाता है। ग्रामोत्सव भी मनाये जाते हैं।

प्रति वर्ष धनुर्मास में एक महीने पर्थन्त भोर सुबह ५ बजे धनुर्मास पूजाएँ और 'पोंगलि' नैवेद्य समर्पित किया जाता है।

श्रीनिवास के अवतरण प्रसंग में सूर्य भगवान की अत्यंत प्रधानता है।

श्रीनिवास आकाशराज की पुत्री पद्मावती के साथ विवाह करते समय कोल्हापुर महालक्ष्मी और श्रीनिवास के बीच में अनुसंधान कर्ता के रूप में सूर्य भगवान ने ही काम किया। श्रीनिवास के आदेश के अनुसार स्वामी की ओर से कोल्हापुर जाकर श्रीमहालक्ष्मी को निमंत्रित करके साथ ले आये।

तिरुचानूर में साक्षात श्रीवेंकटेश्वर के द्वारा ही प्रतिष्ठित होकर स्वामी श्रीसूर्यनारायण श्रीनिवास की इच्छा के अनुसार पद्मसरोवर में सदा सुवर्ण पद्म विकसित रहने देने के लिए वहीं बसे रह गए। श्री महालक्ष्मी सहस्र दल सुवर्ण के पद्म से अलमेलुमंगा के रूप में, पद्मावती के रूप में, अवतरित होने के लिए कारणभूत देव बन गए। उस समय से तिरुचानूर प्रमुख भास्कर क्षेत्र के रूप में भी प्रचलित हो गया।

तिरुचानूर में अलमेलुमंगम्मा के साथ साथ साक्षात श्रीवेंकटेश्वर के द्वारा प्रतिष्ठित श्रीसूर्यनरारायण स्वामी का भक्तों द्वारा दर्शन करना अत्यंत श्रेयस्कर ही नहीं तिरुमल यात्रा को संपूर्ण एवं फलप्रद बनानेवाला भी है।

(((((())))))

तिरुचानूर श्रीकृष्णस्वामी का मंदिर (अळगिय पेरुमाळ)

तिरुचानूर श्रीपद्मावती माई के मंदिर के परिसर में अतिप्राचीन श्रीकृष्ण का मंदिर है। यह माई के मंदिर की दक्षिण दिशा में, श्रीसुंदर राज स्वमी के मंदिर की उत्तर दिशा में है। यानी उपर्युक्त दोनों मंदिरों के मध्य में दोनों से नीचे की तरफ है। कृष्ण स्वामी मंदिर ठीक महाद्वार के सामने पूरब मुख की तरफ है। यह आलय प्रांगण के मंदिरों में सबसे पुराना मंदिर है। इसलिए श्रीकृष्णस्वामी मंदिर प्रधान मंदिर भी माना जाता है। ये कृष्ण स्वामी प्राचीन शिलालेखों में ''अलगिय पेरुमाल'' नाम से पुकारे गये हैं। इस का मतलब है ''सुंदर देव''। इस रूप में प्रसिद्ध कृष्ण स्वामी का लंबा इतिहास है।

प्रधान प्राकार के राज गोपुर को पार कर अंदर प्रवेश करते ही सामने दिखाई देनेवाला मंदिर ही श्रीकृष्ण स्वामी का मंदिर है। प्राचीन शिलालेखों में ''अलगिय पेरुमाल'' (सुंदर स्वामी) नामसे अभिहित श्री कृष्ण को लेकर तिरुपति, तिरुचानूर में लगभग दस शिलालेख प्राप्त होते हैं। उन में पहला पाँचवें राजराज चोल-३ के समय का माना जाता है। यानी सन् १२२१ काल से संबंधित है। उस क्रम में प्राप्त अंतिम शिला लेख सन् १५५२ समय का है।

सन बारहवीं सदी के प्रारंभिक दिनों में इस कृष्ण स्वामी मंदिर का निर्माण हुआ है, उपर्युक्त शिला लेखों के द्वारा यही सूचना प्राप्त होती है।

पोक्कीरन् नामक भक्त ने स्वयं जमीन खरीदकर उसे फसलों के लिए अनुकूल बनाकर उसे मंदिर के खर्चे के लिए दान में दिया। उस चंदे से मंदिर के प्रबंधक पोक्कीरन् नाम से पंगुनि उत्सव का निर्वाह किया है।

उस के उपरांत सन १४६७ में विजयनगर राजा सालुव नरसिंग रायलु ने, श्रीवेंकटेश्वर के उग्राणं से दो थालों भर माखन को अलगिय पेरुमाल श्रीकृष्ण को भेजने का, तिरुपति के 'स्थानत्तार' को एक आदेश पारित किया। इतना ही नहीं सालुव नरसिंग रायलु ने स्वयं इस मंदिर के लिए दान दिया है। इस से संबन्धित शिला लेख भी प्राप्त होता है।

सन १५४१ में अच्युत रायलु के समय में सात्तलूर श्रीनिवास अय्यंगार द्वारा २७७० नार्पण को भेंट के रूप में समर्पित करने के संबन्ध का शिलालेख भी प्राप्त होता है। २७७० नार्पण पैसे को अन्य सेवाओं के लिए खर्च करने के साथ साथ ब्रह्मोत्सवों के अंत में संपन्न होनेवाले तीर्थवारी उत्सव के दिन अलगिय पेरुमाल को एक दोसा समर्पित करने का नियम बनाया गया है।

सन १५५२ में पडिया वैट्टै (पारुवेट) उत्सव समय में अलगिय पेरुमाल नाम से पुकारे जानेवाले श्रीकृष्ण को निवेदन के लिए रामराजु कोदंड राजु ने एक भेंट ''पडि'' को समर्पित किया।

इतने वैशिष्ट्य को रखते हुए, पद्मावती माई के मंदिर से प्राचीन माने जानेवाले श्रीकृष्ण स्वामी मंदिर महा मंटप, स्नपन मंटप, अंतराल, गर्भालय नामक चार भागों में निर्मित है।

महामंटप :

लगभग २४ कदम ऊँचाई, लंबाई और चौडाई के साथ पूरब, उत्तर और दक्षिण दिशाओं में तीन ओर खुला छोडकर निर्मित इस महा मंटप में प्रत्येक पंक्ति में चार स्तंभ चार पंक्तियों में कुल १६ स्तंभ हैं। इन में ईशान कोने में और आग्नेय कोने के दो स्तंभ ही चोल शैली के हैं। बाकी सभी पत्थर के स्तंभ शिल्प नैपुण्य की दृष्टि से विजयनगर शैली के हैं। यह शोधकों का विचार है।

स्नपन मंटप :

महा मंडप को पार करके अंदर जाने से दिखाई देनेवाला ही स्नपन मंटप है। यह २४ × ८.६ लंबाई और चौडाई से विराजित साधारण स्नपन मंटप ही असल में मुख मंटप है।

एक एक पंक्ति में चार स्तंभ और दो पंक्तियों के पत्थर स्तंभ इस मंटप में हैं। इधर के उत्तर और दक्षिण दिशाओं में लोहे के शिकंजे, पूरब की दिशा में दीवार बनाने के कारण यह एक विशेष स्नपन मंटप बन गया है। इस के अंदर के स्तंभ पूरब की दीवार में मिल कर, अलग हुए लगते हैं। यानी उस के पहले का यह स्नपन मंटप महा मंटप के कुछ भाग के रूप में निश्चय किया गया है।

अंतराल :

स्नपन मंटप को पार करने के बाद 'अंतराल' है। यह २४ × ५.५ लंबाई और चौडाई में निर्मित है। इस अंतराल के उत्तर के अंत में वायुव्य कोने में श्री रुक्मिणी सत्यभामा समेत श्रीवेणुगोपाल स्वामी की पंचलोह

उत्सव मूर्तियाँ, पूरबाभिमुख में मंच पर प्रतिष्ठित हैं। श्रीवेणुगोपाल स्वामी चतुर्भुजाओं से विराजित होकर ऊपर के दोनों हाथों में शंख, चक्र धारण किए हुए हैं, अन्य दोनों हाथों से वेणु बजा रहे हैं। इन उत्सव मूर्तियों की हर महीने रोहिणी नक्षत्र के दिन अभिषेक करने के बाद शाम को तिरुचानूर शहर की गलियों में शोभा यात्रा निकलती है।

प्रति वर्ष श्रीकृष्णाष्टामी - श्रीकृष्ण जयंति (रोहिणी) पर्व के दिन इन उत्सव मूर्तियों की अभिषेकार्चना आदि के बाद शाम को शोभा यात्रा निकाली जाती है।

गर्भालय :

अंतराल पार करने के बाद स्थित गर्भालय में पश्चिम दीवार की अंतिम छोर के समीप पूरब मुख से दो कदम पत्थर पीठ पर श्रीकृष्ण की शिलामूर्ति प्रतिष्ठित है।

पूरब अभिमूख में पद्मासन में बैठकर दोनों हाथ नीचे की ओर पसारकर दोनों हाथों की वरदहस्त मुद्रा में विराजमान श्रीकृष्ण स्वामी दर्शन देते हैं। इस स्वामी की मूर्ति की बगल में दूसरे शिला पीठ पर उत्तराभिमुख श्रीबलराम की शिला मूर्ति प्रतिष्ठित है। पीठ पर बाएँ पैर मुडकर पीठ पर बैठे बलराम ने दाएँ पैर को नीचे की तरफ छोड दिया है। बाएँ हाथ मोड कर बाएँ पैर के घुटनों पर रखकर, दाएँ हाथ को जमीन पर लगाकर थकान को दूर करने की मुद्रा में है। पैरों में पादुकाएँ पहने हुए हैं। यहाँ के बलराम और कृष्ण की मूर्तियों को सिर पर किरीट हैं।

यहाँ विराजमान बलराम और श्रीकृष्ण की मूर्तियों को लेकर दो एक कथन इस प्रकार हैं।

कुरुक्षेत्र संग्राम के समय युद्ध में किसी के पक्ष में युद्ध नहीं करूँगा, असल में कुरुक्षेत्र संग्राम के समय उस प्रदेश में ही नहीं रहूँगा, इस रूप में विकल मन से निर्णय करनेवाले बलराम तीर्थ यात्राओँ पर निकल गए। १८ दिनों तक चले युद्ध के पूरा होने के बाद श्रीकृष्ण भगवान अपने भाई बलराम देव को ढूँढते श्रीशुक महर्षि के आश्रम में पहुँचे। वहाँ शुक महर्षि ने श्रीकृष्ण से अपने आश्रम में ठहरकर अपने आतिथ्य को स्वीकार करके थकान को दूर करने की प्रार्थना की। शुक महर्षि के आतिथ्य को श्रीकृष्ण ने स्वीकार किया। आश्रम के प्रशांत वातावरण में श्रीकृष्ण पद्मासन डालकर अपने दोनों हथेलियों को घुटनों पर उलटा करके रखकर थोडी देर ध्यान किया। इतने में क्षेत्र दर्शन करके लौटनेवाले बलराम ने श्री शुक के आश्रम में ध्यानमग्न बैठे अपने भाई श्रीकृष्ण को देखकर बहुत आनंद का अनुभव किया। घूम घूम कर थके बलराम श्रीकृष्ण को देखकर अपने आप को भूल गए। पैरों के चप्पलों को बिना छोडे पीठ पर बैठ गए। थोडी देर बाद आंखे खोलनेवाले श्रीकृष्ण ने बलराम को देखकर आनंद का अनुभव किया। उन्होंने बलराम से यह भी कहा कि सप्तगिरि शिखरों का प्रान्त अत्यंत पवित्र है, धरती पर इतना पवित्र क्षेत्र दूसरा कोई नहीं है। कहते हुए श्री कृष्ण ने अपनी दोनों हथेलियों से उस दिव्य क्षेत्र को दिखाते हुए और इस के दर्शन से अपनी तीर्थ यात्राओं को पूरा करने की विनति की। बलराम ने भी श्रीकृष्ण की बात स्वीकार करते हुए यहाँ श्रीशुक महर्षि आश्रम

में बसे अपने को (बाल राम और श्रीकृष्ण को) दर्शन करने से समस्त तीर्थ यात्राओं का फल प्राप्त होगा, ऐसा भक्तों को वरदान दिया। अपने आश्रम में आकर अपने आतिथ्य को स्वीकार करने के चिह्न के रूप में श्रीशुक महर्षि ने तिरुमल क्षेत्र की ओर संकेत करते हुए उपदेश देनेवाली मुद्रा में ही दोनों की मूर्तियों की प्रतिष्ठा करवायी है, ऐसा इस बात का प्रचलन है।

गर्भालय में नृत्य भंगिमा में बालक श्रीकृष्ण के पंचलोह की मूर्ति है और छोटी लक्ष्मी नरसिंह स्वामी के पंचलोह की मूर्तियाँ भी हैं।

गर्भालय के ऊपर द्विसिर विमान गोपुर निर्मित है। विमान गोपुर की चारों दिशाओँ में तिरुमल आनंद निलय मंदिर के गोपुर की तरह सिंहों के शिल्प हैं। इस गोपुर के ऊपर वेसर शैली से संबंधित गोल शिखर और उस शिखर पर सोने का एक कलश प्रतिष्ठित है।

पद्मावती माई का मंदिर, श्री सुंदरराज स्वामी मंदिरों की तरह श्रीकृष्ण स्वामी मंदिर में भी पांचरात्रागम शास्त्र के अनुसार श्रीवैष्णव अर्चक स्वामियों द्वारा अर्चन-आराधनाएँ की जा रही हैं।

प्रति दिन तीनों सत्रों में अर्चन, आराधना, निवेदन श्रीपद्मावती माई के मंदिर के थोडा पहले ही श्रीकृष्ण स्वामी मंदिर में किए जाते हैं। यानी श्रीकृष्ण स्वामी मंदिर में निवेदनादि पूरा होने के बाद ही पद्मावती माई के मंदिर में निवेदनादि संपन्न होते हैं।

हर महीने अष्टमी तिथि के दिन श्रीकृष्ण और बलराम की मूल मूर्तियों के अभिषेकार्चन विशेष रूप से किए जाते हैं। उसी तरह हर

महीने रोहिणी नक्षत्र के दिन श्रीरुक्मिणी और सत्यभामा समेत श्रीकृष्ण स्वामी की अभिषेकादि कार्यक्रम के बाद उस शाम को उत्सव मूर्तियों की शोभा यात्रा तिरुचानूर में होती है।

प्रति वर्ष श्रावण मास में आनेवाली श्रीकृष्णाष्टमी - रोहिणी नक्षत्र के दिन इस श्रीकृष्ण स्वामी की विशेष रूप से अभिषेक अर्चनादि के बाद उस शाम को शोभा यात्रा होती है।

प्रति वर्ष जेष्ठ मास में पौर्णमी के दिन से पांच दिनों तर्यंत तिरुचानूर पद्मावती माई के पद्मसरोवर में नौका विहार उत्सव होते हैं। उस में पहले दिन शाम को श्री रुक्मिणी सत्यभामा समेत श्रीकृष्ण स्वामी का पद्मसरोवर में (तिरुचानूर पद्म पुष्करिणी में) नौका विहार उत्सव हैं। अत्यंत सुंदर ढंग से विद्युत दीपों से शोभायमान पद्मसरोवर में, और भी सुंदर ढंग से सजायी गयी नौका पर श्री रुक्मिणी सत्यभामा समेत श्रीकृष्ण स्वामी पद्मसरोवर के पवित्र जलों में तीन बार विहार परिक्रमा करते भक्तों को दर्शन देते हैं।

तिरुमल के यात्री श्रीवेंकटेश्वर की पटराणी श्रीपद्मावती के दर्शन करने के साथ साथ, उस मंदिर के प्रांगण में स्थित श्रीकृष्ण और बलराम के दर्शन कर, समस्त तीर्थ यात्राओं के फल को संपूर्ण रूप से प्राप्त कर धन्य होते हैं।

कृष्णम् वंदे जगद्गुरुम्!!

((((()))))

श्री सुंदरराज स्वामी का मंदिर

तिरुचानूर श्रीपद्मावती माई मंदिर के प्रांगण में दक्षिण भाग के अंत में यानी श्रीकृष्ण स्वामी मंदिर के दक्षिण की तरफ पूर्वाभिमुख में लगभग ४ कदमों के ऊँचेवाले पत्थर के पीठ पर बनाया गया मंदिर ही श्रीसुंदरराज स्वामी मंदिर है। इस मंदिर के स्वामी को श्रीसुंदरवरदराज स्वामी, श्रीसुंदरराज स्वामी या श्रीवरदराज स्वामी कहकर भक्त पुकारते हैं। आज 'श्रीसुंदरराज स्वामी' के नाम से यह देव प्रचलित हैं।

इस मंदिर के बारे में शिलालेखों में भी समाचार मिलता है। सन् १५४१ के शिला लेख में वरदराज स्वामी के रथोत्सव को लेकर जानकारी है। उसी रूप में सन १५४७ के शिलालेख में, वरदराज स्वामी के ब्रह्मोत्सव, उन उत्सवों के अंत में होनेवाले ''विदैयाद्रि'' उत्सव के बारे में जानकारी मिलती है। इस के अतिरिक्त यह शिला लेख उगादि, दीपावली, नौका विहार उत्सवों के साथ साथ अध्यनोत्सव की जानकारी देने के कारण यह मंदिर १६वीं सदी तक ही निर्मित हुआ था, ऐसा विचार शोधकर्ता प्रकट करते हैं।

सुंदरराज स्वामी मंदिर १. महा मंटप २. मुख मंटप ३. अंतराल ४. गर्भालय नामक चार भागों में निर्मित है।

यह मंदिर अलंकृत एक ऊँचे पत्थर पीठ पर निर्मित है। यह ऊँचा पीठ तीन भागों में विभक्त है। उन तीनों भागों के नाम पद्मपट्टिका, त्रिपट्टिका और गलपट्टिका हैं। इस के अतिरिक्त यह पीठ कपोत नासिकाओं से, आलिंगन पट्टिकाओं से अलंकृत हैं। दीवारों के बाहरी भाग में क्रम से दो दीवार-स्तंभ, कुंभ पंजर, दो दीवार-स्तंभ, कुंभ पंजर,

एक दीवर-स्तंभ, शलकोष्ट, एक दीवार स्तंभ, कुंभ पंजर, दो दीवार स्तंभ, कुंभ पंजर और दो दीवार स्तंभ अलंकृत हैं। अंतराल दीवार, दो दीवार स्तंभों, कुंभ पंजर, एक दीवार स्तंभ, शलकोष्ट, एक दीवार स्तंभ, शलकोष्ट, कुंभ पंजर और दो दीवार-स्तंभों से अलंकृत है।

इस रूप में इस मंदिर की दीवारों के बाह्य भाग सब शिल्प शास्त्र संप्रदाय बद्ध रूप में वैसर शैली में निर्मित हुए हैं।

महामंटप में एक पंक्ति में चार स्तंभों के हिसाब से तीन पंक्तियाँ और सामनेवाली पंक्ति में सिर्फ दो स्तंभ कुल १४ स्तंभ हैं। ये सभी स्तंभ विजयनगर पद्धति में निर्मित हैं।

मुख मंडप साधारण मंडप के रूप में निर्मित है। इस मुख मंटप में अंतराल प्रवेश द्वार की दोनों ओर द्वार पालक जय, विजय की मूर्तियाँ हैं। प्रवेश द्वार की दोनों तरफ चार स्तंभों का निर्माण है।

अंतराल में गर्भ मंदिर के सामनेवाली दीवार, प्रवेश द्वार दो दीवार स्तंभों के साथ कुंभ कुंजर से अलंकृत और निर्मित है।

गर्भालय के बीचों बीच समभंगी मुद्रा में खडी मूर्ति के रूप में श्री सुंदरराज स्वामी की शिला मूर्ति प्रतिष्ठित है। ये स्वामी चुतर्भुज हैं। ऊपर के दोनों हाथों में क्रम से सुदर्शन चक्र, पांचजन्य शंख, नीचे का दाया हाथ वरद मुद्रा में, नीचे बायाँ हाथ नीचे की ओर छोडने की मुद्रा में है। लगभग ८ कदमा ऊँचे श्रीसुंदरराज स्वामी की दोनों ओर लंबी श्रीदेवी (दाएँ ओर), भूदेवी (बाएँ ओर) की शिला-मूर्तियाँ प्रतिष्ठित हैं। इन मूल मूर्तियों के साथ साथ गर्भालय में लगबग ३ कदमों की ऊँचाई की श्री

देवी, भूदेवी समेत श्रीसुंदरराज स्वामी की पंचलोह उत्सव मूर्तियाँ भी विराजमान दिखाई देती हैं।

श्रीसुंदरराज स्वामी के सामने महामंटप के बाहर गरुड मंडप है। इस में श्रीसुंदरराज स्वामी के अभिमुख में पंख फैलाकर खडे गरुड की शिला मूर्ति है। गरुड की मूर्ति का निरीक्षण करने से लगता है कि यह श्रीसुंदरराज स्वामी मंदिर काफी प्राचीन है।

पांचरात्रागम शास्त्र के अनुसार श्रीवैष्णव अर्चकों से पूजादि किए जानेवाले इस सुंदरराज स्वामी के लिए प्रति दिन तीनों सत्रों में अर्चन निवेदन किए जाते हैं। निवेदनों के लिए आवश्यक सभी प्रसाद श्री पद्मावती माई के मंदिर की रसोई से भेजे जाते हैं।

हर महीने श्रीसुंदरराज स्वामी के अवतार नक्षत्र उत्तराभाद्रा नक्षत्र के दिन श्रीसुंदरराज स्वामी की उत्सव मूर्तियों को अभिषेकादि, अर्चन, निवेदन के बाद उस शाम को तिरुचानूर में ग्रामोत्सव किया जाता है।

प्रति वर्ष जेष्ठ मास में पौर्णमी दिन तक पूरा होने के रूप में तिरुचानूर के पद्म सरोवर में श्री पद्मावती माई के पाँच दिनों के नौका विहार उत्सव किए जाते हैं। उसी कार्यक्रम में दूसरे दिन शाम को श्री देवी और भूदेवी समेत श्री सुंदरराज स्वामी की उत्सव मूर्तियों का पद्मसरोवर में वैभव पूर्ण ढंग से नौका विहार उत्सव संपन्न किया जाता है।

प्रति वर्ष जेष्ठ मास में श्रीसुंदर राज स्वामी के अवतार नक्षत्र के दिन पर उत्तराभाद्रा नक्षत्र में पूरा होने के रूप में तीन दिन श्रीसुंदरराज स्वामी के वार्षिक अवतारोत्सव अत्यंत वैभवपूर्ण ढंग से मनाये जाते हैं। इन तीन दिनों में श्रीसुंदरराज स्वामी की मूल मुर्तियों और उत्सव मूर्तियों

को वैभव पूर्ण ढंग से अभिषेक, अर्चन, निवेदन किए जाते हैं। प्रति दिन शाम को एक एक वाहन पर श्रीस्वामी के उत्सव किए जाते हैं।

लगभग सौ वर्ष पहले यानी सन १९०६ में उस समय के तिरुमल तिरुपति देवस्थान के धर्मकर्ता महंतों के शासन काल में मुख्य रूप से महंत प्रयागदास जी के नेतृत्व में श्रीसुंदरराज स्वामी के गर्भालय, गोपुर का जीर्णोद्दार, मंदिर के शिखर पर सोने के कलश की प्रतिष्ठा तथा मंदिर के महाकुंभाभिषेक महोत्सव किए थे। उस दिन से श्रीसुंदरराज स्वामी के अवतार महोत्सव नाम से प्रति वर्ष तीन दिन पर्थन्त वैभव पूर्ण ढंग से ये उत्सव मनाये जा रहे हैं। इधर सन २००६ जेष्ठ मास में महा अवतारोत्सव अत्यंत वैभव से किए गए हैं।

देवेरियों से विराजमान, शंख - चक्रों से, वरद हस्तों से, ललाट पर वेंकटेश्वर की तरह त्रिपुंड धारण करके सदा मंदमुस्कान में सार्थक नामधेय महा सौंदर्य से शोभित होकर दर्शन देते हुए अनुग्रह करनेवाले श्रीसुंदरराज स्वामी का दर्शन करना भक्तों के लिए सर्वश्रेयदायक है।

नमः सकलकल्याण
कारिणे करुणात्मने
श्रीवत्सवक्षसे तस्मै
लक्ष्मीनरायाणात्मने!

((((()))))